युग-पुरुष बाबा शेख़ फ़रीद



डा. निर्मल कुमार कौशिक

युग-पुरुष
बाबा शेख़ फ़रीद

सम्पादक

डा० निर्मल कौशिक,
प्रवक्ता, हिन्दी विभाग,
सरकारी बृजेन्द्र कालेज,
फ़रीदकोट —151203

कादम्बरी प्रकाशन, फिरोजपुर शहर—152002

YUG-PURUSH BABA SHEIKH FARID
EDITOR : Dr. Nirmal Kaushik

युग-पुरुष : बाबा शेख़ फ़रीद
सम्पादक : डा० निर्मल कौशिक

आवरण सज्जा : विमल तिवारी

प्रथम बार : 1992

मूल्य : सामान्य 60-00 रुपये
सजिल्द 80-00 रुपये

प्रकाशक :
पंडित कर्म चन्द शर्मा
कादम्बरी प्रकाशन, बाजार बांसां वाला,
फिरोजपुर शहर–152002

मुद्रक :
रामा आर्ट प्रैस, अमृतसर ।

अनुक्रम

भूमिका

पंजाब को इस बात का गर्व है कि 'ऋग्वेद' से लेकर "श्री गुरू ग्रन्थ साहिब" जैसे विश्व विख्यात पावन ग्रन्थों का रचना कार्य इसी पुण्य-शालिनी धरती पर हुआ। अनेक साधक महापुरुषों ने इसी धरती पर जन्म लिया और अपने अमूल्य अनुभवों से उपलब्ध अमरत्व प्रदान करने वाले सन्देश विश्व को दिये। मानव जीवन के आध्यात्मिक और नैतिक पक्ष को सही दिशा दर्शाने हेतु इन महापुरुषों ने आजीवन संघर्ष किया। अपनी दार्शनिक दृष्टि एवं समन्यवादी चिन्तनधारा से इन्होंने व्यष्टि से समष्टि तक का मार्ग प्रशस्त किया। इन्हीं महानुभावों द्वारा स्थापित शश्वत मानव मूल्यों से आज भी मानव जीवन आलोकित हो रहा है। आत्मोन्नति एवं सामाजिक चेतना पर आधारित राष्ट्रीय एकता इनका प्रमुख ध्येय रहा है। "श्री गुरू ग्रन्थ साहिब" का सम्पादन और उसे "गुरू-स्वरूप की स्वीकृति" इसी बात का पुष्ट उदाहरण है। "श्री गुरू ग्रन्थ साहिब" में ऐसी महान विभूतियो की वाणीयां सकंलित है जो आज भी संतप्त तथा मार्ग से भटके हुए मनुष्य को आत्म परिचय करानें तथा मार्ग दर्शाने में सक्षम है। यही कारण है कि इसका अमर सन्देश आज विश्व व्याप्त हो रहा है।

शेख बाबा फरीद के पावन चरण स्पर्श से अभिभूत जिला फरीदकोट की सौभाग्यशालिनी जनता की सेवा करने का अवसर पाकर मैं अपने आपको धन्य समझता हूं। जिला फरीदकोट शिक्षा, राजनीति,

क्रीड़ा, संस्कृति और कृषि सभी क्षेत्रों में अग्रणी है। प्रतिवर्ष सितम्बर मास में शेख फरीद आगमन-उत्सव जिस उत्साह और सद्भावना से मनाया जाता है वह यहां के लोगों की सांस्कृतिक चेतना को उद्घाटित करता है। शेख फरीद की वाणी को आत्मसात् किए हुए यह लोग उनके प्रति अपनी श्रद्धा और निष्ठा को जिस प्रकार अभिव्यक्त करते हैं देखने वाला शेख फरीद के प्रति स्वत: नतमस्तक हो जाता है तथा फरीद वाणी को पढ़ने के लिए लालायित हो उठता है।

महामानव शेख फरीद का व्यक्तित्व और कृतित्व मानव के लिए प्रकाश स्तम्भ के समान पथ आलोकित करता है। शेख फरीद की वाणी सन्तप्त मानवता के लिए वरदान है। लोकोपकार की भावना से फरीद ने जिन मानवोचित गुणों का वर्णन अपनी वाणी में किया है वे मनुष्य को इहलोक और परलोक दोनों में सम्मान दिलाने वाले हैं। भारतीय और इस्लाम संस्कृतियों के प्रति समन्वयात्मक दृष्टिकोण रखने वाले शेख फरीद की वाणी के इन्हीं गुणों को देखते हुए पंचमेच श्री गुरू अर्जुन देव ने उनके 112 श्लोक तथा चार शब्द 'श्री गुरू ग्रन्थ साहिब में संकलित किए। शेख फरीद ने अपने जीवन के मौलिक अनुभवों को अपनी वाणी में मुखरित किया। उनकी मान्यताएं प्रत्येक काल और स्थान पर अटल सत्य के समान विद्यमान हैं और रहेंगी।

1. फरीदा बुरे दा भला कर
2. आपनड़े गिरीवान महि सिरू नीवां करि देख
3. फरीदा बारि पाराइऐ बैसना सांई मुझे न देहि
4. फरीदा खाकु न निंदीऐ, खाकु जेडु न कोई
5. रूखी सुखी खाइ के, ठण्डा पानी पीउ

इन उद्घोषो के साथ फ़रीद जी मानव जीवन को सद्गुणों से भरपूर करनें का सन्देश देते हैं। निश्चय ही वे मानव नहीं महामानव थे। निस्सन्देह वे पुरुष नहीं युग-पुरुष थे।

सरकारी बृजेन्द्र कालेज, फरीदकोट के वार्षिक समारोह के अवसर पर डा० निर्मल कौशिक ने मुझे बताया कि उन्होंने "युग-पुरुष :-

बाबा शेख फरीद" पुस्तक सम्पादित की है। मुझे इस पुस्तक की भूमिका लेखन का कार्य सौंपा गया। इस पाण्डुलिपि का अध्ययन करते समय मैंने देखा है कि डा० निर्मल कौशिक ने बाबा शेख फरीद के जीवन और वाणी से सम्बन्धित विभिन्न पक्षों को लेकर अनेक अनुभवी तथा प्रतिष्ठित विद्वानों के महत्वपूर्ण आलेख संकलित किए हैं। कुछ अन्य भाषाओं के आलेखों का हिन्दी अनुवाद भी सम्पादक ने स्वयं किया है। डा० निर्मल कुमार कौशिक पंजाब के हिन्दी साहित्येतिहास की मध्ययुगीन चेतना भक्ति काव्यधारा से परिचित है। उनके शोध कार्य भी इसी क्षेत्र से सम्बन्धित हैं। प्रस्तुत पुस्तक के लिए सामग्री संकलन करते समय उन्होंने शेख फरीद के जीवन और वाणी से सम्बन्धित सामान्य जानकारी प्रदान करने वाले आलेखों के साथ-साथ कुछ महत्वपूर्ण सन्दर्भों जैसे शेख फरीद की सहज साधना और प्रेमा-भक्ति (डा० विजयेन्द्र स्नातक) सूफी जीवन दर्शन और शेख फरीद (डा० साधू राम शारदा) संस्कृति संश्लेषण का कवि शेख फरीद (प्रो० प्रेम पाली) बाबा फरीद शकरगंज सूफीमत और भक्ति परम्परा के सन्दर्भ में, (डा० जय भगवान गोयल), फरीद काव्य : सामाजिक सार्थकता का संकल्प, (प्रो० जसपाल सिंह), फरीद काव्य में नैतिकता, (डा० निर्मल कौशिक) तथा फरीद वाणी की प्रासंगिकता, प्रो० ब्रह्म जगदीश सिंह, आदि विषयों को भी संजोया है।

आज मुझे इस पुस्तक (युग पुरुष : बाबा शेख फरीद) की भूमिका लिखते हुए अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि मैंने एक महान बिभूति के प्रति नतमस्तक होने का अवसर लाभ अर्जित किया है। बाबा शेख फरीद ने अपना पूरा जीवन मानवता की सेवा में जुटा दिया। उन्होंने भटके हुए तथा सांसारिकता में लिप्त मानव को सुख एवं शान्ति प्रदान करने वाला सुगमतम मार्ग दर्शाया। मानवोचित नैतिक गुणों को अत्यन्त सरल भाषा में जन-जन तक पहुंचाने में उनकी वाणी आज भी उतनी ही सार्थक है जितनी फरीद युग में थी। उन्होंने कुछ ऐसे मानदण्ड स्थापित किए जो मानव के लिए प्रत्येक युग में सार्थक सिद्ध होते हैं।

डा० निर्मल कौशिक के इस निष्ठापूर्ण प्रयास को देखकर निश्चय ही साहित्य जगत में एक अभाव की पूर्ति का एहसास होता है। बाबा शेख फरीद के जीवन और रचना के प्रति श्रद्धा और जिज्ञासा रखने वालों के

लिए "युग-पुरुष : बाबा शेख फ़रीद" पुस्तक निस्सन्देह एक नया आयाम प्रस्तुत करेगी और हिन्दी साहित्येतिहास में प्रतिष्ठित होगी। आशा है प्रस्तुत पुस्तक उनके अमर सन्देश को सम्प्रेषित करने तथा विश्व में सत्य अहिंसा तथा शान्ति की स्थापना में सक्षम सिद्ध होगी।

इस पुनीत कार्य के लिए मैं डा० निर्मल कौशिक को हार्दिक बधाई देता हूं तथा भविष्य में भी ऐसे ही उपयोगी एवं रचनात्मक सद्कार्यों के प्रति कार्यरत रहने की कामना करता हूं।

शेख फ़रीद आगमनोत्सव
सितम्बर 1991

मंगल कामनाओं सहित
हस्ताक्षर
(सर्वेश कौशल)
आई. ए. एस.
उपायुक्त, फरीदकोट।

सम्पादक की ओर से

वैदिक काल से ही पंजाब साहित्यिक दृष्टि से अत्यधिक उर्वरा रहा है। इस पंजाब की धरती पर अनेक सन्तों, महात्माओं, पीरों, फकीरों, ऋषियों-मुनियों ने जन्म लिया तथा अपनी सतत साधना तथा आध्यात्मिक चिन्तन से सम्पूर्ण विश्व को लाभान्वित किया। ईश्वरीय निष्ठा और सत्य की खोज को जीवन का आधार मान कर उन महापुरुषों नें अपना सर्वस्व लोकोपकार में जुटा दिया। महर्षि वाल्मीकि से लेकर स्वामी श्रद्धाराम फिल्लौरी तक की इस विशद परम्परा पर पंजाब की धरती को गर्व है। वेद, उपनिषद, ब्राह्मण ग्रन्थ, पुराण एवं भाष्य ग्रन्थ इस बात के सुदृढ़ साक्षी हैं कि पंजाब आध्यात्मिक शिक्षा का केन्द्र रहा है। 'आदिग्रन्थ' का सम्पादन इस बात की पुष्टि करता है कि पंजाब ने समूचे भारत को सुरक्षा ही प्रदान नहीं कि अपितु उसे एक सूत्र में पिरोने का भी अद्वितीय कार्य किया। पंचमेश श्री गुरू अर्जुन देव जी ने सम्पूर्ण भारत के गुरूओं, सूफियों, पीरों, फकीरों, भाटों एवं भक्तों की वाणी को बिना किसी साम्प्रदायिक, जातीय व प्रान्तीय भेदभाव के संकलित कर राष्ट्रीय एकता का सबल प्रमाण दिया। यही कारण है कि आज प्रत्येक वर्ग के लोग "श्री गुरू ग्रन्थ साहिब" के समक्ष आत्मीय भाव से नतमस्तक होते हैं। यह ग्रन्थ पूजनीय होने के साथ-साथ अनेक महापुरुषों की रचनाओं का प्रामाणिक दस्तावेज़ भी है।

बाबा शेख फ़रीद सूफी सम्प्रदाय के शिरोमणि कवि हैं तथा पंजाबी साहित्य के 'पितामह' कहे जाते हैं। इनकी कविता का प्रत्येक शब्द मानव के

लिए अनमोल रत्न के समान है। यही कारण है कि इनकी वाणी को 'आदिग्रन्थ' में संकलित किया गया है। शेख फ़रीद किसी जाति अथवा सम्प्रदाय विशेष के ही नहीं थे। उनका सन्देश सम्पूर्ण मानव जाति के लिए है। उनके जीवन के कटु-तिक्त अनुभव मानव को सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं। उनकी 'वाणी' का प्रत्येक अनुभूतिपरक शब्द मनुष्य-मात्र के लिए 'गुरु मन्त्र' के समान महत्वपूर्ण है।

पंजाब का मूल निवासी होने के कारण मुझे पंजाब प्रान्त के सभी सम्प्रदायों, विषयों, भाषाओं और लिपियों के साहित्य पर गर्व है। इस अमूल्य साहित्य को पंजाब से बाहर प्रचारित और प्रसारित करने की जो परम्परा चली आ रही है उसे निरन्तर बनाए रखने के लिए भी श्रृंखला की एक कड़ी के रूप में कार्य कर रहा हूं। प्रस्तुत पुस्तक भी इसी श्रृंखला की एक कड़ी है। मेरा यह लघु प्रयास पंजाब तथा बाहर के उन लोगों को शेख फरीद के जीवन और रचना सम्बन्धी परिचय देने में सहायक सिद्ध होगा जो हिन्दी के अतिरिक्त कोई अन्य भाषा नहीं जानते। हिन्दी में शेख फरीद पर अधिक पुस्तकें नहीं हैं। इस बात को ध्यान में रखते हुए मैंने इस क्षेत्र में कार्य करने का संकल्प लिया। इस संकल्प को मैंने आदरणीय प्रिंसीपल स. गुरचरण सिंह, जनरल सचिव, बाबा फरीद मैमोरियल, संस्था फरीदकोट के समक्ष उद्घाटित किया तो उन्होंने इस बात पर अपार प्रसन्नता अभिव्यक्त की और मुझे इस संकल्प को पूरा करने के लिए प्रोत्साहित किया।

प्रस्तुत पुस्तक सम्पादन हेतु अग्रजसम डा० हरमहेन्द्र सिंह बेदी, डी. लिट् (रीडर, हिन्दी-विभाग, गुरू नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर) ने अपना अमूल्य समय प्रदान कर मेरा मार्ग दर्शन किया। इस कार्य में आप मेरे प्रेरक और सहयोगी सिद्ध हुए। आप ही की प्रेरणा से मैंने पंजाब के 'गुरूमुखी लिपि में रचित हिन्दी साहित्य' को प्रकाश में लाने के लिए क्रमशः (क) भाई गुरदास के कबित्त-सवैयों का सामाजिक नैतिक अध्ययन (ख) कबित्त-सवैये भाई गुरदास लिप्यंतरण एवं सम्पादन (ग) गुरुमुखी में रचित हिन्दी साहित्य (घ) निर्मल सन्तों का हिन्दी साहित्य को योगदान (पी. एच. डी.) शोध-प्रबन्ध आदि विषयों पर शोधकार्य किया।

मित्रवर, श्री इन्द्रजीत शर्मा, समाज सेवी, राष्ट्रीय पुरस्कार विजेता ने काफी दौड़ धूप कर मेरे इस कार्य में रुचि दिखाते हुए विभिन्न महत्वपूर्ण स्रोतों

का ज्ञान कराया। इस पुस्तक के सम्पादन में इनके महत्वपूर्ण योगदान के लिए मैं इनका धन्यवाद करताहूं। आभारी हूं मित्रवर, स. गुरदियाल सिंह, सचिव जिला रैडक्रास सोसाइटी, फरीदकोट का जिन्होंने मुद्रण सम्बन्धी अनेक अमूल्य सुझाव प्रदान कर इस पुस्तक के प्रकाशन में मेरा मार्गदर्शन किया तथा मेरे इस परिश्रम को सार्थक सिद्ध करने के लिए एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आभारी हूं अपने परममित्र जसबीर सिंह जस्स (बाल साहित्य लेखक) का जिन्होंने पुस्तक की रूपसज्जा सम्बन्धी दिशा निर्देश दिये। आभारी हूं अपनी जीवन संगिनी, प्रेरिका शक्ति श्रीमती कामायनी कौशिक का जिसने सम्पादन कार्य करते समय निर्विघ्न सम्पन्नता हेतु पूर्णतः सहयोग प्रदान किया। जिन सुधी विद्वानों के शेख फरीद सम्बन्धी आलेखों से इस पुस्तक का सम्पादन सम्भव हो सका है, उन सभी विद्वानों के सहयोग के लिए मैं आभारी हूं।

मेरी इस परियोजना को साकार रूप देने हेतु आदरणीय स. मुखत्यार सिंह, (पी. ई. एस.) प्रिंसीपल, सरकारी बृजेन्द्र कालेज, फरीदकोट के प्रस्ताव पर माननीय श्री सर्वेश कौशल, आई. ए. एस., उपायुक्त, फरीदकोट के वरद-हस्त ने पुस्तक प्रकाशन का कार्यभार वहन कर इस कलम से मजदूर के प्रति अपनी उदारता का परिचय दिया। सच ही कहा है 'परोपकाराय सतां विभूतयः' अर्थात् सज्जनों के ऐश्वर्य परोपकार के लिए होते हैं। मैं इस लोकोपकार कार्य के प्रणेता श्री सर्वेश कौशल, आई. ए. एस. के प्रति कृतज्ञता एवं आभार अभिव्यक्त करता हूं।

अन्त में आभारी हूं रामा आर्ट प्रैस, टाऊन हाल, अमृतसर के व्यवस्थापक, एवं उनके कर्मचारियों का जिन्होंनें अथक परिश्रम कर मेरी परियोजना को पुस्तक रूप प्रदान कर अविस्मरणीय योगदान दिया।

निर्मल कौशिक
सरकारी बृजेन्द्र कालेज,
फरीदकोट–151203

ਸ਼ੁਭ ਕਾਮਨਾਵਾਂ

ਪਿਆਰੇ ਡਾ: ਕੌਸ਼ਕ,

ਆਪ ਜੀ ਦਾ ਪੱਤਰ ਮਿਲਿਆ ਇਹ ਪੜ੍ਹ ਕੇ ਬੜੀ ਖੁਸ਼ੀ ਹੋਈ ਕਿ ਤੁਸੀਂ 'ਯੁਗ ਪੁਰਸ਼ : ਸ਼ੇਖ ਫਰੀਦ' (ਹਿੰਦੀ) ਪੁਸਤਕ ਸੰਪਾਦਤ ਕਰ ਰਹੇ ਹੋ। ਤੁਸਾਂ ਸਮੇਂ ਦੀ ਨਜ਼ਾਕਤ ਨੂੰ ਪਛਾਣਦਿਆਂ ਇਕ ਕਾਬਲੇ ਤਾਰੀਫ ਕੰਮ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਪੰਜਾਬ ਤੋਂ ਬਾਹਰ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਬਾਬਾ ਸ਼ੇਖ ਫਰੀਦ ਜੀ ਵਰਗੀ ਮਹਾਨ ਸ਼ਖਸੀਅਤ ਦੀ ਜੀਵਨੀ ਅਤੇ ਬਾਣੀ ਤੋਂ ਜਾਣੂ ਕਰਵਾਉਣ ਲਈ ਅਜਿਹੇ ਉਦਮਾਂ ਦੀ ਕਾਫੀ ਲੋੜ ਹੈ। ਕਾਫੀ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਅਜਿਹੀ ਪੁਸਤਕ ਦੀ ਘਾਟ ਮਹਿਸੂਸ ਹੋ ਰਹੀ ਸੀ। ਮੇਰੀ ਦਿਲੀ ਕਾਮਨਾ ਹੈ ਕਿ ਹਿੰਦੋਸਤਾਨ ਦੀਆਂ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਦੁਨੀਆਂ ਭਰ ਦੀਆਂ ਦੂਜੀਆਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਵਿਚ ਵੀ ਫਰੀਦ ਜੀ ਬਾਰੇ ਪੁਸਤਕਾਂ ਲਿਖੀਆਂ ਜਾਣੀਆਂ ਚਾਹੀਦੀਆਂ ਹਨ। ਫਰੀਦ ਜੀ ਵਰਗੇ ਮਹਾਂਪੁਰਖ ਦੀ ਬਾਣੀ ਸਦਕਾ ਹੀ ਵਿਨਾਸ਼ ਦੀਆਂ ਕਾਲੀਆਂ ਘਟਾਵਾਂ ਦੂਰ ਹੋ ਸਕਦੀਆਂ ਹਨ।

ਤੁਸੀਂ 'ਯੁਗ ਪੁਰਸ਼ : ਸ਼ੇਖ ਫਰੀਦ' (ਹਿੰਦੀ) ਪੁਸਤਕ ਦੀ ਸੰਪਾਦਨਾ ਕਰਕੇ ਹਿੰਦੀ ਸਾਹਿਤ ਵਿਚ ਜੋ ਖੱਪਾ ਪੂਰਨ ਦਾ ਯਤਨ ਕੀਤਾ ਹੈ ਇਹ ਆਪਣੇ ਆਪ ਵਿਚ ਇਕ ਮਿਸਾਲ ਹੈ। ਆਸ ਹੈ ਆਪ ਜੀ ਦੀ ਇਹ ਪੁਸਤਕ ਹੋਰ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੇ ਲੇਖਕਾਂ ਲਈ ਫਰੀਦ ਜੀ ਦੇ ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਬਾਣੀ ਸਬੰਧੀ ਸਾਹਿਤ ਸਿਰਜਨਾ ਕਰਨ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਣਾ ਦਾ ਕੰਮ ਕਰੇਗੀ।

ਮੈਂ ਆਪ ਜੀ ਨੂੰ ਇਸ ਸ਼ੁਭ ਕੰਮ ਲਈ ਮੁਬਾਰਕਬਾਦ ਦਿੰਦਾ ਹਾਂ ਅਤੇ ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਅਗੇ ਇਹ ਪ੍ਰਾਰਥਨਾ ਕਰਦਾ ਹਾਂ ਕਿ ਭਵਿੱਖ ਵਿਚ ਵੀ ਆਪ ਜੀ ਨੂੰ ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਲਗਨ ਅਤੇ ਮਿਹਨਤ ਨਾਲ ਸਾਹਿਤ ਸੇਵਾ ਵਿਚ ਜੁਟੇ ਰਹਿਣ ਦੀ ਸਮਰੱਥਾ ਬਖਸ਼ੇ।

ਆਪ ਜੀ ਦਾ ਹਿੱਤੂ
ਗੁਰਚਰਨ ਸਿੰਘ ਜਨਰਲ ਸਕੱਤਰ,
ਬਾਬਾ ਫਰੀਦ ਮੈਮੋਰੀਅਲ ਸੋਸਾਇਟੀ,
ਪਟਿਆਲਾ।

MESSAGE



Dear brother Dr. Nirmal Kumar Kaushik Sahab,

May success always be at your feet and power in your pen :

I am in receipt of your letter dated 7-3.1991. I am very happy to learn that you are taking out a book in Hindi on the teachings of Hazarat Sahab (RA) and it is my pleasure to participate in this ocean of knowledge by a drop !

May your first attempt be the beginning of many volumes to come out in near future.

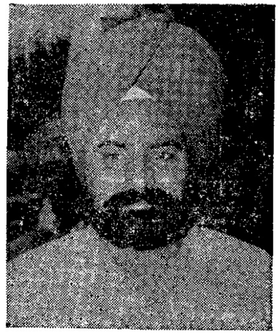
Before this time many jobs have been done in the Holy City of Faridkot but a book in Hindi today would surely push the limitations far and wide as most people in India know Hindi than any other language.

I specially pray and wish in the Holy Darbar of Hazarat Gharib Nawaz (RA) that may your book be a source to enlighten the dark hearts, minds and souls of people and may you reach the heights of your attempts and desires and also your name be famed throughout the world. Amen.

With alll Good Wishes,

Your Prayerful Brother,
SYED HALEEM CHISHTI
Mehboob Mazil, Dargah Sharif,
AJMER (INDIA)

ਸ਼ੁਭ ਕਾਮਨਾਵਾਂ



ਪਿਆਰੇ ਕੌਸ਼ਕ ਜੀ,

ਮੈਨੂੰ ਇਹ ਜਾਣਕੇ ਬੜੀ ਖੁਸ਼ੀ ਹੋਈ ਹੈ ਕਿ ਤੁਸੀਂ 'ਯੁਗ ਪੁਰਸ਼ : ਸ਼ੇਖ ਫਰੀਦ' (ਹਿੰਦੀ) ਪੁਸਤਕ ਸੰਪਾਦਤ ਕਰ ਰਹੇ ਹੋ। ਅਜੋਕੇ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਇਹ ਇਕ ਸ਼ਲਾਘਾ ਯੋਗ ਕੰਮ ਹੈ। ਅੱਜ ਸ਼ੇਖ ਫਰੀਦ ਦੀ ਬਾਣੀ ਨੂੰ ਲੋਕਾਂ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਾਉਣ ਦੀ ਲੋੜ ਹੈ ਤਾਂ ਜੋ ਭਟਕੇ ਹੋਏ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਮਨ ਸ਼ਾਂਤੀ ਦੀ ਖੋਜ ਕਰ ਸਕੇ। ਇਹ ਕੰਮ ਮਹਾਂਪੁਰਖਾਂ ਦੇ ਦੱਸੇ ਹੋਏ ਮਾਰਗ ਤੇ ਚੱਲ ਕੇ ਹੀ ਹੋ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਸਤਿ-ਸਾਹਿਤ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਇਸ ਮਾਰਗ ਤੇ ਚੱਲਣ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਦਾ ਹੈ। ਤੁਸੀਂ ਇਸ ਪੁਸਤਕ ਦੀ ਸੰਪਾਦਨਾ ਕਰਕੇ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸਤਿ-ਸਾਹਿਤ ਵਿਚ ਵਾਧਾ ਕਰਨ ਦਾ ਜੋ ਉਪਰਾਲਾ ਕਰ ਰਹੇ ਹੋ ਉਸ ਲਈ ਮੈਂ ਆਪ ਜੀ ਨੂੰ ਵਧਾਈ ਦਿੰਦਾ ਹਾਂ।

ਮੇਰੀ ਇਹ ਦਿਲੀ ਕਾਮਨਾ ਹੈ ਕਿ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਤੁਹਾਨੂੰ ਅਜਿਹਾ ਉੱਦਮ ਕਰਦੇ ਰਹਿਣ ਦਾ ਬਲ ਬਖਸ਼ੇ।

ਹਿੱਤੂ
ਮੁਖਤਿਆਰ ਸਿੰਘ
ਪ੍ਰਿੰਸੀਪਲ
ਸਰਕਾਰੀ ਬਰਜਿੰਦਰਾ ਕਾਲਜ,
ਫਰੀਦਕੋਟ

संदेश

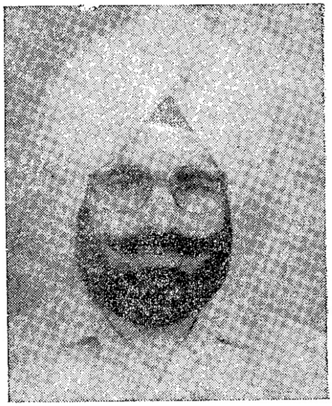


मुझे यह जान कर हार्दिक प्रसन्नता हुई है कि डा० निर्मल कुमार कौशिक भारत में जन्म लेने वाले प्रथम मुस्लिम सूफी हजरत बाबा शेख फ़रीदउदीन मसूदगंजेशकर रहमतउल्लाहअलैह के सम्बन्ध में "युग पुरुष शेख फ़रीद" नामी पुस्तक हिन्दी में लिख रहे हैं। हजरत बाबा साहब का संदेश पूरी इन्सानियत, हर धर्म. जाति, हर रंग व नसल के लोगों के लिये था और उनके उपदेश, शिक्षा रहती दुनियां तक भूले भटकों को राह दिखाते रहेंगे। आवश्यकता इस बात की थी कि हर भाषा में बाबा साहब की शिक्षा लोगों के सामने आये। हिन्दी में अब तक बाबा साहब पर कोई मुस्तनद पुस्तक थी भी नहीं। डा० निर्मल कुमार कौशिक हिन्दी में यह पुस्तक लिख कर बहुत बड़ा काम कर रहे हैं और एक बड़ी कमी को पूरा कर रहे हैं इसके लिए वह बधाई के पात्र हैं।

मैं कामना करता हूं कि डा० साहब की यह कोशिश सफल हो और यह पुस्तक हिन्दी जानने वाले लोगों में लोकप्रिय हो। इसी के साथ डा० कौशिक के स्वास्थ्य, उज्जवल भविष्य व उन्नति के लिये कामना करता हूं।

ख्वाजा राशिद फरीदी साबरी
राजब पुर (मुरादाबाद) यु. पी.

MESSAGE



To.

Dr. Nirmal Kaushak,
Deptt of Hindi,
Govt. Brijindra College,
Faridkot

I have gone through the typed pages of the book titled Yug Pursh : Baba Sheik Farid edited by Dr. Nirmal Kaushak. The articles in the book through light on all aspects of life & teachings of great Sufi-Saint. Indeed this is the first comprehensive book in Hindi which was much needed for the students of Hindi Literature. Dr. Kaushak has always been playing a leading role in arranging intellectual seminars during the celebrations of Baba Sheikh Farid Aagman Purb. It is appreciable that Dr. Kaushak under-took this strenvous job of collecting articles of great literary value covering the educational, spiritual, Social, Cultural and philosophical aspects of Baba Sheikh Farid's teachings. It is due to his hard work and consistent efforts that such a use-ful book has seen the light of the day.

I felicitate Dr Kaushak for his great contribution which will defenitely fill the gap in Hindi Literature.

Gurdial Singh
Secretary
RED CROSS BHAWAN
Faridkot-151203

शेख फरीद: रचना और संदर्भ

डा: हरमेन्द्र सिंह बेदी

सूफी उपदेशों के प्रभाव का अनुभव करने तथा महान् सूफी पीरों का स्वागत करने वालों में पंजाब भारत का पहला क्षेत्र था। जैसा कि दाता गंजबख्श के रूप में आम जनता में लोकप्रिय प्रसिद्ध अली बिन उस्मान हुजवीरी ने लम्बे समय तक ईरान और ईराक में सूफीमत का अध्ययन और अनुभव करने के बाद ग्यारहवीं सदी में स्वयं को लाहौर में स्थापित किया। कशफल महजूब शीर्षक से उन्होंने सूफीमत का जो सार-संग्रह तैयार किया उसमें इसका जिक्र अनेक स्थलों पर है। संभवत: यह पुस्तक उन्होंने लाहौर में लिखी थी। कहा जाता है कि लाहौर में उनका पदार्पण पड़ा हिजरी यानी सन् 1045 में और देहावसान 465 हिजरी यानी ईस्वी सन् 1077 में हुआ। उनके पहले लाहौर में एक सूफी सन्त ख्वाजा शाह हुसैन प्रतिष्ठापित थे। शेख फरीद 600 हिजरी (ईस्वी सन् 1204–05) में शेख अली-बिन उस्मान हुजवीरी की समाधी पर श्रद्धाँजलि अर्पित करने आये थे। उसके पहले 580 हिजरी (सन् 1185) में ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती वहां अपनी श्रद्धा का निर्वहण करने के लिए आ चुके थे।

बारहवीं सदी में मुल्तान में एक महत्वपूर्ण सूफी केन्द्र की स्थापना हो चुकी थी। उसका विकास, अध्ययन और धर्मनिष्ठा के एक विराट केन्द्र में हुआ। सतलुज और यमुना के बीच के क्षेत्रों में दिल्ली तक और भी अनेक सूफी केन्द्र थे। शेख फरीद ने तेरहवीं सदी के प्रारिम्भक वर्षों में अयोधन में अपना केन्द्र स्थापित किया जो बाद के वर्षों में ऐसे महान केन्द्र में बदल गया जिसने सारे पश्चिमी पंजाब में सूफीमत का विस्तार किया। इस प्रकार पंजाब के लोग पिछली कई सदियों से सूफीमत के मुख्य और लोकप्रिय तत्वों-लक्षणों से परिचित रहे हैं। इस मत का मानववादी दृष्टिकोण, अजनबियों और अपरिचितों के प्रति इसका आतिथ्य, और भक्ति भाव संबंधी गीतों का समूह गान कस्बों और देहातों में समानरूप से प्रचलित रहा है। विभिन्न सम्प्रदाय के सूफियों ने उन हिन्दुओं और मुसलमानों, दोनों को आकर्षित किया जो अपने धार्मिक विश्वासों की अथवा अपनी इच्छाओं की पूर्ति या किसी आशंकित विनाश से बचना चाहते

थे। ऐसे सूफी भी थे जिन्हें उपदेशक और आध्यात्मिक गुण के रूप में पूजा गया। ऐसे कवि हुए हैं जिनका झुकाव सूफीमत की ओर था। उन्होंने सूफी विश्वासों के अनुसार भजनों और गीतों की रचना की। उन्होंने भक्तिभाव से सरोबार, भाववेग में आनन्द की कविताएं लिखीं। ऐसी कविताओं का सर्जन बहुत बड़ी मात्रा में हुआ। तब मे लेकर आज तक ये रचनाएं जन-विश्वास और उनके आध्यात्मिक स्वप्नों की अभिव्यक्ति की वाहिका रही है। हालांकि प्रशासन से संबंध अभिजात लोगों तथा विद्वानों के क्षेत्र में उसे एक बोली कहा गया है।

पंजाब और उसके आस पास के क्षेत्रों में इस लोकप्रिय सूफीमत ने काफी दूर तक वहां की धरती की रंगत ली। सूफीमत के अकादमिक साहित्य में ईरान और ईराक की परंपराओं का अनुसरण होता रहा है। लेकिन पंजाब में उन नैतिक और आध्यात्मिक सत्यों की अभिव्यक्ति जिसका ज्ञान वे जनसाधारण को कराना चाहते थे, स्वयं वहां की जनता में प्रचलित मुहावरों और चित्रों के माध्यम से हुआ। आम जनता का झुकाव हिन्दुओं में भक्तों, योगिओं, साधुओं, सन्यासियों और मुसलमानों में फकीर, दरवेश और इस्लाम के भीतर के सूफियों के प्रति समान रूप से अपनी श्रद्धा निवेदित करने का था। उस दृष्टिकोण का परिणाम था, ऐसी भाषा शैली का विकास जिसका इस्तेमाल आध्यात्मिकता की अभिव्यक्ति के लिए हुआ और जिसकी प्रेरणा भारतीय और फारसी-अरबी स्रोतों से समान रूप में ली गई। लोग बिना किसी भेद-भाव के साधू-सन्तों और पीरों-फकीरों की बात करते थे। साधू-सन्तों का जिक्र हिन्दू आसक्ति और पीरों-फकीरों का, मुस्लिम आसक्ति के संदर्भ में किया जाता था। इस्लाम ने अपने नियम और विश्वास को सीमित रखा। लेकिन सूफियों ने इसे जिस लोकप्रिय ढंग से प्रस्तुत किया उसमें कट्टरपंथिता नहीं थी। संसारिक सत्यों की एक व्यापक मानववादी दृष्टिकोण के साथ जनता के सामने प्रस्तुत किया गया। उस जनता में हिन्दू और मुसलमान दोनों थे।

'अभ्यास' में योगियों, भक्तों और सूफियों में कुछ विचार समान थे। इस प्रकार योगियों का प्राणायाम सूफियों में पसेअनफास कहलाया। योगियों की शब्दावली में माया को सूफियों ने 'हिजाब' कहा। भक्ति की तन्मयता की उल्लासपूर्ण अभि-व्यक्ति के समांतर स्थिति कृष्ण भक्ति में की जिसमें घोर श्रृंगारिकता थी। सूफियों ने भी भक्ति की एक ऐसी शैली या मुहावरे का विकास किया जो संसारिक प्रेम की मनो दिशा से मिलता-जुलता है। इस प्रकार की अभिव्यक्ति के बीज सूफी भावों-

ढ़ंग के विकास की फारसी कविता में पहले से मौजूद थे। भारत में उसे अतिरिक्त तीव्रता इस लिए मिली क्यों कि यहां स्थानिक प्रभावों में भक्ति से सराबोर अभिव्यक्तियां समान रुप से विकसित हो रही थी।

भक्त और सूफी दोनों एक दूसरे से प्रभावित थे। इसका प्रमाण है वह भाषा और शैली जिसका इस्तेमाल उन्होंने अभ्यास और अभिव्यक्ति के विभिन्न स्तरों पर किया। भारत में (और पंजाब में) सूफियों ने धर्म के प्रधान लक्षणों और अनुभूति के तथ्यों की अभिव्यक्ति के लिए एक खास तरह की शब्दावली का प्रयोग किया। भारत में एक प्रेमी के रुप में ईश्वर के लिए 'साजन' या पी (प्रिय, प्रियतम) का प्रचलित नाम अपना लिया गया। हिज्र (प्रेम में वियोग) की जगह पर विरह इस्तेमाल हुआ। कुछ निम्न श्रेणी के सूफियों ने स्वामी रुप में लोकप्रिय शब्द की जगह साईं को अपनाया। भारतीय भक्तों ने अनुभूति की अनेक शब्दावलियां सूफियों से लीं। प्रमाण के लिए प्रेमी के संबोधन के लिए मेहरम, दिलदार, जती और मुफ्त भोजन के लिए लंगर शब्द अपनाया। (लंगर शब्द का मूल अर्थ है यात्रियों के लिए शरण स्थल) जैसा कि पहले कहा गया है सामान्य जन ने बिना किसी भेदभाव के दोनों ही परंपराओं से शब्दों के एक एक जोड़े लिए। जैसे पीर-फकीर, गुरू-पीर सिद्ध-पीर (दोनों गुरू नानक में) मुस्लिम या गैर-मुस्लिम किसी भी वर्ग के किसी भी प्रकार के शिष्य के लिए मुरीद शब्द अपनाया गया। गैर मुस्लमान संतों की रचनाओं में ऐसे शब्दों के जोड़े अकसर मिल जाएंगे। जैसे राम-रहीम, वेद-किताब पुरान-कुरान, अब्दाली, कलंदर-केशव (अंतिम जोड़ा नामदेव में)। इस प्रकार पूर्वाग्रह, एकांतिकता और असहिष्णुता की प्रवृत्ति धीरे धीरे बढ़ती गयी।

भारतीय प्रेम काव्य शैली को चाहे वह धर्म निरपेक्ष रही हो या आध्यात्मिक भारतीय सूफियों ने अपनाया। उन्होंने प्रेमी या भक्त को वासना से व्यग्र स्त्री के रुप में प्रतिष्ठित किया। प्रेमी की कल्पना एक ऐसे उदासीन कामातुर के रुप में की गयी जो 'किसी दूसरे' के प्रति आसक्त हो। आध्यात्मिक अनुभवों के, किसी के विश्वसनीय को सखी या सहेली कहा गया। काम-वासना की ये अभिव्यक्तियां पूरे भारतीय संसार में प्रचलित थी और उसे भारतीय सूफियों ने अपना लिया। इसकी परम्परा बहुत पहले से थी और शेख फरीद तक की नीचे उद्धृत कविताओं में देखा जा सकता है। (राग आसा 1, 4, सूही 2, सूही ललित में भजन, श्लोक 1, 23, 24, 32, 34, 54, 63 तथा अन्य)। पूरे मध्यकाल में हिन्दी और पंजाबी में यह शैली चलती रही। यह स्थिति इस शैली की फारसी कविता से भिन्न है।

पंजाब समेत भारत में सूफियों ने अपने बिम्बों का चुनाव उस धरती तथा

जन–साधारण के जीवन से किया जिनके बीच में रहे। इस प्रकार उन्होंने एक जन-साहित्य का निर्माण किया जिसका दुहरा महत्व है। यानी (1) आध्यात्मिक प्रेरणा का स्रोत और (2) राष्ट्रीय साहित्य के रुप में। पंजाबी सूफियों की कविता में (जो निश्चय ही मुसलमान थे)। पृष्ठ–भूमि के रुप में पंजाब के देहातों को देखा जा सकता है। एक कृषि-जन्य ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के युग में रहने और लिखने वाले उन सूफियों ने अपने अनुभवों की अभिव्यक्ति उस दुल्हन को प्रतीक बनाकर की जो विवाह के पवित्र दिन अपने मां–बाप के घर से विदा होने वाली है। इसे साहा कहते हैं, जो प्रतीक है ईश्वर या मृत्यु से मिलन का। कार्तिक (अक्तूबर-नवबर) के महीने में उड़ते हुए सारस, सावन (जुलाई-अगस्त) में औंधती हुई बिजली, कुएं पर औरत, अजुरी से गिरते हुए तिल के दाने, कुसुंभ का फीका रंग, आत्मा की पवित्रता का प्रतीक हंस, भैंस का शक्ति वर्द्धक मीठा दूध, और ऐसे ही दूसरे चित्र। सूफी कविता के इस पक्ष ने न केवल धार्मिक अनुभवों को जनता तक पहुचाया बल्कि उसने पावन पुरूषो के इस वर्ग को जन-मन के निकट ला दिया। इसका नतीजा यह है कि बुल्लेशाह और उन जैसे मुसलमान किसी भी धर्म के अनुयायी पंजाबियों और शाह अब्दुल लतीफ किसी भी धर्म के अनुयायी सिंधियों के लिए राष्ट्रीय कवि हो गये। मुस्लिम सूफियों द्वारा लोक स्तर पर प्रयुक्त प्रतीक विधान का अध्ययन करने से स्पष्ट हो जाता है कि उनके पास धरती के प्रति प्यार की पर्याप्त पूंजी थी। उन्होंने ऐसे प्रभाव और वातावरण की सृष्टि की जिसमें जाति और धर्म की सीमाएं भुला दी जाती है और आम जनता समान रुप में ईश्वर से मानवता और पावन उल्लास में भागीदार होती हैं।

शेख फरीद की कहानी मुस्लिम भक्तों और उनके जीवन चरितकारों की परम्पराओं और लेखों में उपलब्ध है। उन्होंने उनके फारसी और अरबी के अध्ययन पर मुख्य रुप से बल दिया है तथा उन्हे शेखुल–इस्लाम और शेख फरीद जैसी उपाधियों से संबोधित किया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि उनके व्यक्तित्व के इस पक्ष को उनके मुस्लिम जीवन चरितकारों ने वास्तविक ढंग से उभारा और सुरक्षित किया है। उनके व्यक्तित्व का दूसरा पक्ष है उनका सूफी संत, जिसकी अभिव्यक्ति जन-साधारण द्वारा उन्हें बाबा या पावन पिता के सम्बोधन के रुप में है। कारण यह है कि उन्होंने जन–साधारण को अपना भीतर का प्यार दिया उनके दुख और कष्ट को दूर करने के लिए अपने स्पर्श का मरहम लगाया। निश्चय ही आम जनता उनके विपत्तियों और दुष्प्रभावों से बचने तथा अपनी सम्णता को दूर करने के लिए उनको चामत्कारिक शक्ति का लाभ उठाने के लिए आयी होगी।

सूफियों और विभिन्न सम्प्रदायों के पावन पुरूषों के प्रति अपनी भक्ति अर्पित करने के ये सारे ढंग प्रचलित थे। शेख फरीद के ज्ञान को सुरक्षित नहीं किया गया है। कारण जैसा कि उनके शिष्य शेख निज़ामुदीन औलिया ने संकेत किया है, यह है कि चिश्ती सम्प्रदाय के सतो ने पुस्तकें नहीं लिखी। जनता के प्रति उनका प्यार और पितृवत्त करूणा 'बाबा' जो उनकी पदवी में सुरक्षित है जिनके ज़रिये अनेक पीढ़ियां उन्हें याद करती रही हैं और आज भी याद कर रही हैं। यह एक विचित्र लक्षण है कि सारे मुसलमान इसी रुप में उनका जिक्र करते हैं। शकर गंज के रुप में उन्हें बहुत उच्च आसन दिया गया है-सूफी के रुप में उन्हें असाधारण शक्ति थी, जो उन्हें ईश्वरीय अनुकम्पा से प्राप्त हुई थी।

शेख फरीद का जन्म मुलतान के आसपास के उस क्षेत्र में हुआ था जहां पर लिखित रूप में उपलब्ध इतिहास काल से लेकर आज तक पंजाबी की मुलतानी शैली बोली जाती रही है। अरबी और फारसी का अध्वयन उन्हे उत्तराधिकार में मिला। इसे उन्होंने अपने पास के पठन-पाठन के उस वातावरण से प्राप्त और सम्पन्न किया जो मुगलों के आंतक से घबरा कर अपनी जन्मभूमि छोड़कर भारत आने वाले बारहवीं शताब्दी के अन्तिम पच्चीस वर्षों में अनेक विद्वानों से बना था। कहा जाता है कि अपने जन्म स्थान और मुलतान के इलावा उन्होंने अपनी जिंदगी के काफी वर्ष दिल्ली अजमेर और हांसी में बिताये यहां की भाषा के रूप में हिन्दी या हिन्दवी की कोई शैली सूफी संतों के पास आध्यात्मिक उपदेश या आर्शीवाद या अपनी समस्याओं के समाधान के लिए जो साधारण जन आते रहे होंगे, उन्होंने निश्चय ही स्थानीय बोली का इस्तेमाल किया होगा। सन्तों के कमोबेश-उसी बोली में उन्हें उत्तर दिया होगा। यह जरूर है कि उन्होंने धार्मिक विचारों या उसके प्रकारों को संक्षिप्त या स्वत्व रूप में समझने के लिए उस बोली में अध्ययन वाली शब्दावली का इस्तेमाल किया होगा। इस प्रकार अरबी और फारसी से ली हुई सूफी मत से सम्बन्ध धार्मिक शब्दावली जन-साधारण धीरे-धीरे ठीक उसी प्रकार परिचित हो गया होगा जिस प्रकार रोजमर्रा के काम में आने वाली प्रशासन की शब्दावली से वह परिचित होता है।

अरबी के साथ-साथ फारसी का इस्तेमाल विद्वानों के पारस्परिक विचार-विमर्श प्रशासन और धर्म शास्त्रीय सन्दर्भो में होता होगा लेकिन यह तथ्य कल्पना से परे है कि सन्तों के जन-साधारण से बातचीत में फारसी का इस्तेमाल किया होगा। यह तथ्य भी निर्विवाद है कि उनमें कुछ पीरों और उनके भक्तों के आध्यात्मिक अनुभवों और नैतिक प्रबोधनों सम्बन्धी कविताएं निश्चय ही जन-

भाषा में की। पंजाब में सदियों पहले से लेकर आज तक मुसलमानों ने विभिन्न प्रकार की धार्मिक कविताए पंजाबी में की हैं। ऐसी कविताओं में हमद (ईश्वर की प्रशंसा), नात (पैगम्बर की प्रशंसा) भजन और धार्मिक विषयों पर लिखी जाने वाली अनेक प्रकार की रचनाएं आती हैं। वास्तविकता यह है कि हीर जैसी धर्म निर्पेक्ष कहानियों को भी इस तरह का सूफीयाना अर्थ दिया गया, ताकि वे रूमान भी लगे और रूपक भी इस्लामी दुनिया का एक सर्वाधिक प्रसिद्ध आख्यान यूसुफ और जुलेखा पंजाबी में दर्जनों रूपों में पाया जाता है। शरीयत और सूफी मत का सम्पूर्ण प्रबन्ध भी पंजाबी में कविता में रचा गया है। इन रचनाओं पर मुसलमानों ने श्रद्धा से सिर झुकाया है, भावातिरेक में उनकी आंखों में आंसु आये हैं और उन्हें पढ़ते हुए उन्होंने चरम आनन्द की अनुभूति की हे। अतः यह कल्पना करना ठीक नहीं कि शेख फरीद जैसे एक महान सूफी और धर्मोपदेशक को अपने आध्यात्मिक अनुभवों को उस जनसाधारण के लिए मुलतानी पंजाबी में कविताओं में ढालने का मौका मिला जिसके बीच उनके बचपन और जवानी के दिन बीते और अजोधन में बसने के बाद उन्होंने 60 साल से अधिक का समय धर्मपीठ के प्रमुख की हैसियत से बिताया।

गुरू नानक तथा उनके आध्यात्मिक उत्तराधिकारियों-सिखों के पावन गुरूओं ने इस कविता के एक अंश की खोज की। इसे पवित्र 'ग्रन्थ साहिब' में सुरक्षित किया गया है। यह सुरक्षा संयोगवश हुई जिसके लिए पंजाबियों की पीढ़ियां और शेख फरीद को श्रद्धा देने वाले हर जगह के लोगों को सिख गुरुओं और सिख परम्परा के प्रति अनुगृहीत होना चाहिए।

पंजाब के आध्यात्मिक इतिहास में शेख फरीद

राजेन्द्र सिंह भसीन

पंजाब के आध्यात्मिक इतिहास को चार कालों—वैदिक, नाथ-योगी, सूफी तथा गुरमत –में बांटा जा सकता है। जिस भू-खण्ड को पंजाब के नाम से याद किया जाता है उसकी श्रेष्ठता इस में है कि वैदिक विचारधारा के रूप में समस्त संसार में सब से प्रथम आध्यात्मिकता की रूपरेखा प्रस्तुत की।

पंजाब का आध्यात्मिक इतिहास ऋग्वेद की रचना के साथ आरम्भ होता है। ऋग्वेद की ऋचाएं भारतीय आर्य लोगों के मन में छिपी तीव्र धार्मिक तथा कल्पनात्मक विचारों को रूपमान करती हैं। भारतीय आर्य लोगों की द्राविड़ो पर विजय राजनीतिक होते हुए भी मूलत: आत्मिक तथा मानसिक विजय थी। वे अपने साथ केवल वैदिक सूझबूझ तथा संस्कृत भाषा ही नहीं लाए थे, अपितु जिज्ञासू प्रवृत्ति भी साथ लाए थे जो बरफों से ढके हिमालय ने उनके अंतर्मन में जगा दी थी।

वैदिक ऋचाओं के रचयिता अथवा ऋषि स्वतंत्रताप्रिय समुदाय के शक्तिशाली प्रवक्ता थे उन का प्रकृति काव्य भी उच्चकोटि का है। प्रकृति के प्रत्येक पल परिवर्तनशील पक्ष उनके मन को डर तथा प्रसन्नता की भावना से ओतप्रोत कर देते थे। वर्षा, सूर्य, चांद, अग्नि, नदियां, तूफान तथा अन्य प्राकृतिक शक्तियां उनके लिए परमसत्ता की प्रतीक थीं। यह भी नहीं कि एक व्यक्ति एक ही शक्ति की आराधना कर सकता था, विभिन्न समयों पर एक ही व्यक्ति विभिन्न देवताओं की आराधना कर सकता था। सम्भवत बाद में यही धार्मिक सहनशीलता की आधारशिला बनी।

ऋग्वेद में ही यह प्रश्न उठाया गया कि इस सृष्टि से पूर्व अर्थात् जब धरती, आकाश विद्यमान नहीं थे, रात और दिन नहीं थे, जब काल तथा अकाल कुछ भी नहीं था तो क्या था? उत्तर भी इसी रचना में दिया गया है कि उस समय पुरुष था, जिसके सहस्र सिर, सहस्र आंखें तथा सहस्र पांव थे। यह भी स्पष्ट कर दिया गया कि इस शक्ति को ऋषियों ने विभिन्न नाम दे रखे हैं।

मनुष्य का इस के साथ क्या सम्बन्ध है इसके बारे में तथा अन्य इसी प्रकार के प्रश्नों के उत्तर बाद में दिए गए। इसलिए कहा जा सकता है कि इस एक परमसत्ता की कल्पना तथा आत्मिक ऐक्य की भावना विश्व को पंजाब की देन है। भारत के धर्मों तथा दर्शनों की दिशा यहां ही निर्धारित की गई।

यह ठीक है कि कर्मकाण्ड तथा आवागमन का सिद्धान्त बाद की बातें हैं इन्हीं विचारों की प्रतिक्रिया में जैन तथा बौद्ध मत का उदय हुआ। परन्तु यह दोनों न तो पंजाब की देन है और न ही इनका इस भूखण्ड पर कोई गहरा प्रभाव ही पड़ा। इसका कारण यह है कि पंजाव विदेशी आक्रमणकारियों का पहला पड़ाव और भारत की खड्ग भुजा रहा है। इसलिए जैन तथा बौद्ध मत इस प्रदेश में लोकप्रिय न हो सके।

परन्तु बौद्धमत का प्रभाव क्षीण होते ही इसकी प्रतिक्रिया के फलस्वरुप खड़े हुए नाथ अथवा योग मत ने पंजाब के आध्यात्मिक जीवन को बहुत ज्यादा प्रभावित किया। यह ठीक है कि नाथ मत और बौद्ध धर्म का प्रभाव बहुत अधिक था परन्तु इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि इस पर शैवमत का भी प्रभाव था। यह मत भारतवर्ष में दूर दूर तक फैला। काबुल-कंधार से लेकर कन्याकुमारी तक तथा बलोचिस्तान से लेकर बंगाल तक इसका एक समान प्रभाव था। मुसलमान-लेखकों की रचनाओं तथा लोगों में प्रचलित विश्वासों के आधार पर कहा जा सकता है कि यह मत था जो उस समय लोकमानस पर पूर्णरूपेण छाया हुआ था। इसके प्रभाव से कोई व्यक्ति अछूता नहीं था।

योग मत की दो बड़ी शाखाएं—राजयोग तथा हठयोग—मानी गई। पतंजलि के योगशास्त्र में राजयोग की व्याख्या की गई है। हठयोग का उद्देश्य मनुष्य को दीर्घायु प्रदान करना तथा स्वास्थ्ययुक्त रखना है जिससे उसकी काया कंचन सी बनी रहे। सौ डेढ़ सौ साल तक भी हठयोगी नवयुवक बना रह सकता हैं। राजयोग को हठयोग से उत्तम माना गया है परन्तु हठयोगियों का विश्वास है कि हठयोग के बिना राजयोग की प्राप्ति सम्भव नहीं है। राजयोग के आठ अंग—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान तथा समाधि है। यम पांच हैं - अहिंसा. सत्य, अस्तेय (किसी की चीज न लेना), ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह अर्थात् कब्जे की भावना से बचना। शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय तथा प्रणिधान आदि नियम हैं। योग का अन्तिम ध्येय समाधिस्थित होना है। समाधि स्थित द्रष्टा को अपने स्वरूप का ज्ञान हो जाता है और उसके लिए प्रकृति का खेल समाप्त हो जाता है। योग आत्मा और परमात्मा के एकाकार का नाम नहीं

है। इसके अतिरिक्त योगमत का सामाजिक पक्ष अत्यन्त कमज़ोर था। योग सिद्धि के लिए वनों में एकाँतवास आवश्यक था। शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भिक्षुवृत्ति धारण की जाती थी अथवा वन से कंदमूल का आहार करना योगी का भाग्य था।

इसमें संदेह नहीं कि पंजाब का कोई ऐसा बड़ा गांव तथा कस्बा नहीं जिस के नजदीक योगियों का टीला न हो। परन्तु एक तो योग धर्म में कठिन तपस्या करनी पड़ती थी और दूसरे इस का अन्तिम लक्ष्य ऐसा था जो जन-साधारण की पकड़ से बाहर था। इसलिये योगमत का पंजाब के आध्यात्मिक इतिहास में विशेष स्थान तो जरूर है परन्तु यह जन-साधारण का धर्म न बन सका। इसके साथ ही यह भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि नाथपंथ के प्रभाव का विस्तार झोंपड़ी से लेकर राजमहल तक एक समान था।

वैदिक और नाथपंथी आध्यात्मिकता के बाद पंजाब के आध्यात्मिक इतिहास में अगला स्थान सूफी मत का था। सूफी मत का अभ्युदय अरब में हुआ। हज़रत मुहम्मद साहिब के निधन के तुरन्त पश्चात् ही इस मत का अभ्युदय हो गया था। आरम्भ में इसके अनुयायी कुरान शरीफ के सिद्धान्तों के अनुसार कट्टरपंथी विचारों वाले, साधु प्रवृत्तियों वाले, कठिन जीवन व्यतीत करते थे। परन्तु धीरे-धीरे इनकी साधुता ने रहस्यवाद का रूप धारण कर लिया। रहस्यवाद की यह धारा इस्लाम से प्रभावित थी। इन रहस्यवादियों के मन में परमात्मा के प्रति इतना प्रेम नहीं था जितना कि डर था। इस तरह पाप का अत्यधिक भय इस रहस्यवाद का एक और लक्षण था।

भारत के सूफियों का आगमन उत्तरी भारत की मुसलिम विजय के पश्चात् प्रारम्भ हुआ। भारत विजय में मुसलमानों का उद्देश्य इस्लाम का प्रचार था जो कि उन्होंने तलवार की सहायता से किया। सूफी उनके इस प्रचार-कार्य में सहायक थे परन्तु उनका ढंग विजितों के प्रति प्रेम तथा सहानुभूति का था। असगरअली, जिसने कि बाबा फरीद जी की जीवनी लिखी है, ने ऐसे 16 कबीलों की सूची दी है, जिन्होंने फरीद जी के विचारों के कारण मुसलमान मत स्वीकार किया।

यदि फरीद जी को सूफी कहा भी जाए तो डा. मोहन सिंह दीवाना के शब्दों में उन्हें ऐतिहासिक पड़ाव का सूफी कहा जा सकेगा। इसका कारण यह है कि वे मुसलमानी परम्परा में सराबोर थे। कहा जाता है कि पांच साल की आयु में ही उन्होंने कुरानशरीफ हिफ्ज़ कर लिया था। बाल्यकाल से ही नमाज़

तथा रोजे के पाबन्द थे। सोलह वर्ष की आयु में वह हज़ के लिए काबा गए। इस्लामी शिक्षा की प्राप्ति के लिए वह काबुल भी गए। वहां से लौटने पर ख्वाजा कुतुबद्दीन बखत्यार काकी के मुरीद थे।

गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज फरीद–वाणी के आधार पर प्रायः कहा जाता है कि उन्होंने प्रभु–प्राप्ति के लिए कठिन से कठिन तप किए। कुएं में उलटा लटकने तथा लकड़ी की रोटी खाने की बात भी लोगों में प्रचलित है। परन्तु वास्तविकता यही प्रतीत होती है कि शर्रह के अनुसार वह नमाज़, रोज़ा, ज़िकर, फिकर, विरद, तव्वकल, सबर, हलीमी तथा रज़ा आदि असूलों के कट्टर अनुयायी होंगे। यह एक दृष्टि से सभी प्रारम्भिक सूफियों की विशेषता थी। इससे अधिक तप तथा कष्ट सहन की पुष्टि उनकी वाणी से नहीं होती, यथा :—

जंगल जंगल क्या भवे, वण कंडा मोड़ें।
वसी रब ह्यालिये जंगल क्या ढूंढे॥

अर्थात् जो प्रभु प्रत्येक प्राणी के मन में बसा हुआ है उसकी खोज के लिए वनों में जाने की क्या आवश्यकता ?

कहना न होगा कि वह अब्दुला अनसारी, ख्याम, अबुसईयद, अबूअलखैर, सनाई तथा अतार आदि की भांति प्रारम्भिक सूफी थे जिन पर सूफी सिद्धान्तों की अपेक्षा शर्रह का प्रभाव अधिक था। पूर्णरूपेण मस्ती, वजद, हाल आदि की अनुपस्थिति के कारण ही उन की वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज की गई। बाद के सूफी, जिन में साईं शाह हुसैन तथा बुल्लाशाह की गणना की जा सकती है, मस्ती के कवि हैं। धार्मिक अनुष्ठान उन के लिए कोई महत्व नहीं रखते। उनके काव्य तथा जीवन में सहज नाम की कोई चीज नहीं है। यही कारण है कि सिक्ख गुरुओं ने उसकी वाणी को मनुष्य के संतुलित विकास के लिए हानिकर समझते हुए गुरु ग्रंथ साहिब में कोई स्थान नहीं दिया।

सहज संतोष, नम्रता, प्रभुप्रेम तथा उनका गृहस्थी जीवन पंजाब के आध्यात्मिक इतिहास में एक नई चीज थी। अब तक के धार्मिक नेता गृहस्थ के झंझटों का त्याग करने का उपदेश देते आ रहे थे परन्तु धार्मिकता तथा गृहस्थ जीवन का संगम प्रस्तुत करने वाले इस मधुरभाषी सूफी फकीर ने जनता को अपने प्रेम में जकड़ लिया। आज भी गृहस्थ जीवन में प्रवेश करने वालों को दाम्पत्य जीवन को सफल बनाने के लिए फरीद जी के शब्दों में उपदेश दिया जाता है, यथा : —

निवण सु अखर खवण गुण जिहवा मणिया मंत ।
ए त्रै भैणे वेस कर तां वस आवी कंत ॥

क्योंकि सत्य एक तथा अविभाज्य है इसलिये महापुरुषों, विशेषकर आध्यात्मिक सत्य के व्याख्याताओं, का वर्गीकरण असम्भव सा प्रतीत होता है। यही अवस्था फरीद जी की है। साधारणतः उनको सूफी माना जाता है, परन्तु सूफियों की उछल-कूद तथा मस्ती उनकी वाणी में बहुत कम है। कहीं कहीं प्रेम की बाढ़ आती है जब वे कहते हैं :—

गलियाँ चिकड़ दूर घर नाल प्यारे नेहु ।
जाए मिलां तिन सज्जणां टूटे नाहीं नेहु ॥
पाड़ पटोला धज करी कंबलड़ी पहरेओ ।
जिनीं वेसीं सहु मिले सोई वेस करेओ ॥

परन्तु इसे गुरमत के आशय के अनुसार ढालने के लिए साथ ही गुरू अमर दास नें कह दिया :—

कहे पटोला पाड़ती कंबलड़ी महरेओ ।
नानक घर ही बैंठिआं सहु मिले जे नीअत राम करेओ ॥

वैसे फरीद जी खुद भी ऐसे महापुरुष थे जो बाढ़ की अपेक्षा मन को नदी के तटों के अन्दर रखने के हक में थे। इस प्रवाह की धारा सुनिश्चित रखने के लिए उन्होंने शर्रह की सहायता ली। परन्तु पैगम्बर पर विश्वास मुसलमानों की भांति कयामत के रोज़ सहायक होने की हद तक नहीं है। नेक कामों पर इस सीमा तक ज़ोर दिया गया है कि उसमें भारतीय कर्मवाद की प्रतिध्वनि सुनी जा सकती है :—

फरीदा लोड़े दाख बिजौरियां किकर बीजे जट ।
हंढे उन कतांयदा पैधा लोड़े पट ॥

इन सब धाराओं के सम्मिश्रण का फल है कि आज आठ शताब्दियों के पश्चात् भी जब पंजाब का किसान बाबा फरीद के श्लोकों की ध्वनि सुनता है तो अपने बैलों के गले में बंधी टल्लियों की आवाज़ को बन्द कर के वह श्लोकों की ध्वनि सुनने में मस्त हो जाता है। निश्चय ही यह सबसे बड़ी श्रद्धांजलि है जो किसी महापुरुष को आने वाली पीढ़ियां भेंट कर सकती हैं।

★★

फरीद वाणी की प्रामाणिकता

प्रो. राजबीर कौर

शेख फरीद चिश्ती सम्प्रदाय के सूफी संत हुए हैं। आप का वास्तविक नाम फरीदुद्दीन मसऊद गंज-ए-शकर था। उनके नाम के साथ 'गंज-ए-शकर' जुड़ने के अनेक चामत्कारिक कारण बतलाये जाते हैं। अमीर खुर्द ने लिखा है कि अत्यंत भूख के कारण आप ने एक दिन मुख में कुछ कंकड़ डाल लिए थे। वह कंकड़ शक्कर बन गई थी। इस लिए 'शकर-गंज' आप के नाम के साथ जुड़ गया। मौलाना जमाली का कथन है कि एक दिन भूख से दुर्बल हुए वे भूमि पर गिर पड़े और मुंह से लगी कीचड़ शक्कर बन गई अत: उक्त नाम पड़ा।

फरीद-वाणी में प्राणिमात्र के प्रति प्रेमभाव को सर्वश्रेष्ठ स्थान मिला है। आप ईर्ष्या, वैर, घृणा और हिंसा का परित्याग करके प्रेम और सहानुभूति की स्थापना करना चाहते हैं। जीवन की नश्वरता एवं क्षणभगुरता का स्मरण दिलाते हुए प्रेम के मार्ग द्वारा निर्माणकर्ता परमेश्वर के दर्शन कराना चाहते हैं। उनका निरंतर प्रयास है कि प्राणी संसार की वास्तविक स्थिति समझे और अपने कर्त्तव्य को पहचाने। वे परमात्मा की प्राप्ति इसी लौकिक धरातल पर प्रेम के द्वारा संभव मानते हैं। उनके अनुसार परमात्मा संसार में सर्वत्र है और संसार की स्थिति केवल उसके कारण ही है :

फरीदा खालक खलकु महि खलकु बसै रब मांहि ।।
मंदा किसनो आखीअै जां तिसु बिणु कोई नांहि ।।

प्रेम के मार्ग में कोई भी तुच्छ नहीं है। सर्वत्र उस प्रिय की झांकी अंकित है। सबके महत्व को स्वीकार करते हुए अपनी साधना में अग्रसर होना चाहिये। खाक जैसी तुच्छ वस्तु की भी निन्दा नहीं करना चाहिये। जीवित रहते जिसे तुम पैरों तले रौंदते हो, वही मरणोपरांत तुम्हारे ऊपर पड़ती है। आप कहते हैं :

फरीदा खाकु न निंदीअै खाकू जेड न कोइ ।।
जीवंदिआ पैरां तलै मोइयां ऊपरि होइ ।।

जो अहंकार ग्रस्त होते हैं उनका हृदय अंधकार में डूबा रहता है और वे

ज्ञान के प्रकाश से वंचित रहते हैं। यह अंधकार सच बोलने और संतोष को सर्वश्रेष्ठ धन मानने से विनष्ट होता है। वे लिखते हैं :

रूखी सूखी खाइ कै ठंडा पानी पीउ ॥
फरीदा देख पराई चोपड़ी न तरसाए जीउ ॥

शेख फरीद की वाणी के अनुशीलन से यह ज्ञात होता है कि आप प्रेमा–भक्ति के शिरोमणी संत कवि थे। इस संसार की असारता को ध्यान में रखते हुए शेख फरीद की दृष्टि उस प्रिय की ओर लगी है जो संसार के बंधनों से मुक्ति दिला सकता है। हमारी दृष्टि में शेख फरीद लौकिक व्यवहार और आचरण की मर्यादा का निर्वाह करते हुए फकीर की जिन्दगी बसर करने में विश्वास रखते थे। एकेश्वरवाद में उनकी अटूट आस्था थी और उनका ईश्वर–प्राप्ति का मार्ग प्रेम-मार्ग था। इसी लिए उनकी वाणी साधारण जनता में भी सहज रूप में प्रचारित हो गई। पंजाब के जनपदों में आज शेख फरीद के श्लोक जन-जन में गुंजित हैं।

आदिग्रन्थ में शेख फरीद के 112 श्लोक और 4 शब्द संकलित हैं। यह 4 शब्द राग सूही और राग आसा में योजनाबद्ध किए गए हैं। जिस स्थान पर शेख फरीद जी के 112 श्लोक संकलित हैं वहां साथ ही 18 श्लोक गुरू नानक देव जी (4 श्लोक) गुरू अमर दास जी (5 श्लोक) गुरू राम दास जी (एक श्लोक) तथा गुरु अर्जुन देव जी (8 श्लोक) आदि गुरू साहिबान के भी संकलित हैं। गुरु ग्रन्थ साहिब से पूर्व पंजाबी की कोई भी पाण्डुलिपि या ग्रन्थ उपलब्ध नहीं होता जिसमें फरीद जी की पंजाबी वाणी पूर्ण रुपेण संकलित हो। सीअरुल औलीआ में फरीद जी के कई फारसी बैंत, अरबी रुबाईया कथन और पत्र मिलते हैं। हिन्दी और रेखता के कई उदाहरण डा: अब्दुल हक और प्रो: सैय्यद हसन असकरी ने अपने लेखों में दिए हैं। पंजाबी कव्वालों को भी फरीद जी के नाम वाले कई ऐसे श्लोक याद हैं जो 'आदिग्रन्थ' में नहीं मिलते। इसी प्रकार भाषा विभाग पंजाब, पटियाला के पुस्तकालय में 56 पंक्तियों की एक 'काफी' उपलब्ध है जिसे शेख फरीद की रचना माना गया हैं। भाई पैंदे वाली बीड़ और पुरातन जनम साखियों में भी 'आदिग्रन्थ' के अतिरिक्त श्लोक देखे जा सकते हैं। इन रचनाओं को भी प्रामाणिक मानकर डा: मोहन सिंह दीवाना ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'पंजाबी अदब की मुखसर तारीख' में इन्हें सम्मान युक्त स्थान दिया है। फरीद जी के कुछ श्लोक 'शब्द श्लोक भगतां के' भी संकलित है, जिसका सम्पादन डा: कांग ने भाषा विभाग के लिए किया है।

आदिग्रन्थ की बीड़ 1604 ई: में फरीद जी की मृत्यु से 338 वर्ष पश्चात् सम्पूर्ण हुई। यह अन्तर फरीद जी की रचना के विषय मे अनेक शंकाए उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त है। पुरातन जनम साखियों में गुरु नानक साहिब की फरीद गद्दी के संचालक शेख ब्रह्म से गोष्ठी बताई गई है। इस गोष्ठी के समय शेख ब्रह्म बहुत से वे श्लोक उच्चारण करता हुआ बताया गया है जो गुरु ग्रन्थ साहिब में शेख फरीद के नाम से अंकित है। इस तथ्य से बहुत से विद्वानों ने यह निष्कर्ष निकाल लिया है कि आदिग्रन्थ में संकलित वाणी वास्तव में शेख ब्रह्म अथवा शेख इब्राहीम की रचना है और 'फरीद' उसका उपनाम हैं।

उक्त धारणा को सर्वप्रथम मैकालिफ नें अपनी पुस्तक 'द सिक्ख रिलीजन' में प्रकट किया। उसके बाद डा: लाजवन्ती रामा कृष्ण, डा जी. एम. डी. सूफी, डा: हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्रो: खलीक अहमद निज़ामी जैसे लेखकों ने शेख ब्रह्म को ही फरीद वाणी का वास्तविक रचयिता स्वीकार किया। इस धारणा के विरोध में सरदार जी. बी. सिंह, डा: मोहन सिंह दीवाना और मौला बख्श कुशता ने तर्क दिये हैं। बाबा बुद्ध सिंह, डा: बनारसी दास जैन, प्रिंसीपल तेजा सिंह, डा: गोपाल सिंह दर्दी तथा डा: सुरिन्द्र सिंह कोहली ने इस वाणी को मिश्रित कहा अर्थात उनके अनुसार कुछ श्लोक शेख फरीद की रचना है और कुछ शेख ब्रह्म ने रचे।

हमारा विचार है कि 'आदिग्रन्थ' में संकलित सारी वाणी शेख फरीद की ही रचना है। इस धारणा की पुष्टि के लिए बहुत से तर्क दिए जा सकते हैं जिनमें से प्रमुख तर्क इस प्रकार हैं।

1 गुरु नानक देव जी ने शेख फरीद की रचना शेख ब्रह्म से प्राप्त की और फिर इस रचना को अपनी वाणी सहित लिखकर सम्भाल लिया। गुरू साहिब जब भी कहीं प्रचार के लिए बाहर गए तो उनके पास लिखित-पोथी (पुस्तक) होती थी। इस विषय में भाई गुरदास ने भी संकेत दिया है। मक्के में गुरू नानक देव जी को हाजी पूछते हैं कि वे अपनी पुस्तक पढ़कर बताएं कि हिन्दु बड़ा है या मुसलमान :-

पुछण खोल किताब नूं, बड़ा हिन्दु कि मुसलम नोई।
बाबा आखे हाजीआ, शुभ अमलां बाझ हूं दोनों रोई।।

यह पुस्तक बाद में गुरू अंगद, गुरु अमर दास, गुरु राम दास द्वारा गुरू अर्जुन देव तक पहुची। सिक्ख गुरूओं को जहां कहीं अपने आशय और शेख फरीद के श्लोकों में अन्तर-विरोध महसूस हुआ वहां उन्होंने टिप्पणी के तौर पर अपना

श्लोक साथ ही दर्ज कर दिया। इस प्रकार 18 श्लोक, शेख फरीद के 112 श्लोकों से सम्बन्धित हो गए।

2 सूही ललित में अंकित शेख फरीद के प्रसिद्ध शब्द 'बेड़ा बन्धि ना सकिउ' की तुलना में गुरू नानक देव जी ने इसी राग में 'जप तप का बन्धु बेड़ला' शब्द रचा। यह एक प्रकार का मैटा-टैकसट है जिसमें गुरू नानक देव जी ने दी हुई टैकसट के आधार पर अधिक प्रामाणिक और प्रासंगिक मैटा-टैकसट की रचना की।

3 अगर हम फरीद वाणी में निरुपित कवि के व्यक्तित्व का विश्लेषण करें तो इसमें बाबा फरीद जी का व्यक्तित्व दृष्टिगोचर होता है। 'काठ की रोटी' की कथा कुछ ऐसी पुस्तकों में उपलब्ध होती है जो शेख इब्राहीम से पहले रची गई। सीरीडल औलीयां की रचना शेख ब्रह्म के जन्म से डेढ़ पौने दो सौ वर्ष पूर्व हो चुकी थी। इसमें एक ऐसा पंजाबी दोहरा उपलब्ध होता है जो शेख फरीद के कवि होने की साक्षी देता है।

4 'जवाहर-फरीदी' शेख ब्रह्म की मृत्यु से केवल साठ-सत्तर वर्ष बाद लिखी गई। इसमें बाबा फरीद को कुएं में उल्टा लटक कर तप करते हुए और निम्नलिखित दोहा उच्चारण करते हुए बताया गया है।

फरीदा धड़ सूली सिर पिंजरे तलीयां टुंगण काग,
रब अजिउ न बहुड़े तो धन्नि हमारे भाग।

5 'आदिग्रन्थ' में जो श्लोक संकलित है उनमें आए सन्दर्भ फरीद जी के जीवन चरित्र से पूर्णत: मेल खाते हैं। 'सीरीउल औलीया' फवाइदुल-फवाद, खैरूल-मजलिस आदि पुस्तकों में शेख फरीद जी के जीवन के विषय में जो जानकारी मिलती है वह इन श्लोकों में आए सन्दर्भों से पूर्णत: मेल खाती है।

फरीदा बेनिवाजा कुत्तिया, इह ना भली रीति।
कब ही चल न आइआ पंजे वख्त मसीति।
फरीदा साहिब दी करिचाकरी, दिल दी लाहि भरांदि
दरवेसा नो लोड़ीअै, रूखां दी जीरांदि ॥

6 शेख फरीद भले ही सूफी सम्प्रदाय के एक हरमन प्यारे प्रर्वतक हुए हैं परन्तु न तो उनके जीवन से कोई दन्त कथाएं प्रचलित हुई हैं और न ही एक कवि के रूप में उनकी कोई विशेष देन दृष्टिगोचर होती है।

7 बाबा फरीद का समय राजनीतिक तौर पर उथल-पुथल का युग था। उनके जीवन काल में अनेक शहनशाह बदले। खुशरब मलिक, मुइजुद-दीन-गौरी, कुतब--

दीन ऐबक, अलतमश, फीरोज़, रज़ीया, बहिराम, अलाउद्दीन, नासुरदीन और बलबन आदि बहुत से बादशाह एक के बाद एक बदलते रहे। यही कारण है कि फरीद जी की वाणी में मौत की अटलता, भयानकता और राजगद्दी की अस्थिरता के भाव निरुपित होते हैं।

8 शेख फरीद के नाम से सम्बन्धित भिन्न-भिन्न श्लोकों में जो पाठ भेद दृष्टि गोचर होते हैं, उसकी पुष्टि के लिए इतना ही कह देना काफी है कि लोक स्मृति द्वारा सम्भाले गए होने के कारण इनमें भाषा सम्बन्धी परिवर्तन हो जाना स्वाभाविक ही है।

9 'आदिग्रन्थ' में शेख फरीद के बिना भक्त कबीर और भक्त नामदेव की वाणी भी संकलित है। भक्त कबीर 1398 ई में पैदा हुए। जब कि नामदेव जी का जन्म 1270 ई: में हुआ। इन भक्तों की वाणी पूर्ण प्रामाणिकता के साथ आदिग्रन्थ में संकलित है। इसलिए यह स्वीकार कर लेने में कोई हर्ज नहीं है कि हमसे थोड़ा समय पूर्व हुए शेख फरीद जी की वाणी भी प्रामाणिक ही होगी। गुरू नानक और गुरू अर्जुन देव जी ने वाणी संकलित करने से पूर्व इसकी प्रामाणिकता के बारे में पूरी खोज कर ली होगी।

उक्त तर्कों के आधार पर यह निश्चित है कि आदिग्रन्थ में संकलित फरीद वाणी शेख फरीद की ही रचना है। मिस्टर मैकालिफ जैसे विदेशी और भारतीय भाषाओं के अल्पज्ञाता लेखकों की रचनाओं के आधार पर ऐसी धारणा प्रचलित कर देना भ्रांति जनक है कि यह वाणी किसी अन्य फरीद (शेख ब्रह्म) की रचना होगी।

शेख फरीद : व्यक्तित्व और कृतित्व

श्रीमती कामायनी कौशिक

मध्य युग में विदेशी आक्रमणकारियों के कारण भारत की दशा अत्यन्त शोचनीय हो गई थी। जिस समय मुसलमान शासकों ने भारत में अपना शासन स्थापित किया, उसी समय से भारत में सूफी, पीरों, फकीरों, दरवेशों का आगमन आरम्भ हो गया था। इस सम्प्रदाय ने भारत में तत्कालीन प्रचलित धार्मिक कट्टरवाद के स्थान पर समन्वयवादी दृष्टिकोण अपनाकर मानवीय एकता और समता का प्रचार किया। परिणाम स्वरूप दो संस्कृतियों (हिन्दु और मुस्लिम) का मणिकांचन योग हुआ। शेख फरीद ने इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए अपनी वाणी के द्वारा विश्वबन्धुत्व का सन्देश दिया। प्यारा सिंह पद्‌म के अनुसार, फरीद की वाणी का मूलाधार महात्मा बुद्ध का शुद्ध शिष्टाचार, बाबा गोरख का तप-त्याग, मोहम्मद साहिब का सब्र-सन्तोष और भारतीय ढंग की प्रेमाभक्ति है। सब से बढ़कर विशेषता वाली बात तो यह है कि यह बन्दगी, यह फकीरी, यह ज्ञान, यह शिक्षा पंजाबी रंग ढग में उजागर होती हुई अपनी अलग झलक के साथ दिखाई देती है। हिन्दुस्तानी वेदान्त और इस्लामी सूफीवाद का यह अनोखा संगम है।"

शेख फरीद का जन्म शेख जमालुद्‌दीन सुलेमान के घर बीबी कुरशूम की कोख से 571 हिजरी (1175 ईस्वी) को गांव कोठीवाल (कोतवाल) जिला मुलतान में हुआ। कुछ ग्रन्थों में इनका जन्म 569 हिजरी (1173 ईस्वी) बताया गया है। फरीद जी ने आरम्भिक शिक्षा अपने ही गांव में प्राप्त की। इसके बाद मुलतान के मौलाना मिनहाजुद्‌दीन तिरमिजी की मस्जिद के मदरसे में आपने औपचारिक शिक्षा ग्रहण की। इस समय तक आपको कुरान शरीफ़ ज़बानी याद हो गया था। आप 24 घण्टे में एक बार कुरान शरीफ़ का सम्पूर्ण अध्ययन कर लेते थे। इसी बीच आपका सम्पर्क एक योग्य मुरशद ख्वाजा बख्तिआर काकी के साथ हुआ। फरीद जी ने उनके पवित्र चरणों में अपने आपको समर्पित कर दिया। आपने उन्हें अपना गुरु धारण कर लिया। उनकी सेवा करते हुए आप

कुछ समय मुलतान रहे और बाद में शिक्षा पाने हेतु कन्धार चले गये। इस समय आपका सम्पर्क अनेक सूफी, सन्तों, फकीरों से हुआ, जिनसे आपको आत्मिक तृप्ति के लिए अमूल्य खजाना मिला। ख्वाजा मुइउद्दीन चिश्ती ने आप पर अपार कृपा करके आपको असीम ज्ञान का भण्डार दिया। तथा शेख कुतबुद्दीन काकी ने आपको तपस्या करने के लिए प्रेरित किया। आपके हृदय में ईश्वरीय प्रेम और अद्भुत दिव्य प्रकाश को महापुरुष शीघ्र ही भांप लेते थे। आपको ईश्वर के प्रति अटूट लगन थी। आप सब कुछ त्याग कर तप करने के लिए हांसी आ गए। हांसी में आप लगभग 19-20 वर्ष रहे। आपकी तप-साधना और योग्यता के कारण आपको मुरशद ख्वाजा बख्तिआर काकी के परलोक सिधारने के उपरान्त चिश्ती सम्प्रदाय का नेतृत्व सम्भाला गया। जब आपकी प्रसिद्धि चारों ओर फैलने लगी तो आप हांसी छोड़कर पुन: अपने पैतृक गांव कोठीवाल आ गए। कुछ समय वहां रहने के बाद आयोधन आ गए। जिसका नाम आजकल पाकपटन है। यह स्थान आपको भजन-बन्दगी के अनुकूल लगा। अत: आप यहीं पर रहने लगे।

आप गृहस्थी थे। आपने एक से अधिक विवाह किये थे। आपकी आठ सन्तानें थीं। जिनमें पांच बेटे ख्वाजा नसीरुद्दीन, ख्वाजा शहाबुद्दीन, शेख बदरुद्दीन सुलेमान, शेख निज़ामुद्दीन, शेख याकूब और तीन बेटियां बीबी मसतूरां, बीबी शरीफां और बीबी फतिआं थीं। आपने गृहस्थी होते हुए भी संसारिकता से निर्लेप रह कर जप-तप करके अपनी आत्मा को उस दिव्य प्रकाश स आलौकित किया। आपने अपने जीवन को इस प्रकार ढाल लिया था कि आपको ईश्वर (अल्लाह) के नाम के बिना कुछ न लुभाता था। आपकी प्रसिद्धि को देख कर कुछ अज्ञानी लोग आप से ईर्ष्या, द्वेष भाव रखने लगे थे, लेकिन शेख फरीद ने उनकी कभी परवाह नहीं की। आपको कई बार मारने की कोशिश भी की गई। आपके अनेक श्रद्धालु शिष्य थे, जिनमें शेख बदरुद्दीन इसहाक, ख्वाजा अहमद सविसतानी के नाम प्रसिद्ध हैं। कहा जाता है कि एक दिन आप ईशा की नमाज़ तीन बार अदा करने के बाद बेहोश होकर गिर पड़े और 'या हई या कयूम' (ऐ सदा रहने वाले अभिलाषी खुदा) कह कर 5 मुहर्रम 664 हिजरी अर्थात् 15 अक्तूबर, 1265 ईस्वी को परलोक सिधार गए। परलोक सिधारने से पूर्व आपने शेख निजामुद्दीन औलीआ को अपनी गद्दी का वारिस बना दिया था।

आपका जीवन 'सादा जीवन उच्च विचार' का जीवन्त उदाहरण है।

आपकी वाणी में इतनी मधुरता थी कि लोग स्वतः आपकी ओर आकृष्ट हो जाते थे। आप निर्धनों के लिए अपना सब कुछ दे देते थे। अपने तन पर कपड़ा तक भी न पहनते थे। नम्रता, प्रेम, दया, त्याग, सेवा, सहनशीलता के साक्षात् रूप शेख फरीद की वाणी में यह गुण यत्र-तत्र देखे जा सकते हैं। प्रभु की भक्ति में लीन रहना, दरवेश की पदवी को पाने का सरलतम मार्ग है। यही मनुष्य का चरम लक्ष्य है। गुरु के बिना इस मार्ग पर चलना कठिन है। झूठ का आश्रय लेकर इस पर नहीं चला जा सकता। अतः सत्य बोलना चाहिए।

बोलीऐ सचु धरमु झूठु न बोलीऐ ॥
जो गुरु दसै वाट मुरीदा जोलीऐ ॥3॥

फरीद जी के अनुसार, जो मनुष्य उस ईश्वर को याद नहीं करते, वे इस संसार में तो कष्ट सहते ही है, आगे भी उन्हें मुक्ति नहीं मिलती अतः मुक्ति के लिए उस ईश्वर का स्मरण करना बहुत जरूरी है।

फरीदा तिना मुख डरावणे जिना विसारिउनु नाऊ ॥
ऐथे दुख घणेरिआ अगै ठउर न ठाउ ॥106॥

फरीद जी ने इस भौतिक संसार के प्रति अनासक्त रहने और सुन्दरता की ओर से मन को हटा कर दरवेश जैसा जीवन बिताने की प्रेरणा दी है। वे कोठे, मंठप, माड़ियाँ आदि की इच्छा रखने वालों को उपदेश देते हुए कहते हैं।

फरीदा कोठे मडप माड़ीआं, उसारेदे भी गए।
कूड़ा सउदा करि गए गोरी आइ पए ॥46॥

तथा

फरीदा कोठे मंडप माड़ीआं ऐतु न लाए चितु।
मिटी पई अतोलवी कोइ न होसी मितु ॥57॥

समाज सुधारक के रूप में फरीद जी ने तत्कालीन सामाजिक विषमता को दूर करने के लिए ऊंच-नीच, अमीरी-गरीबी पैदा करने वालों को ईश्वर के दरबार में चोट खाने से सावधान रहने को कहा है।

फरीदा इकना आटा अगला इकना नाहीं लूणु ॥
अगै गए सिजापिसनु चोटां खासी कउण ॥44॥

तथा

फरीदा रोटी मेरी काठ की, लावणु मेरी भुख।
जिना खाधी चोपड़ी घणे सहणिगे दुख ॥28॥

इतना ही नहीं, वे दूसरे को अमीर देखकर सब्र, सन्तोष, सहनशीलता का उपदेश देते हैं। वे ईश्वर के दिए में ही गुजर कर लेने में विश्वास रखते हैं। बेकार में तरसते रहनें से क्या फायदा।

रुखी सुखी खाइकै ठण्डा पानी पीउ ॥
फरीदा देखि पराई चोपड़ी न तरसाए जिउ ॥29॥

फरीद जी ने दूसरों को सुधारने या उपदेश देने की अपेक्षा अपने अवगुणों को दूर करने की प्रेरणा दी है। आदर्श मानव ही दूसरे को उपदेश दे सकता है उन्होंने कहा है—

फरीदा काले मैंडे कपड़े काला मैंडा बेसु ॥
गुनही भरिआ मैं फिरां लोक कहै दरवसु ॥61॥

तथा

फरीदा जे तूँ अकलि लतीफु काले लिखु न लेख ।
आपनड़े गिरीबान महि सिरु नीवां करि देखु ॥6॥

शरीर नाशवान् है, बुढ़ापा मृत्यु का संकेत है। पचभूत शरीर अन्त में नष्ट होना है। अतः जीवन के प्रति आसक्ति नहीं होनी चाहिए। सौ वर्ष जीकर भी अन्त में मिट्टी ही होना है।

बूढ़ा होआ शेख फरीदु कंबणि लगी देह ॥
जे सऊ वरिआ भी जी जीवणा भी तनु होसी खेह ॥41॥

अतः मनुष्य को लम्बी आयु की कामना करने की अपेक्षा सत्कार्यों की ओर प्रवृत होना चाहिए। अच्छे कर्मो से ही पुण्य मिलता है, तभी ईश्वर प्रसन्न होता है। गुणहीन (बुरे) कर्मों का परित्याग करना चाहिए अन्यथा ईश्वर के सामने जाकर लज्जित होना पड़ता है।

फरीदा जिनी कंमी नाहि गुण ते कंमड़े विसारि ॥
मतु सरमिंदा थी वही सांई दे दरबारि ॥59॥

शेख फरीद की कविता भावों विचारों की गहराई के साथ कलात्मक दृष्टि से भी श्रेष्ठ रचना है। आपने अपने भावों की अभिव्यकित के लिए जिस भाषा से अनुकूल शब्द मिला उस भाषा की सीमा का अतिक्रमण करके भी ग्रहण किया।

प्रचलित अलंकारों और मुहावरों का प्रयोग आपकी कविता की अनन्य विशेषता है। यमक, उत्प्रेक्षा, उपमा, रूपक, दृष्टांत आदि अलंकारों का आपने खुलकर प्रयोग किया है। चिन्हों और प्रतीकों के माध्यम से भी आप अपने भावों को सम्प्रेत्रित करने में सफल रहे हैं। छन्द की दृष्टि से प्राकृत में गाथा, अपभ्रंश में दूहा और संस्कृत में श्लोक का विशेष स्थान रहा है। अनेक परिवर्तनों के बावजूद भी संस्कृत की जन्म भूमि पंजाब में श्लोक की आत्मा मर नहीं सकी यह किसी न किसी रूप में विविध भाषाओं में प्रयुक्त होता रहा है। शेख फरीद ने भी अपनी अभिव्यक्ति के लिए इस लोकप्रिय छन्द (सलोक) श्लोक को ही अपनाया। इसके अतिरिक्त आपने सोरठा, चौपाई, दोहा और अनेक रागों में भी पदों की रचना की है। अतः आपकी रचना (वाणी) भाव पक्ष एवं कला पक्ष की दृष्टि से उत्तम साहित्य की कोटि में आती है। संगीतात्मकता आपकी वाणी का अनन्य गुण है।

शेख फरीद का व्यक्तित्व और कृतित्व निश्चय ही प्रेरणापुंज है। आपने अपने जीवन के कटु अनुभवों का अपनी वाणी में यथार्थांकन करके जन सामान्य को सही जीवन दिशा प्रदान की। आज भी आपकी वाणी अशान्त मानव को शान्ति प्रदान करने में सक्षम है। आपकी इस अमर रचना के लिए साहित्य और मानव समाज सदा आपका ऋणी रहेगा।

शेख फरीद की सहज साधना और प्रेमाभक्ति

डा: विजयेन्द्र स्नातक

बाबा शेख फरीद को कुछ विद्वान हिन्दी और पंजाबी के आदि कवि सन्तों में स्थान देते हैं। यह कहना कठिन है कि शेख फरीद की वाणी जो हमें गुरु ग्रन्थ साहिब में 'सलोक फरीद जी' शीषक से मिलती है यह हिन्दी या पंजाबी की सर्वप्रथम रचना है फिर भी पुरानी हिन्दी के रूप में उसे स्वीकार करने में किसी को आपत्ति नहीं होनी चाहिए। लोकभाषा (मुलतानी अथवा हिन्दी) का प्रयोग करने वाले बाबा फरीद से पूर्व साहित्य अपभ्रंश का प्रयोग हो रहा था। संभवतः उस समय हिन्दी बोलचाल में आ चुकी थी, जिसका आबास नाथ-साहित्य तथा अर्धअपभ्रंश से मिल जाता है, परन्तु हिन्दी में निश्चित रूप से रचना करने वाले बाबा फरीद शकरगंज का नाम सबसे पहले आता है। यदि शेख फरीद की वाणी को प्राचीन हिन्दी का रूप माना जाय तो हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखकों का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना परमावश्यक होगा। और यदि इनकी वाणी को प्राचीन हिन्दी का गौरव प्राप्त हो सका तो इतिहास लेखकों को नये सिरे से अपनी स्थापनाओं पर विचार करना होगा।

बाबा शेख फरीद की जो वाणी आदिग्रन्थ में उपलब्ध है उसके विषय मे भी विद्वानों में बहुत मतभेद पाया जाता है। कुछ विद्वान् यह मानते हैं कि गुरु ग्रन्थ साहिब में एकत्रित बाबा शेख फरीद के सलोक वास्तव में उनके न होकर शेख फरीद सानी के हैं जो संवत् 1610 से 1671 के मध्य जीवित थे। इनकी गुरू नानक भेंट भी बताई जाती है। यदि शेख फरीद सानी को गुरु ग्रन्थ साहिब के सलोको का रचयिता माना जाय तब यह भाषा सम्बन्धी प्रश्न नहीं उठता। किन्तु अधिकाँश विद्वान् फरीद को 'गंज-ए-शकर' ही मानते हैं और उनका जीवनकाल संवत् 1230 से 1322 के मध्य स्थिर किया जाता है।

यदि हम इस विवाद को छोड़ कर बाबा शेख फरीद 'गंज-ए-शकर की ही रचनाओं को आदिग्रन्थ में संकलित मानकर विचार करें तो उनकी सहज अभिव्यक्ति पर आश्चर्य किए बिना नहीं रहा जाता। शेख फरीद के बाल्यकाल

की एक सुप्रसिद्ध किम्वदन्ती के आधार पर इनकी महजता का हमें परिचय मिल जाता है। कहते हैं कि बालक फरीद मसजिद में बैठकर अपने उस्ताद से 'नाफातिरमिजी' पढ़ रहे थे। इसी समय अपने समय के प्रसिद्ध फकीर ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी वहां आ पहुंचे। उन्होने फरीद से पूछा 'बच्चे क्या पढ़ रहे हो ?' बालक फरीद ने उत्तर दिया—'हजूरनाफे' ख्वाजा साहिब ने खुश होकर कहा 'बच्चे जिन्दगी में नफा ही नफा रहेगा। इस आशीर्वाद को पाकर फरीद ने उनका शिष्यत्व ग्रहण कर लिया और उनके आदेश से उन्होंने देश विदेश के अनेक संतों और फकीरो से भेंट की। इस यात्रा से फरीद का जीवन ही बदल गया और वे सन्त कोटि में स्वयं पहुंच गए। शेख फरीद ने उन सन्तों से ज्ञानार्जन किया था जो सूफी साधना में विश्वास रखते थे और आचरण पवित्रता जिनके जीवन का आदर्श था। सूफीमत की मान्यता को यदि दृष्टि में रखा जाये तो श्वेत ऊन के समान स्वच्छ-पवित्र शुभाचरण ही सूफी मत का मेरुदंड है। शेख फरीद ने स्वयं सूफी संकेत करके उसके सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किए हैं :

फरीदा कंनि मुसला सूफ गलि दिलि काती गुड़ु वाति ।
बाहरि दिसै चानणा दिलि अधिआरी राति ॥

अर्थात् - जो अपने कंधों पर नमाज की चटाई रखते हैं और सफेद ऊन पहनते हैं अपने हृदय में कटारी रख कर मीठी जीभ से झूठ बोलते हैं, ऐसे लोग बाहर से चमकीले दीखने पर भी अपनी आत्मा में गहन अंधकार रखते हैं। सफेद ऊन धारण करने वाले ये सूफी सन्त अपने कथ्य को रहस्यवादी तरीके से पेश करने वाले होते थे। इस्लाम धर्म के उच्च कोटि के सभी सूफी सन्त कुछ न कुछ रहस्यमय शैली से अवश्य कहते रहे हैं। किन्तु शेख फरीद ने अपनी वाणी में धर्म, दर्शन और अध्यात्म की गंभीरता रखते हुए भी गोपनीयता नहीं रखी है। फरीद की वाणी व्यवहार और आचरण की शुद्धता को बनाए रखने के लिए सहज रूप से तथ्यों का प्रस्फुटन करती है। इनकी वाणी को पढ़ने के बाद मुझे ऐसा नहीं लगा कि शेख फरीद रहस्यवादी सन्त थे। उनकी वाणी में त्याग, तितिक्षा, प्रेम, अध्यात्म और लोकाचार का ही प्राधान्य है। प्रतीकों का उपयोग तो भरपूर मात्रा में उपलब्ध होता है, किन्तु मैं इन प्रतीकों के आधार पर शेख फरीद को रहस्यवादी सूफी सन्त ठहराना उचित नहीं समझता।

बाबा शेख फरीद बड़ी सहज-सरल भाषा में अपनी मानसिक स्थिति का, जिसका संबंध ईश्वर प्रेम और ईश्वर वादियों से है, वर्णन किया है। उन्होंने धूल और फूल, रात्रि और दिन, हंस और बगुला, पेड़-कुल्हाड़ी, आदि प्रतीकों के माध्यम से संसार की आसारता और ईश्वरीय प्रेम को समझाया है।

फरीद कहते हैं, जिन्होंने ईश्वर को विस्मृत कर दिया है उनकी आकृति भयावह हो जाती है, संसार में भी ऐसे व्यक्ति यंत्रणा भोगते हैं और परलोक में भी उन्हें कोई ठिकाना नहीं मिलता :

फरीदा तिना मुख डरावणे जिना विसारिआनु नाउ।
एथै दुख घनेरिआ अगै ठहर न ठाउ ।

इस सलोक में 'अगै ठहर न ठाउ' पद भारतीय चिंतन पद्धति का ही फल है। अपने स्वरूप की प्रतीति और अपने दुष्कर्मों का बोध ही ज्ञान प्राप्ति का मार्ग है। ज्ञान प्राप्ति के लिए शास्त्र और पोथी नहीं पड़ी जाती, क्योंकि यथार्थ बोध करना होता है। यदि प्राणी यह समझ ले कि उसके कर्म ठीक नहीं हैं तो वह शीघ्र सुधार के मार्ग पर चल कर सत्पथगामी हो जाता है। कर्म की सही पहचान कठिन है, 'कि कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिता:'। शेख फरीद कहते हैं, मैं दरवेश बन कर दर-दर भटक रहा हूं, दुनिया भर में घूम चुका हूं किन्तु कहीं शान्ति नहीं मिली। सिर पर पापों और दुष्कर्मों की भारी गठरी लाद रखी है इसे कहां जा कर पटकूं। अर्थात् जब तक दुष्कर्मों की यह गठरी सिर पर रहेगी, शान्ति कैसे संभव हो सकती है—

फरीदा दर दरवेसी गाखड़ी चलां दुनियां भति।
बन्हि उठाई पोटली किथै वंआं घति ॥

संसार में सबसे तुच्छ समझे जाने वाला पदार्थ भी तुच्छ नहीं है। धूल को-रजकण-को हम अति तुच्छ समझते हैं, किन्तु वस्तुत: इसके समान महान् कुछ नहीं है जो धूल जीते जी हमारे पैरों के तले रौंधी जाती है, वही मृत्यु के बाद उपर आ जाती है, अर्थात् कब्र में दफनाते समय यही धूल हमें ढक लेती है—

फरीद खाक न निंदीए खाकू जेडु न कोई।
जीवदिआ पैरां तले मुइआ उपरि होई ॥

यौवन क्षण भंगुर है, यौवन चिरस्थायी नहीं है, किन्तु मुझे अपने यौवन के क्षय होने का कोई भय नहीं है, भय है तो केवल यही कि कहीं मेरे इस यौवन

के साथ मेरा प्रिय के प्रति प्रगाढ़ प्रेम भी क्षीण न हो जाये। क्योंकि इस प्रेम-रस (प्रेमरूपी जल) के बिना कितने ही मनुष्यों का यौवन रूपी वृक्ष सूखकर कुम्हला गया है अर्थात् हमें यौवनरूपी वृक्ष को हरा रखने के लिए प्रेम-जल का सिंचन करना आवश्यक है--

जोवन जांदे न डरां जे सह प्रीति न जाइ।
किती जीवन प्रीति बिनु सूकि गए कुमलाइ ।

शेख फरीद की प्रतीक और बिम्ब योजना पर ध्यान देने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि उन्होंने अपने चारों ओर के वातावरण से वस्तुओं, प्राणियों, तथ्यों और सिद्धान्तों का चयन किया है। उनकी प्रतीक-योजना सामान्य जन को भी ग्रहण और सुबोध प्रतीत होती है। जन-जीवन से तथ्यों को ग्रहण करने की शैली उनकी सहज साधना का ही परिणाम कहा जायेगा। कुल्हाड़ी, लोहा, आग आदि प्रतीकों के माध्यम से अपने प्रियतम के प्रेम और विरहाग्नि को फरीद ने बड़ी धार्मिक शैली में प्रस्तुत किया है—

कधि कुल्हाड़ा सिर घड़ा वणि कै सस लोहारु।
फरीदा हउ लोड़ी सहु अपना तू लोड़हि अगिआरु।

हंस, बगुला, मानसरोवर, आदि के प्रतीक इनके प्रिय प्रतीक हैं। इन प्रतीकों से वर्ण्य विषय में स्पष्टता तो आती ही है रोचकता और निदर्शना की चित्रात्मकता भी लक्षित होती है। 'हंसों को मानसरोवर में तैरता देखकर बगुलों को भी तैरने का शौक चर्राया, परन्तु बेचारे अनाड़ी बगुले तैरने का अभिनय करते ही डूब गए, उनके सिर नीचे और पैर ऊपर हो गये।" यह ज्ञानी और मूर्ख के व्यवहार का भेद स्पष्ट करने वाला सलोक है। जितनी सटीक शैली में शेख फरीद अपनी बात प्रतीकों से कह सके हैं उतनी स्पष्टता किसी शैली में संभव ही नहीं हैं। अन्योक्ति का चमत्कार तो इन प्रतीकों में है ही, साथ ही सहजता का भी चरमौत्कर्ष इसमें है –

हंसा देखि तरंदिआ बगा आइआ चाउ ।
डूबि मुए बग बपुडे सिर तल उपरि पाउ ॥

परोपदेश में पांडित्य समझने वाले उपदेशकों को शेख फरीद ने स्पष्ट शब्दों में समझाया है – हे मनुष्य, यदि तू लेखक है, बुद्धिमान् और विवेकी है तो कागज काले मत कर, दूसरों को उपदेश देने से पहले अपने गरेबां में सिर झुका कर देख कि तूं कितना सही है। सच बात तो यह है कि यदि बुरा देखने निकलें

तो अपने से बुरा दूसरा कोई नहीं दिखता। कबीर ने भी कहा है बुरा जो देखन मैं चला, मुझे से बुरा न कोय।

संतोष, अपरिग्रह, त्याग और निर्लोभता की बात शेख फरीद ने इतनी सीधी सरल भाषा में कही है कि परवर्ती सभी नीति-वचन कहने वाले उसकी आवृत्ति करते रहे हैं।

रूखी सूखी खाइ कै ठंडा पाणी पीउ।
देखि पराई चोपड़ी न तरसा जीउ॥

यह सलोक परवर्ती कबीर आदि की वाणियों में भी इसी रूप में उपलब्ध होता है।

शेख फरीद की वाणी के अनुशीलन से यह भासित होता है कि उनकी अध्यात्म चर्चा रहस्यमयी शैली की न होकर प्रेमाभक्ति की सरणि की है। प्रियतम परमेश्वर के प्रति प्रीति की ललक, विरहाग्नि का संताप, विविध रूपों में प्रियतम के प्रति समर्पण किसी रहस्य का द्योतक नहीं है। इस संसार की असारता को ध्यान में रखते हुए शेख फरीद की दृष्टि उस प्रिय की ओर लगी है जो संसार के बंधनों से मुक्ति दिला सकता है। मेरी अपनी दृष्टि में शेख फरीद लौकिक व्यवहार और आचरण की मर्यादा का निर्वाह करते हुए फकीर की जिन्दगी बसर करने में विश्वास करते थे। एकेश्वरवाद में उनकी अटूट आस्था थी और ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग कठिन योगसाधना या रहस्यवादिता न होकर सात्विक भाव से समर्पण और प्रेम मार्ग था। इसी लिए उनकी वाणी साधारण जनता में भी सहज रूप में प्रचारित हो गई। पंजाब के जनपदों में आज शेख फरीद के सलोक जन-जन में गुंजित हैं।

शेख फरीद की वाणी में वृद्धावस्था-चित्रण

डा: गुरनाम कौर बेदी

शेख फरीद बारहवीं शती के सूफी कवि हैं। आप सूफी परम्परा के ही नहीं अपितु पंजाबी साहित्य परम्परा के भी आदि-कवि हैं। श्री गुरु ग्रन्थ साहिब में जिन भक्तों की वाणी समिलित है उनमें शेख फरीद जी का विशेष स्थान है। गुरु ग्रन्थ साहिब में दिए गए शीर्षकों के अध्ययन से पता चलता है कि शेख फरीद जी को भक्तों की श्रेणी में रखते हुए गुरू साहिब ने इनकी विलक्षणता को किसी सीमा तक स्वीकार किया है और 'शेख' उपाधि-प्रदान कर उन्हें दूसरों से भिन्न होने की सूचना भी दी है। गुरु ग्रन्थ साहिब में आपके 4 शब्द और 130 श्लोक हैं जिनमें से 18 श्लोक गुरू साहिबान के हैं।

आपकी वाणी का मुख्य स्वर मृत्यु या मृत्यु के निकट की सम्भावना है। जीवन नश्वर है। काल का प्रवाह तीव्र गति से चल रहा है। जो है सो जा रहा है। यह चेतना फरीद वाणी में अत्यन्त उत्कर्ष के साथ प्रस्तुत हुई है। स्वयं के प्रति चेतना, स्वयं की पहचान मनुष्य के लिए दु:ख और संताप का कारण है। ज्यों ही मनुष्य को स्वयं का ज्ञान होता है वह स्वयं को दूसरों से अलग करके देखता है और अकेले प्राण की वास्तविकता उसके समक्ष आ जाती है।

'विधन सूही मुंध इकेली, न को साथी न को बेली'

मानव की जीवन यात्रा काल से आरम्भ होती है।

'फरीदा जि दिहि ताला कपिया' से लेकर 'जिन्द वहूटी मरद वरु लै जासी परणाइ।' तक यह यात्रा बनी रहती है अर्थात् नाभि काटने से मनुष्य की काल के अन्तर्गत जो गति आरम्भ हुई उसका अन्त मृत्यु पर्यन्त होना है। इस आरम्भ से लेकर अन्त तक का समय 'थीण' का है और सन्ताप वास्तव में होने का नहीं, काल की गति अर्थात् थीण में इस काल को फरीद जी ने लम्मी लम्मी नदी वहै 'दरिया दी ढाह' और 'कच्चे भांडे विच सिम्मदे नीर' से तुलना की है। ब्रह्मण्ड की हर वस्तु में एक गतिशीलता है। प्रत्येक वस्तु बन रही है और नष्ट हो रही है। बनने और नष्ट होने के बीच रूप परिवर्तन इसका अनिवार्य धर्म है।

वस्तु जगत में परिवर्तन निरन्तर गति में व्याप्त हैं।

चलि चलि गईयां पंखीआं जिनि वसाए तलि ।
फरीदा सरु भरिआ भी चलसि थके कवल इकल ॥

इस संसार में अगर विनाश का क्रम न हो तो सारी गतिशीलता स्थिर हो जाएगी। वास्तव में इस ब्रह्माण्ड की केन्द्रीय धुरी ही नश्वरता है, नश्वरता मृत्यु अथवा रूप परिवर्तन की प्रतीक नहीं है अपितु निरन्तर गति की सूचक है। ब्रह्मण्ड में व्याप्त नश्वरता फरीद जी को विखत बना देती है। वह संसार में विचरते हुए 'कमल के समान निरालम' हो जाते हैं। सांसारिक विषयों से विरक्ति उन्हें वैरागी बना देती है वैराग्य फरीद वाणी का व्यापक भाव है।

फरीदा किथे वैडे मापियां जिनि तू जणि उहि।
साई जाह सम्हालि जिथे ही तउ बंझणा ।

मनुष्य का अपना शरीर उसकी सबसे प्रिय वस्तु है। शरीर के अंग प्रत्यंग समय के साथ साथ क्षीण होते जाते हैं। फरीद जी इसका वर्णन बड़े विस्तार से करते हैं। फरीद वाणी में विरह का आरम्भ वृद्धावस्था के तीव्र अनुभव से पैदा होता है।

देखु फरीदा जु थीआ दाढ़ी होई भूर ।
अगहु नेड़ा आइया पिछा रहिया दूर ॥

काल जीवन के समाप्त हो जाने तक ही व्याप्त नहीं अपितु वह व्यापक स्वरूप में प्रत्येक चेतन वस्तु में विद्यमान है जहां वह मिठास को ज़हर में, सुन्दर को कुरूप में, जीवन की उमंग को अतीत की याद में, जवानी को बुढ़ापे में बदल रहा है। काल के इस दुःख को बुढ़ापे के वैराग्य और मृत्यु के त्रास के रूप में फरीद जी ने अत्यन्त सूक्ष्मता से चित्रित किया है। बुढ़ापे के वैराग्य में देख देख कर तृप्त न हुई आंखों के दर्द की कसक है।

बुढ़ा होआ शेख फरीद कंबनि लगी देह ।
जे सउ वरियां भी जीवणा भी तनु होसी खेह ॥
फरीदा सिर पलिया दाढ़ी पली मुच्छां भी पलीयां।
रे मन गहिले बावले माणहि किया रलीयाँ ॥

प्रस्तुत श्लोक ज़रा अवस्था के गहन मर्म को उजागर करते हैं। इन सभी चित्रों में काल परोक्ष रूप में विद्यमान है जो आंखों की ज्योति मिटाता है, दांतों

से चबाने की शक्ति, कानों से श्रवन शक्ति तथा पैरों से चलने का बल छीन लेता है। काल केवल मनुष्य को ही नहीं अपितु हर जड़ और चेतन, चल और अचल को इसी रूप में अपनाता है। वृद्धावस्था में यह काल वैराग्योत्पादक है। बुढ़ापे का वर्णन फरीद जी लम्बी उम्र वाले प्रौढ़ व्यक्ति के समान करते हैं। इसमें किसी प्रायश्चित की भावना शामिल नहीं। यह तो जीवन के प्रौढ़ अनुभव में से उत्पन्न मुक्तमन की रचना है। फरीद जी की रचना के प्रस्तुत अंश किसी भय-ग्रस्त स्थिति के सूचक नहीं अपितु फरीद जी की उदासीन अवस्था को प्रस्तुत करते हैं। वे बुढ़ापे से बचने का प्रयत्न नहीं करते बल्कि यह स्वीकार करते हैं कि 'जे सउ वरियां जीवणा भी तनु होसी खेह'। यह जीवन का सत्य और वास्तविक ज्ञान है। यही स्थिति उन्हें जगत से उदासीन करके प्रभु-प्रेम से जोड़ती है।

जोबन जांदे न डरां जे सहु प्रीति न जाई।
फरीदा किती जोबन प्रीति बिनु सुकि गए कुमलाइ ॥
कागा करंग ढंढोलिया सगला खाइया मासु ॥
ऐ दुइ नैनां मति छुहउ पिर देखन की आसु ॥

प्रभु-प्रेम के सम्मुख मानवीय शरीर की नश्वरता का भय समाप्त हो जाता है। बुढ़ापे की बलहीन दीन दशा की हूक निरर्थक हो जाती है न कोई जवानी से मोह रहता है न बुढ़ापे से घृणा। जब फरीद जी जवानी जाने के भय से बेपरवाही के चाव का चित्रण करते हैं तो वास्तव में वे नश्वर संसार के सभी दुःखों को पार कर जाते हैं। प्रभु-प्रेम ऐसी प्रेरक शक्ति है, जो निर्जीव, गतिहीन तथा जड़ हो चुकी जिंदगी को नए अर्थ प्रदान कर देती है। इसके द्वारा ही मनुष्य अपने अकेलेपन से निकल कर बाहरी संसार के सम्बन्धों में बंधता है। इस प्रकार वह फैलकर दरिया बनता है। फरीदवाणी का यही मानवतावादी सन्देह है और मानवीय-अस्तित्व के बन्धनों से स्वतन्त्र होने का मार्ग है। प्रभु-प्रेम-विश्व-प्रेम में ढल जाता है। इस रहस्य को शेख फरीद जी ने अन्तिम दो श्लोकों में अंकित किया है।

इकु फिका न गालाइ सभना में सच्चा धणी।
हिआउ न कैही ठाहि माणक सभ अमोलवे ॥

तथा

सभना मन माणिक ठाहणु मूलि मचांगवा।
जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कहीदा ॥

इस प्रकार शेख फरीद जी की वाणी में बुढ़ापा जीवन के एक पड़ाव पर आकर प्रत्यक्ष दिखाई देने वाली शक्तिशाली वास्तविकता के रूप में उभरा है। यह जीवन का यथार्थ है। जवानी की अवस्था का यथार्थ वर्णन आपने पूर्ण रूपेग उजागर किया है कि उम्र माया के रंगों में व्यतीत होती है। बुढ़ापे की उम्र मृत्यु की प्रतीक्षा की उम्र है और बुढ़ापा दुःख दायी है। नैतिक मूल्यों और प्रभु-प्रेम के द्वारा ही मनुष्य इस शाश्वत दुःख पर विजय पा सकता है।

सूफी जीवन-दर्शन तथा शेख फरीद

डा० साधु राम शारदा

सूफीमत आंदोलन दीर्घकालीन, बहुदेशीय तथा बहुरूपीय रहा है। हसन बसरी, राबिया, अबु बिन अदहम आदि प्रारम्भिक सूफी साधक आठवीं शताब्दी में हुए तथा डा० इकबाल बीसवीं शती में। भारत के अतिरिक्त ईराक, सीरिया, खुरासान, मिश्र, स्पेन, जावा, समाट्रा आदि अनेक देशों में इस आन्दोलन का प्रभाव रहा है। संसार त्याग एवं रहस्यानुभूति—ये दो बौद्ध तत्व ही सूफी दर्शन की अन्तरात्मा है। इस का बाहरी रूप मुख्यत इस्लामी है और गौण रूप से स्थानीय दर्शनों का भी इस पर प्रभाव है। सीरिया एवं मिश्र के मारूफ अल-करखी, अबूसुलेमान अल-दारानी, जूल नून आदि सूफी साधकों पर ईसाई मत तथा यूनानी दर्शन का प्रभाव है, खुरासानी रूप पर बौद्धिक साधना का तथा ईरानी रूप पर नास्टिक मत का। नवमी सदी के अबुयजीद के कथनों में 'मैं ही शराबी हूं' "मेरे इस चोले के भीतर वह ईश्वर ही है" तथा मन्सूर हल्लज के 'अन अलहक' (अहं ब्रह्मास्मि) में वेदांत का प्रभाव है।

इसके बाद ग्यारहवीं शती से सनातनपंथी मुल्लाओं एवं काजियों के निर्देशन में चलने वाली सरकार के अ तर्गत सनातनी सूफी मत का उद्भव तथा विकास हुआ।

अशोक के समय से बौद्ध प्रचारक पश्चिम में मिश्र देश तक पहुंचे और जहां भी गये उनकी विचार-धारा न स्थानीय चिंतन पद्धतियों को खूब आंदोलित किया। पश्चिमी एशिया में उसका सबसे पहला तथा महत्वपूर्ण प्रभाव यहूदी मत पर पड़ा जिसके फलस्वरूप ईसाई मत का उद्भव एवं विकास हुआ। तत्पश्चात् ईरान से मिश्र तक के देशों में स्थानीय रूप लिये सन्यासंवृत्तिप्रधान रहस्यवादी धाराएं चलीं, जिनके अन्तर्गत बौद्ध चिंतन से प्लैटो का दर्शन नवअफलातूनवाद के नाम से अलगजैडिया में, बुद्धमत, ईसाईमत, ग्रीक दर्शन, पारसी धर्म के सम्मिश्रण से मानीमत ईरान में, तथा स्थानीय माईथोलोजी से इन्ही चिन्तन पद्धतियों से मिश्रित नास्टिक मत मध्यवर्ती देशो में उदित हुए। इस सन्यासवृत्ति

प्रधान आन्दोलन के स्थानीय रूपों में कुछ विभिन्नताएं होते हुए इनकी अन्तर्वस्तु सांझी थी और वह थी "बौद्धमत की त्यागवृत्ति से मन की पवित्रता द्वारा समाधिस्थ होकर कष्टों से मुक्ति तथा सुख प्राप्त करना।" बुद्धमत ने इन देशों में जाकर जिस साधना का प्रचार किया वह थी— काम के त्याग से मन को पवित्र करना तथा चिंतन से सत्यज्ञान प्राप्त करना। बौद्ध धर्म अनीश्वरवादी था। स्थानीय धर्मों ने बुद्ध धर्म की साधना को ईश्वरीयकरण करके अपना लिया। बौद्धों का चरम उद्देश्य मन को 'काम' से पवित्र करके समाधि की अवस्था रूपी ईश्वर तथा उसके ज्ञान को प्राप्त करना ही चरम उद्देश्य हो गया। सामी धर्मों के प्रभाव से यह ईश्वर धीरे-धीरे इच्छायुक्त तथा सक्रिय होता गया। जब अरब के मुसलमानों ने खुरासान से स्पेन तक के देश जीत लिये और यहां के लोगों को बरबस मुसलमान बना लिया, तो सन्यासवृत्ति प्रधान यह गुह्य् साधना इस्लाम ग्रहण करने वाले इन देशों के लोगों के माध्यम से इस्लामी जीवन में प्रविष्ट हो गई। इस प्रकार सूफी दर्शन का बाहरी रूप इस्लामी है तथा इसकी अन्तरात्मा बौद्ध साधना ही है। सूफीमत इस्लाम तथा पूर्व इस्लामी सन्यास आन्दोलन के सम्मिश्रण का फल है अर्थात् पूर्व इस्लामी सन्यास आन्दोलन ने इस्लामी चोला पहन कर सूफी आंदोलन का नाम ग्रहण किया तथा इस्लाम की शिक्षा को पूर्व इस्लामी आन्दोलन की व्याख्या दे दी। उसमें समाधि की शून्य या निर्वाण की अवस्था को ईश्वर की, तथा 'काम' को 'नफ्स' की संज्ञाएं दी गई। बौद्ध दर्शन में समाधि की अवस्था में जो ज्ञान की अनुभूति होती है उसमें काम का हनन होता है इसी तरह सूफीमत में भयावह ईश्वर के साक्षात्कार करने से नफ्स जल जाता है। अनीश्वरवादी बौद्धों के अनुसार कामजन्य निजी बुराइयों का दण्ड प्रकृत्या ही कर्त्ता को मिल जाता है। ईश्वरवादी सूफीमत के अनुसार दण्ड देने वाला चेतन सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान ईश्वर है। बौद्ध धर्म के अनुसार समाधि की अवस्था में प्राप्त शुद्ध ज्ञान ही नफ्स को मारने वाला, जन्नत रूपी परम सुख देने वाला है तथा काम अर्थात् नफ्स (शैतान) के मार्ग पर चलने वाले को दुःख अर्थात् दोजख की आग में डालने वाला है। अनीश्वर-वादी बुद्ध धर्म में व्यक्ति स्वयं ही अपने आप को काम या त्याग के मार्ग पर चलाने के लिये स्वतन्त्र था संसार की कोई स्रष्टा तीव्र इच्छा से न किसी को दोजख की आग में दुःख देता था तथा न किसी को जन्नत का सुख। इसलिये बुद्ध धर्म तथा सूफीमत में एक अन्तर यह आ गया कि जहां बुद्ध धर्म में मूल बात दुःख रूपी संसार से मुक्ति प्राप्त करना था तो सूफीमत में चरम उद्देश्य ईश्वर की

प्राप्ति हो गया।

सूफियों के मैटाफिजीकल विचार नवअफलातूली हो या वेदांतिक या शरई, किसी भी दर्शन के अनुसार हों, सभी रूपो में अधिक ईश्वर के संकल्प में अपने आप को एकाग्र करके उसमें तल्लीनता प्राप्त करता है। ईश्वर के संकल्प के गुण साधक की आध्यात्मिक अनुभूति पर प्रभाव डालते हैं। ईश्वर के 'जलाल' गुण के चिंतन से इस तल्लीनता में हैबत या सहम छाया रहता है, 'जमाल' गुण के चिंतन से तहैय्यर या चकित होने की अवस्था छाई। चूंकि सूफी दर्शन का आदर्श संसार त्याग तथा ईश्वर प्राप्ति है, इस लिये उसकी साधना ईश्वरोन्मुखी है और उस की आवश्यक अवस्थाएं हैं तोबा, जुहद, फक्र, सब्र, इखलास, सिदक, खौफ, रज़ा, तवक्कुल, रिज़ा, शुक्र आदि। अपने इसी सनातन पंथीरूप को लेकर चिश्ती सम्प्रदाय के मुइनुद्दीन चिश्ती तथा सुहरावर्दी सम्प्रदाय के बहाउद्दीन ज़करिया तथा सैयद नूरुद्दीन मुबारिक गज़नवी भारत में पदार्पित हुए।

बाबा फरीद उद्दीन मसूद शकरगंज चिश्ती (1173-1265 ई.) के दादा काबुल से आकर कहितवाल ज़िला मुलतान में आबाद हुए। अठारह वर्ष की उम्र में फरीद मुलतान में शिक्षा प्राप्ति के लिये गये। बाद में सम्भवत: वे सीस्तान कंधार आदि मुस्लिम संस्कृति केन्द्रों में भी गए। फिर देहली में आकर अपने पीर मुर्शिद के पास तपस्या शुरू की। 1216 ई, में खाजा काकी से खिलाफतनामा प्राप्त करने के बाद 1216 से 1236 तक हांसी में रहे। 1235 ई. में पीर मुर्शिद की मृत्यु पर उनके सज्जादानशीन होकर थोड़ी देर देहली में और फिर हांसी तथा कहितवाल में रहे। अन्तत: 1238 ई. में अजोधन (पाकपटन) में आकर स्थायी डेरा डाल दिया, जहां वे अपनी मृत्यु पर्यन्त रहे।

तेरहवीं शती ईसवी का समय भारतीय इतिहास का वह समय है जब मुसलमान बादशाह, काजी-मुल्ला तथा सूफी फकीर सभी भारत के काफिरों की सभ्यता एवं संस्कृति का नाम व निशान मिटाने में समान रूप से क्रियाशील थे। फकीर लोक दुआ भी मानव मात्र के लिए नहीं केवल मुसलमानों के लिये ही करते थे। फरीद के दादा गुरू मुईनुद्दीन चिश्ती कहते थे सारा जीवन 'लाइल्लाह इल्लिल्लाह' कहने पर भी व्यक्ति मुसलमान नहीं होता पर 'रसूलिल्लाह' एक बार कहने पर ही मुसलमान हो जाता है। उन्होंने आगे कहा था "गुनाह इतना हानिकारक नहीं है जितना एक मुसलमान को सताना" इत्यादि। स्वयं फरीदउद्दीन ने एक हिन्दु को एक कमरे में तीन दिन तक बन्द रखा और उससे

इस्लाम कबूल करने का प्रण लेकर ही मुक्त किया। फरीद के शिष्य कलीफा निजामुद्दीन औलिया ने यह दुःख भी प्रकट किया कि कुछ भी हो हिन्दु अपना धर्म छोड़ने के लिये तैयार नहीं है। उच्च के तहसीलदार नवाहां की कहानी सर्वविदित है जिसे प्रसिद्ध सूफी राजूकताल ने स्वयं तलवार से बादशाह फिरोज तुगलक के सामने कत्ल कर दिया, क्योंकि उसने इस्लाम कबूल करने से इन्कार कर दिया था। सूफी उस समय इस्लाम प्रचार को खुदा की खिदमत समझते थे और इस में पूरी रुचि लेते थे। भारत के धार्मिक विचारों अर्थात् कुफर से प्रभावित होना तो एक ओर, उस युग में सूफी हिन्दुओं के विचार सुनने के लिये भी तैयार नहीं थे। हिन्दू घेरे से बाहर नाथपंथियों में से कभी कभार कोई इन सूफियों के डेरे पर चला जाता था तो सामान्य मुसलमान शिष्य भले उसकी बात सुन लेते थे किन्तु प्रधान सूफी उसकी बात नहीं सुनते थे। अलबत्ता ऐसे योगियों को इस्लाम कबूल करने के लिये कहा जाता था। इस काल में हिन्दू धर्म के प्रति असहनशील नीति के अतिरिक्त सूफियों की विचार-धारा पूर्णतः सनातन पंथी थी जिस के अनुसार ईश्वर व्यक्तित्वधारी तथा दुनिया से अलग है। उसकी जात (परमतत्व) संसार में व्याप्त नहीं है, उसकी जात पवित्र है। संसार तथा जीव भगवान का अंश नहीं है, अपितु उस की कृति हैं, उन के गुणों (सिफात) की अभिव्यक्ति हैं। अस्तित्व में आने से पहले जीवविचार रूप में ईश्वर के मन में विहित था अतः अन्त में इसी रूप में लौट जाएगा। मानव का तात्विक अस्तित्व कुछ नहीं है। सनातन पंथी सूफी ईश्वर से पति पत्नी सम्बन्ध से नहीं मिलता, सेवक एवं स्वामी भेद से ही सजदा करता है। धार्मिक असहिष्णुता तथा सनातन पंथी सूफी मत का यह काल चौदहवीं शती तक बना रहा जो हिन्दुओं की दृष्टि से घोर कलियुग था। तैमूर के आक्रमण के बाद पन्द्रहवीं शती में परिस्थितियां बदलीं। तैमूर ने देहली तक के हिन्दुओं अथवा मुसलमानों दोनों का समान रूप से कत्लेआम किया, लूटा तथा उसके सिपाहियों ने दोनों की स्त्रियों को समान रूप से अपमानित किया। भारत में मुसलमानों का ईश्वर प्रिय होने का दावा समाप्त हो गया। उसके बाद राज्य प्राप्त करने के लिए जो संघर्ष हुए उस में मुसलमान अभ्यर्थियों ने हिन्दुओं से भी सहायता ली। हिन्दू जमींदारों तथा सरदारों का प्रभुत्व बढ़ा। इन संघर्षों के अन्तर्गत राजनीति में धार्मिकता का स्थान सांसारिकता ने ले लिया। मुल्ला काजी का जोर जाता रहा। ऐसी ही परिस्थितियों में वैष्णव वैदांतिक भक्ति का प्रचार हुआ जिसमें कबीर के प्रबल व्यक्तित्व ने सब से अधिक कार्य किया। भारत के तत्कालीन

वातावरण में वेदांत का वही प्रभाव था जो आज समाजवाद का है। सूफियों ने भी उपनिषदों का अध्ययन शुरू किया। अजोधन भी एक ऐसा केन्द्र बन गया जहां भारतीय तथा इस्लामी दोनों चिंतन धाराओं का अध्ययन किया जाने लगा। असहिष्णुता समाप्त हो गई। व्यक्तित्वधारीनिरपेक्ष अल्लाह वेदांत के प्रभाव के कारण अपने तत्व से घट-घट में व्याप्त हो गया। साधक कान्तारूप में कत रूपी ईश्वर से मिलने की साधना करने लगे। ईश्वरमय रूप से आनंदरूप हो गया। वैष्णव वैदांतिक भक्ति के प्रभाव का यही पहला चरण था। भारतीय भक्ति धारा के शेष तत्व बाद के सूफियों की वाणीयों में परिलक्षित होते हैं। आदिग्रन्थ मे संकलित फरीद की वाणी में वैष्णव वैदांतिक भक्ति का प्रभाव है, जो कबीर के समय से शुरू हुआ। इस के अतिरिक्त इस में ईजादी सूफीमत के तत्व हैं। अत: यह वाणी भारतीय भक्ति के सूफीमत आंदोलन पर पड़े प्रभाव के प्रथम चरण अर्थात् पन्द्रहवीं सोलहवीं शती की ठहरती है। तेरहवीं शती के फरीद का ईश्वर दुनिया से अलग है, व्यक्तित्वधारी है। वह तत्व रूप से संसार में व्याप्त नहीं है। वह फरीद ईश्वर से कान्ता रूप से मिलन प्राप्त करने का साधन नहीं करता, वह गैर मुसलमानों, पापियों एवं शत्रुओं में उस एक ईश्वर को व्याप्त नहीं मानता। वह उनके प्रति सहिष्णु नहीं था। वह इस्लाम का प्रचारक था तथा तबलीकी काम में रुचि रखता था। इसके विपरीत आदिग्रंथ के फरीद का ईश्वर सर्वव्यापक है, और जीव ईश्वर का अंश है।

बसै रब हिआलिए जंगल किआ ढूंढेहि।
इकु फिक्का न गालाइ सभना मै सच्चा धनी॥

जीव उसकी पत्नियां हैं और साधक फरीद कांता रूप में ईश्वर कंत को प्राप्त करने की साधना करते हैं—

जिन् वेसी शहु मिलै सोइ वेस करो।
कवन सुवेस हौं करि जितु वेसि आवै कंत।
अज न सुती कंत सौ अंग मुड़े मुडि जाए॥

संसार दु:खों का घर है, इसके सुख भ्रममूलक हैं जो ऊपर से तो चीनी जैसे मीठे हैं, किन्तु वस्तुत: अन्दर से पूरी ज़हर की गन्दलें हैं—

फरीदा मैं जाणिआ दु:ख मुझको दु:ख सवाइए जगि।
उच्चे चढ़ कै देखिआ ता घरि घरि एहा अग ॥81॥
फरीदा इह विस गंदला धरीआं, खंडु लिवाड़ ॥37॥

इसके अतिरिक्त सांसारिक प्राप्तियां क्षणभंगुर हैं, और जिन्होने इन्हें प्राप्त किया है उन्हें भगवान खूब दण्ड देगा, यमराज उनकी पिटाई करेगा—

जिन्हां खाधी चोपड़ी घणे सहनिगे दुख ॥24॥
फरीदा इकना आटा अगला इकना नाही लोण।
अगै गए सिजापसनि चोटा खासी कौण ॥44॥

यदि संसार में कुछ सुख मान भी लिए जाएं और इन से कुछ आनंद या मिठास भी मिलती हो तो भी वे सुख भगवान की तुलना में कुछ भी नहीं है। वे उसकी बराबरी नहीं कर सकते—

फरीदा सकर खण्ड निवातु गुड़ माखिओं माझा दुधु।
सभै वस्तु मिठीआं रब ना पुजनि तुध ॥27॥

ईश्वरानुमति में ईश्वर को अमृत स्वरूप या मीठा मानना भी भारतीय प्रभाव है। ईजादी शकरगंज का ईश्वर जाहो-जलाल तथा साधक पर हैवत पैदा करने वाला हैं। इस प्रकार आदिग्रन्थ में फरीद संसार का एक दम त्याग करने तथा भगवान में चित लगाने का उपदेश देते हैं—

फरीदा मंडप माल न लाइ मरग सताणी चिति धरि।
साई जाइ समालि जिथै ही तउ वंञणा ॥58॥
फरीदा कोठे मंडप माडीयां, एतु न लाए चित्त ॥57॥
फरीदा पाड़ि पटोला धज करी कंबलड़ी पहिरेउ ॥103॥

जहां तक सांसारिक व्यवहार का संबंध है फरीद की वाणी में वैष्णव भक्त नारद के निम्नलिखित भक्ति सूत्र का आदर्श है—

शौचदयास्तिक्यादिचारित्र्याणि परिपालनीयानि ॥78॥

अर्थात् (भक्ति के साधक को) अहिंसा, सत्य, शौच, दया, आस्तिकता आदि आचरणीय सदाचारों का भली भांति पालन करना चाहिये।

इसके अनुसार शील आचरण यही है कि दूसरों से मीठा व्यवहार करो—

फरीदा थीउ पवाहि दभु,
जे सांई लोडहि सभु॥
इक छिजाहि बिआ लताड़ीअहि,
ता सांई दै दरि वाड़ीअहि ॥16॥

और जो कोई आपसे दुर्व्यवहार करे तो उसे क्षमा कर दें—

फरीदा जो तै मारनि मुक्कीआं तिन्हां न मारे घुंमि ।
आपनड़े घर जाइए पैर तिन्हां दे चुमि ॥7॥

इस प्रकार विनम्रता एवं क्षमा के गुणों को धारण करके ईश्वर का भजन करो :

निवणु सु अखर खवणु गुण जिहबा मणीआं मंतु ।
ए त्रै भैणे वेस करि ता वसि आवी कंत ॥127॥

सार रूप में यही आदिग्रन्थ के फरीद के जीवन का दर्शन है। नफस को मारने के लिये कठिन तपस्या, मौन तथा दोजख का भय देना, शैतान के वरगलाए द्वारा ईश्वर की भक्ति की बात न मानना आदि कुछ ईजादी सूफीमत के तत्व भी आदिग्रन्थ के फरीद की वाणी में उपलब्ध हैं। यथा—

फरीदा वेख कपाहै जि थीआ,
जि सिरि थीआ तिलाह ।
कमादे और कागदे
कुन्ने कोईलिआह ॥
मंदे अमल करेंदिआं ।
एह सजाइ तिनाह ॥49॥

वेखहु बन्दा चलिआ चहु जणिआ दै कन्हि ।
फरीदा अमल जि कीते दुनी विचि दरगहि आए कंम ॥100॥

जो कुछ इस फरीद द्वारा भारतीय भक्ति धारा से अभी नहीं सीखा गया था, वह यह था कि दुनिया त्यागने की आवश्यकता नहीं है, दुनिया की मोह ममता तथा हौमे के त्यागने की आवश्यकता है।

फरीद काव्य में नैतिकता

डा: निर्मल कौशिक

नैतिकता मानव में सद्वृत्तियों एवं सद्गुणों का विकास करती है। सदाचार मानवीयता का प्रथम गुण है। आदर्श जीवन के लिए सदाचारी होना अनिवार्य है। अच्छे आचरण वाला व्यक्ति ही समाज में आदर पाता है। निश्चयात्मक रूप से नैतिकता ही मानव को सद्व्यवहार, नियम, अनुशासन, परोपकार, दया क्षमा, धैर्य जैसे सद्गुणों की ओर अग्रसर करती है। अत: नैतिकता मानव को सही जीवन दिशा प्रदान करती है। मानव को अपने कर्त्तव्यों सहयोग, सेवा त्याग परोपकार, प्रेम आदि के द्वारा दूसरों के प्रति उदार हो जाता है। "परोपकाराय सतां विभूतय:" की उक्ति के अनुसार (सज्जनों के ऐश्वर्य परोपकार के लिए होते हैं) उसका सब कुछ दूसरों के लिए हो जाता है। वह अपने और पराए का अन्तर भूल जाता है। सारा विश्व उसका अपना हो जाता है। अपने और पराए का भेद मिटा कर वह उदार मन से विश्वबन्धुत्व की कल्पना को साकार करता है। कहा भी है—

अयं निज: परोवेत्ति गणना लघुचेसाम् ।
उदार चरितानाम् तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥"

(अर्थात् यह मेरा है, वह पराया है, ऐसा तुच्छ हृदय वाले ही सोचते हैं। उदार हृदय वालों के लिए तो सारी पृथ्वी ही परिवार के समान है।) यही प्रवृत्ति उस महापुरुष के जीवन का अंग बन जाती है। उसका व्यवहार असाधारण (विशेष) हो जाता है। वह सदा शुभ, कल्याणकारी एवं परोपकार की भावना से अपने को दूसरों के प्रति समर्पित समझता है। वह दुर्गुणों से बच कर सद्गुणों की ओर प्रवृत्त होता है। अत: नैतिकता मनुष्य को संयमित और नियोजित कर श्रेष्ठतम मानव बनने के मार्ग की ओर अग्रसर करती है।

नैतिकता के परिप्रेक्ष्य में जब हम फरीद काव्य का अध्ययन करते हैं तो ऐसा लगता है कि मानों फरीद का सम्पूर्ण काव्य नैतिकता को ही आत्मसात् किए हुए है। शेख फरीद स्वयं नैतिक गुणों की तपो मूर्ति थे। उन्होंने अपने काव्य में

भी कट्टरवादी अथवा संकीर्ण दृष्टि कोण नहीं अपनाया। उन्होंने तत्कालीन प्रचलित सम्प्रदायों और धर्मों का विरोध करने की अपेक्षा उनके आदर्शों को अपनाकर मानव को एक ऐसा मार्ग दर्शाया जिस पर चल कर वह निर्विरोध सारे विश्व को जीत सकता है। शेख फरीद ने अपनी कविता द्वारा पारस्परिक प्रेम, त्याग, दया, सेवा, बलिदान, उपकार और सहनशीलता का सन्देश दिया। मानव प्रेम और विश्वबन्धुत्व की भावना को जन-जन तक पहुंचाया। इन्हीं गुणों के कारण शेख फरीद अपने काव्य को जन-जन के हृदय में बिठा सके। उनका काव्य उनके कटु एवं यथार्थ अनुभवों की अभिव्यंजना है। यही कारण है कि उसका काव्य नैतिकता की कसौटी पर आज भी पूरा उतरता है और आज के जीवन में भी उतना ही सार्थक है। इससे महान् और गुण क्या हो सकता है कि आत्म-संयम और इन्द्रीय निग्रह कर मनुष्य अपने क्रोध को वशीभूत कर ले और बुरा करने वाले का भी भला करे।

फरीदा बुरे दा भलाकर, गुस्सा मन न हडाइ ॥
देही रोग न लगई, पलै सभ किछु पाइ ।।78।

प्रेम की दुहाई देने वालों ने प्रेम के महत्व को जाना है तो आत्म बलिदान देकर। आत्मसमर्पण प्रेम की प्रथम शर्त है। अपने इष्ट को पाने हेतु अगर प्राण भी देने पड़ें तो भी कम हैं। कबीर जी ने लिखा है—

प्रेम न बाड़ी ऊपजे, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा परजा जेही रुचे, सीस देई ले जाय ॥

फरीद जी ने भी प्रेम के इस महत्व का अपने काव्य में अभिव्यक्त किया है—

जोबन जांदे न डरां, जे सहु प्रीति ना जाई ॥
फरीदा किती जोबन प्रीति बिनु सुकि गए कुमलाई ॥34॥

इतना ही नहीं प्रेम की ललक इतनी तीव्र हो जाती है कि आंधी, तूफान वर्षा में भी नहीं दबती। अपने अन्तर में उठे संशय का उत्तर निम्न पंक्तियों में देखें—

फरीदा गलीए चिकड़ु दूरि घरु नालि पिआरे नेहु ॥
चलां त भिजै कंबली, रहां त तुटै नेहु ॥28॥
भिजउ सिजउ कंबली, अल्ह वरसउ मेहु ॥
जाइ मिला तिना सजणा तुटउ नाहि नेहु ॥24॥

अपने आप को ऊंचा उठाने, महान् बताने के लिए दूसरों के नहीं अपने अवगुणों को देखना चाहिए। अपने को बड़ा कहने वाला व्यक्ति अहंकारी तो हो सकता है महान् नहीं। फरीद जी के शब्दों में अपने गरेबां में झाँक कर देखो (आत्मा लोचन करो)

फरीदा जे तू अकलि लतीफु, काले लिखु न लेखु ।।
आपनड़े गिरीबान महि सिर नीवां करि देखु ।।6।।

आत्मलोचन के लिए आत्म नियन्त्रण का होना जरूरी है जो मनुष्य दूसरों की ओर देख कर उनसे अपनी तुलना करता रहता है, वह हमेशा दुःखी होता है। उसमें सब्र, सन्तोष व सहनशीलता का अभाव रहता है। यह गुण तभी आ सकते हैं अगर मनुष्य अपने आप पर नियन्त्रण रख सके। ईश्वर के दिए हुए साधनों पर ही विश्वास रखे दूसरों के एश्वर्यो की ओर देख कर मन न ललचाए।

रुखी सुखी खाइके, ठंडा पाणी पीउ ।।
फरीदा देख पराई चोपड़ी, न तरसाए जीउ ।।29।।

इतना ही नहीं

फरीदा मनु मैदानु करि टोए टिबे लाहि ।।
अगै मूलि न आवसी दोजक संदी भाहि ।।74।

आत्म नियन्त्रण करने वाला व्यक्ति कभी दूसरे पर निर्भर नहीं करता और न ही करना चाहता है। आत्म नियन्त्रण से ही संयमित होने की आदत बनती है। आत्म संयम और आत्म निर्भरता दोनों का काफी निकट सम्बन्ध है। सदाचारी मानव में इन दोनों गुणों का होना बहुत जरूरी है। 'पराधीन सपनेहु सुख नाहिं' की उक्ति के अनुसार मानव दूसरे की अधीनता स्वीकार नहीं करता। वह इससे तो मृत्यु को बेहतर समझता है। फरीद जी ने भी पराधीनता को नकार कर अपने इष्ट से स्वाधीनता पूर्ण जीवन की मांग की है।

फरीदा बारि पराइऐ बैसणा सांई मुझे न देहि ।।
जो तू ऐवैं रखसी, जीउ सरीरहु लेहि ।।42।।

सदाचारी मनुष्य आडम्बरों से मुक्त जीवन में विश्वास रखता है। कपटी मनुष्य को कभी भी अपने लक्ष्य में सफलता नहीं मिल सकती। जो मनुष्य (कपटी वेश में) आडम्बर युक्त पूजा करते हैं, उन्हें कभी भी ईश्वर की प्राप्ति

नहीं होती । एक कपटी भक्त का बगले के रूपक में चित्रण देखें —

फरीदा दरी आवै कंने बगला बैठा केल करे ॥
केल करेंदे हंस नो अचिंते बाज पए ॥99॥

अज्ञानी मानव उस ब्रह्म को बाहर बन में ढूंढता है जब कि वह उसके अन्दर ही विद्यमान है । जप तप करके अपने शरीर से अन्याय कर रहा है मगर तो भी उस प्रभु की प्राप्ति नहीं हुई ।

फरीदा तन सुका पिंजर थीआ, तलीआ चूंडहि काग ॥
अजे सुख न बाहुड़िउ, देख बन्दे दे भाग ॥90॥

फरीदा जंगलु-जंगलु किआ भवहि वण कंडा मोडहि ॥
वसी रबु हिआलिअै, जंगलु किआ ढूंडहि ॥19॥

उदार मना सदाचारी मानव सब में उस एक ईश्वर को ही देखता है, वह किसी को बड़ा छोटा नहीं समझता । उसके विचार में हर मनुष्य को अपने कर्मों का फल अपने आप मिल जाता है । अगर कोई आदमी किसी से विषमता भाव रखता है तो उसे उसका फल अवश्य मिलेगा । फरीद की दृष्टि में कोई भी वस्तु इस संसार में तुच्छ नहीं है । वह तो खाक (धूल) को भी महान् मानते हैं ।

फरीदा खाकु न निंदीअै खाकु जेडु न कोइ ॥
जीवदिआं पैरां तले मुइआं उपरि होइ ॥17॥

फरीदा रोटी मेरी काठ की लावणु मेरी भुख ।
जिना खादी चोपड़ी घणे सहनिगे दुख ॥28॥

सभी प्राणियों को एक समान जान लेने के बाद आत्म भाव पैदा हो जाता है, फिर मनुष्य किसी का बुरा कैसे सोच सकता है । फिर तो उसमें ऐसे गुण आ जाते हैं कि अगर कोई उस पर प्रहार भी करता है तो वह उसका उत्तर देना ठीक नहीं समझता । वह महानता की उस अवस्था पर पहुंच जाता है कि क्षमा उसका आभूषण बन जाता है । वह उसे अज्ञानी समझकर क्षमा कर देता है । फरीद जी के अनुसार —

फरीदा जो तै मारनि मुकीयां तिना न मारे घुंमि ॥
आपनड़े घरि जाईअै पैर तिनां दे चुंमि ॥7॥

नम्रता सदाचारी मनुष्य का सर्वोपरि गुण है । लोग भले ही उसे महान् कहें मगर वह अपने आपको सदा अवगुणों से भरपूर और एक सामान्य जीव से

अधिक कुछ नहीं समझता। अहं को पास न आने देना ही नम्रता की कसौटी है। फरीद आजीवन इससे बचे रहे। लोग उन्हें दरवेश कहते थे लेकिन उन्होंने अपने आपको इस भयंकर रोग से बचाए रखा। वे अत्यन्त नम्रता से कहते हैं--

फरीदा काले मैंडे कपड़े काला मैंडा वेसु।
गुनही भरिआ मैं फिरां लोक कहै दरवेसु ।91।

सांसारिक नश्वरता का चित्रण करते हुए अनेक सिद्ध साधक पुरुषों ने इस संसार से लिप्त होने की बात कही है। यही कारण है कि सभी महापुरुष अपने अनुभव के बल पर मनुष्य को अच्छाई और सचाई के मार्ग पर चलने का सन्देश देते हैं। फ़रीद जी ने भी अपने काव्य में संसार की नश्वरता का चित्रण किया है। वहाँ उसका प्रयोजन भय पैदा करना नहीं संसार से पलायन की प्रेरणा देना है। उनका अभिप्राय तो अच्छे कामों की ओर उन्मुख करना है। वे विलासिता से विमुख होने की ओर संकेत करते हुए कहते हैं--

फरीदा कोठे मंडप माड़ीआं एतु न लाए चितु।
मिटी पई अतोलवी कोइ न होसी मितु ।।57।।

अन्यत्र वे लिखते हैं

जो जाणा मरि जाईऐ घुंमि न आईऐ।
झूठी दुनिआँ लगि ना आप बजाईऐ।

फरीद जी अपने युग के प्रतिनिधि कवि थे उन्होंने अपनी लेखनी के द्वारा जनता को सन्मार्ग दर्शाया। अज्ञान के तिमिर को दूर करके ज्ञान की ओर प्रेरित किया। इसके लिए किसी न किसी गुरू या पीर की शरण में जाना पड़ता है। गुरू ही माया अथवा विषय विकारों के पर्दे को हटा कर और ज्ञान का दीपक जला कर मनुष्य के लिए सदाचार का पथ आलोकित करता है जिस पर चल कर मनुष्य सांसारिक कष्टों से मुक्ति पा कर अपने जीवन को सफल करता है। गुरू ही ईश्वर प्राप्ति में सहायक है। कबीर जी ने कहा है--

कबिरा ते नर अन्ध है गुरु को कहते और।
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहीं ठौर ॥

फरीद जी ने भी गुरू की शरण में जाने और गुरू के प्रति श्रद्धा अभिव्यक्त करने वाले व्यक्ति को संकटों से मुक्त कहा है। गुरू ही इस भव-सागर से पार लगा सकता है। जो गुरू की शरण में जाते हैं और उसे अपनी सेवा से प्रसन्न करते

हैं उन्हें किसी प्रकार की आंच नहीं आती ।

खड़ा पुकारे पातणी वेड़ा कपर वाति ।
जो जन पीर निवाजिआ तिनां अंच न लाग ।।

फरीद जी ने सब्र और सन्तोष को अच्छे गुणों में सर्वश्रेष्ठ माना है। लेकिन यह भावना तभी आ सकती है अगर मनुष्य ईश्वर की सर्वोपरि मान कर उसी की इच्छानुसार प्रसन्न रहे। उसका भाणा माने और उसकी रज़ा में राज़ी रहे। उसकी इच्छा के बिना पत्ता तक नहीं हिल सकता फिर मनुष्य बेचारे का क्या वश चलता है। इसी से मनुष्य में सहनशीलता और सन्तोष की भावना प्रबल होती है। गुरु नानक देव जी ने कहा है--

किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि ।।
हुकम रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ।।

फरीद जी ने भी मनुष्य को उसी की इच्छा के अनुकूल चलने का मार्ग दर्शाया है। उसके दिखाए मार्ग पर चलने से मनुष्य कभी भटक नहीं सकता। इतिहास साक्षी है जिसने भी अपने आपको उसकी (प्रभु की) रज़ा के आगे समर्पित किया उसी को सांसारिक विषयों से मुक्ति मिली। वह सादगी से जीवन यापन करके भी महानता को प्राप्त हुआ। वही सच्चा मार्ग है। साधक के लिए उसकी इच्छा (हुकम) ही सर्वोपरि है। फरीद जी के अनुसार--

कंधी वहण ना ढाहि, तउ भी लेखा देवणा ।।
जिधरि रब रजाइ, वहणु तिदाऊ गउ करे ।।73।।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम देखते हैं कि फरीद जी ने अपने काव्य में उन सभी मानवीय गुणों को भली प्रकार संजोया है जो एक आदर्श मानव के लिए अनिवार्य होते हैं। उन्होंने अपनी कविता में कटु से कटु सत्य को भी इतनी नम्रता और मधुरता से प्रस्तुत किया है कि कहीं भी उपदेशात्मक नीरसता का आभास नहीं होता। अपने अनुभवों की अभिव्यक्ति भी उनकी कविता में सहज ही हो गई है। वे स्वयं नैतिक गुणों की प्रति मूर्ति थे। सादा जीवन उच्च विचार' के धारक शेख फरीद का जीवन नैतिक गुणों से ही ओत प्रोत था। उनके नैतिक गुण व्यष्टि से समष्टि की ओर अग्रसर होते हैं। उनके अनुसार अगर प्रत्येक व्यक्ति अपने अवगुणों को देख कर अपनें को सुधार ले तो सारे समाज का सुधार करने की क्या ज़रूरत है। समाज स्वतः सदाचारी हो जाएगा।

फरीद व्यक्तिगत चेतना पर बल देते हैं। वे मनुष्य को आत्मबोध के लिए प्रवृत्त करते हैं। आत्मालोचन सबसे अनिवार्य तत्व है आत्मबोध के लिए। मनुष्य दूसरों की अपेक्षा अपनी आलोचना स्वयं करे। अपने अवगुणों को दूर करे। अहं से दूर रहे। सत्य का मार्ग अपनाए। हिंसा का मार्ग त्यागे। बुरे के साथ भी भला करे। इसी से मनुष्य अपने को अन्य मनुष्यों से ऊपर उठा सकता है यही गुण सदाचार की नींव बनते हैं, जिस पर नैतिकता के आदर्शों का प्रासाद निर्मित होता है। तब ईश्वरीय प्रेरणा से मनुष्य नि:स्वार्थ भाव से परोपकार, क्षमा, दया, प्रेम, नम्रता, त्याग, सन्तोष, धैर्य, सहनशीलता, अहिंसा, सेवा आदि मानवीय गुणों से अलंकृत हो समाज में आदर पाता है। उसका सदाचार पूर्ण जीवन दूसरों के लिए आदर्शबन जाता है। लोग अच्छाई का अनुसरण स्वयं करने लगते हैं क्यों कि सत्य स्थाई होता है। मानव प्रेम ही ईश्वरीय प्रेम है। अत: मनुष्य मात्र के प्रति सद्‌वृत्ति रखना ही सच्ची भक्ति है। यही नैतिकता का मुख्य आधार है। ऐसे आदर्शों को अपनाने वाला व्यक्ति ही सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक ख्याति प्राप्त कर सकता है। इसी से विश्व बन्धुत्व एवं मानव-एकता की भावना पनपती है। फरीद जी की कविता इन्हीं नैतिक आदर्शों का प्रेरणा स्रोत है। फरीद जी ने नितान्त निजी अनुभवों से पूर्ण नैतिक आदर्शों को ही अपने काव्य में अभिव्यक्त किया है जो आज भी भटके हुए लोगों का पथ-प्रदर्शन करते हैं।

बाबा फरीद और संत कबीर : एक तुलनात्मक दृष्टिकोण

डा. रत्न सिंह जग्गी

बाबा फ़रीद और सन्त कबीर, इन दोनों महानुभावों की वाणी गुरु ग्रन्थ साहिब' में संकलित है। कबीर की वाणी अपेक्षाकृत अधिक है। इन दोनों की वाणियों को 'गुरु ग्रन्थ साहिब' में संकलित करने का गौरव प्रदान किया गया है, उससे सुस्पष्ट है कि पंचम गुरु अर्जुन देव की उस कसौटी पर दोनों समान उतरे हैं, जिस पर परख कर उन्होंने संतों और भक्तों की वाणियों को 'गुरु ग्रन्थ साहिब' में सम्मिलित किया था। इस दृष्टि से दोनों का किंचित् तुलनात्मक अध्ययन बड़ा रोचक विषय है। वस्तुत: दोनों महान् साधक अपने अपने क्षेत्र की साधना-प्रणालियों के प्रवर्तक हैं। फरीद सूफी थे और इन का जन्म पश्चिमी पंजाब में सं० 1231 वि. में हुआ था। कबीर ज्ञानमार्गी थे और इनका जन्म पूर्वी उत्तर प्रदेश में सं. 1455 वि. में हुआ था। दोनों का यश दूर दूर तक फैला हुआ था और भारत के धार्मिक इतिहास में दोनों का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। दोनों सचमुच युग-पुरुष थे।

फ़रीद उस समय में हुए थे, जब मुसलमान आक्रमणकारी विजयी के रूप में भारत में प्रवेश कर रहे थे। मुसलमान विजेताओं का मुख्य उद्देश्य भारत को विजय करना था और तत्पश्चात् यहां की जनता को इस्लाम मत का अनुयायी बनाना था। अत: दूसरा उद्देश्य गौण महत्व रखता था और प्रथम का अनगामी होकर चला था। उस समय में धर्म-परिवर्तन के लिए इतने कष्ट नहीं ढाहे जाते थे, जिन का विवरण परवर्ती विदेशी मुसलमान शासकों के इतिहास-ग्रन्थों में उपलब्ध है। उस युग में धर्म-प्रचार का कार्य-भार अधिकतर मुल्ला, काज़ी और सूफी लोग संभालते थे। शेख़ फरीद भी ऐसे ही एक सूफी प्रचारक साधक थे। विजयी वर्ग से सम्बन्धित होने के कारण उन के प्रचार मार्ग में न सरकार द्वारा और न ही समाज के द्वारा कोई अवरोध था। फलत: उनके धर्म-प्रचार का कार्य सहज में चलता रहता था। कबीर के जन्म-काल तक मुसलमानों का

शासन पूर्वरूपेण स्थापित हो चुका था। तब अनेक प्रकार के मत-मतांतर और साधना-पद्धतियां प्रचलित थीं। लोग वाह्याडम्बरों को ही धर्म समझ बैठे थे। सभी 'पेड़ छाड़ि डालि लगे' हुए थे। कबीर को न राज्य से समर्थन प्राप्त था और न समाज के अभिजात वर्ग से ही उन्हें कोई प्रोतसाहन मिला था, परन्तु वे अपनी धुन के आदमी थे, अपने कार्य में अविचल रूप में मगन रहे। उन्हें यह जानने की अपेक्षा ही नहीं थी कि लोग उन के सम्बन्ध में क्या सोचते हैं। अंतत: उन्होंने अपनी कठोर और निष्काम साधना से समाज के कालुष्य को धो डाला।

गुलाम बादशाह बलबन के दामाद होने के कारण फरीद को राज्य में विशेष सम्मान प्राप्त था। वे विद्वान्, अनुभवी, शरीअत के पाबन्द, नमाज़ी और तपस्वी महानुभाव थे। उनका व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली, विनम्र और उदार था। वे अत्यन्त मधुरभाषी थे, इसीलिए उनका एक नामान्तर 'शकर गंज' भी था। फलत: उनका हिन्दू जनता पर बहुत प्रभाव था। उन को मुसलमान बनाने का जो कार्य राज्य सरकार न कर पाई, उस को फरीद ने अपने मधुर वचनों के द्वारा सहज में ही कर दिया। गांव के गांव मुसलमान हो गए, यह उन के अद्वितीय व्यक्तित्व के प्रभाव का फल ही माना जाएगा। इस प्रभाव का एक कारण यह भी था कि वे किसी अन्य धर्म के दोषों की ओर किसी का ध्यान न दिला कर केवल अपनी साधना-प्रणाली के महत्व से ही अपने अनुयायियों को परिचित कराते थे। उनकी समस्त वाणी में अन्य मत-मतांतरों के खंडन में एक पंक्ति भी लिखी हुई नहीं मिलती।

फरीद के विपरीत कबीर 'मस्त मौला' थे, मलंग साधु, न घर न घाट, बस निकल पड़े थे अपने मत का प्रचार करने—

हम घर जालयो आपना, लिया मुहाड़ा हाथि।
अब घर जालौं तास का, जो चलै हमारे साथि।।

कबीर अक्खड़ थे। यह अक्खड़ता केवल पाखंड-खंडन के समय ही सक्रिय होती थी, भक्ति के अवसरों में वे अत्यन्त विनम्र थे —

कबीर कूता राम का, मुतिया मेरा नाउं।
गले राम की जेवड़ी, जित खेंचे तित जाउं।।

कबीर निम्न वर्ग के थे। उन्हें निम्न जातियों से समर्थन अवश्य प्राप्त था, परन्तु बनारस के दिग्गज पंडितों ने उन का कठोर विरोध किया, कभी-कभी इस विरोध ने घोर रूप धारण कर लिया। इन से जूझते जूझते कबीर कुछ

चिड़चिड़े भी हो गए थे।

फरीद सूफी होते हुए भी कट्टड़ मुसलमान थे। उनके पूर्ववर्ती सूफियों ने ईरान आदि देशों में जो धार्मिक क्रांति लाने का प्रयास किया था, वह तत्कालीन शासकों के द्वारा कठोरतापूर्वक दबा दिया गया था। फलत: सूफी साधकों ने पुन: शरीअत के प्रति निष्ठा की भावना प्रकट करनी प्रारम्भ कर दी थी। फरीद असहिष्णुता एवं अनुदारता के ऐसे ही युग में अवतरित हुए थे, अत: उनकी वाणी में शरीअत के प्रति पूर्ण निष्ठा दिखाई पड़ती है, नमाज़ न पढ़ने वाले को उन्होंने 'कुत्ता' तक कह डालने में संकोच नहीं किया है—

फरीदा बेनिवाजा कुतिआ एह न भली रीति।
कब ही चलि न आइआ पंजे वखत मसीति॥

इनके विपरीत कबीर आज़ाद व्यक्ति थे। उन्होंने परम्परा का विरोध करते हुए नि:शंक घोषणा कर दी थी—

पंडित मुला जो लिख दिया।
छाडि चले हम कछु न लिया॥

वे परम्परा के उसी अंश को ग्रहण करते थे, जो उनके अनुभव की कसौटी पर खरा उतरता था। वे धार्मिक एवं सामाजिक रूढ़ियों के कटु आलोचक थे, किन्तु मानवता के विकास एवं उन्नति के लिए उन्हें जो कुछ जहां कहीं से भी मिला, उसे शिरोधार्य किया। 'सार सार को गहि लए' उक्ति से उनका तत्सम्बंधी मन्तव्य स्पष्ट हो जाता है। इस प्रकार उन के सिद्धान्त किसी विशेष धर्म की स्थापना नहीं करते। वस्तुत: उन का धर्म 'सहज-धर्म' था जिस में सभी के लिए कल्याणकारी अंश विद्यमान थे।

निस्संदेह दोनों साधक अपने समय में विपुल जन समुदाय के श्रद्धेय थे। क्या उन दोनों को ही लोक-नायक कहा जा सकता है? लोक-नायक की यह विशेषता रहा करती है कि वह समकालीन जन-सामान्य की अभिरुचियों के संदर्भ में उनका उचित मार्ग-दर्शन करे, निस्सार समाज-प्रबन्ध को समाप्त कर के एक स्वस्थ समाज की स्थापना करे जिस में मानव को सुचारु रूप में जीवन-थापन करने का पूर्ण अधिकार और सभी प्रकार की सुविधाएं प्राप्त हों। आवश्यकता पड़ने पर वह सामयिक सरकार से भी लोहा ले सके। फरीद में अन्य गुण भले ही हों, किन्तु उन में लोक-नायक की विशेषताएं न्यून मात्र में ही मानी जाएंगी। उन्होंने कहीं भी धार्मिक रूढ़ियों का खंडन नहीं किया, अपितु

शरीअत के पालन पर कठोरतापूर्वक बल दिया है। कहने से अभिप्राय, उन का जन्म लोक-कल्याण की आवश्यकता के अनुरूप नहीं हुआ था। वे कुल मिलाकर एक सूफी प्रचारक थे। मधुरभाषी होने के कारण उनका जन-साधारण पर निस्संदेह अत्यधिक प्रभाव था। उन्हें किसी न किसी रूप में सरकार का समर्थन एवं सहयोग भी प्राप्त था। फलत: उन्होंने इसलाम और सूफी विचारधारा का पर्याप्त प्रचार किया। किन्तु उन को लोक-नायक की संज्ञा नहीं दी जा सकती, हां प्रभावशाली धर्म-प्रचारक अवश्य कहा जा सकता है। धर्म-प्रचार से प्राप्त होने वाली नैसर्गिक विरक्ति के कारण वे कई बार सांसारिक समस्याओं से पलायन करते भी दिखाई पड़ते हैं—

फरीदा जि दिहि नाला, कपिआ जे गलु कपहि चुख।
पवनि न इति मामले सहा न इती दु:ख॥

कबीर की स्थिति फरीद से भिन्न थी। उन में लोक-नायक के सभी गुण थे। उन्होंने धर्म और समाज में जहां भी बुराई देखी, एकदम झाड़ दी। काज़ी हो चाहे पंडा, योगी हो चाहे सन्यासी, हिन्दू हो चाहे मुसलमान, कबीर किसी से नहीं डरे। उन्होंने जो उचित समझा कह दिया, उसका क्या परिणाम होगा, इसके लिए वे चिंतित नहीं थे। उनके कथन में शक्ति थी, सच्चाई थी और उस सब के पीछे उनका अखंड आत्म-विश्वास था, तभी तो वे कह सके थे—

जौ तू बांमन बांमनी जाया,
तो आन बाट काहे नहीं आया।

जौ तू तुरक तुरकनी जाया,
तो भीतर खतना क्यों ना कराया।

वस्तुत: वे 'हिंदुन की हिंदुवाई' और 'तुरकन की तुरकाई' देख चुके थे और इस निष्कर्ष पर भी पहुंच चुके थे कि ये सभी वास्तविक मार्ग से पिछड़े हुए हैं। उनके सम्बन्ध में डा. द्विवेदी का यह कथन सही है कि "कबीर 'ज्ञान के हाथी' पर चढ़े थे, पर 'सहज का दुलीचा' डाले बिना नहीं, भक्ति के मंदिर में प्रविष्ट हुए थे, पर 'खाला का घर' समझ कर नहीं, बाह्याचार का खंडन किया था, पर निरुद्देश्य आक्रमणकारी मंशा से नहीं, भगवद्विरह की आंच में तपे थे, पर आंखों में आंसू भर कर नहीं, राम को आग्रहपूर्वक पुकारा था, पर बालोचित मचलन के साथ नहीं—सर्वत्र उन्होंने एक समता (बैलेंस) रखी थी।" वस्तुत: वे एक वीर साधक थे और समसामयिक विकट परिस्थितियों की परवाह न

करते हुए उन्होंने अंततोगत्वा साधना की संग्राम-स्थली में विजेता का यश अर्जित किया था। अतः वे फरीद के विपरीत एक सफल लोक-नायक थे। उन जैसी हसती गत एक हज़ार वर्ष के इतिहास में कम ही देखने को मिलती है।

फरीद और कबीर दोनों महान् रहस्यवादी साधक हैं। रहस्यवाद के सैद्धांतिक विश्लेषण के विस्तार में न पड़ कर यहां इतना कहना पसद करूंगा कि यह एक भावात्मक अनुभूति है जिसका आधार निजी, स्वरूप अनिर्वचनीय और व्याप्ति-क्षेत्र आध्यात्मिक है। दोनों साधक-कवि आत्म-साक्षात्कार अथवा महामिलन की अवस्था को प्राप्त हो चुके थे। कबीर की वाणी में तत्सम्बन्धी स्पष्ट संकेत मिल जाते हैं, परन्तु फरीद-वाणी में इस दृष्टि से संयम की पालना हुई प्रतीत होती है। दोनों अडिग अस्तित्व हैं, अलक्ष्य के उपासक, निर्गुणवादी। वे अपने रहस्यवादी अनुभव की अभिव्यक्ति को बरबस रोक भी न सके, कभी न कभी लोक कल्याण के लिए अमृत के बिन्दु झरते ही रहे। तौहीद-परस्त सूफी फरीद ने कह दिया—"परवदगार अपार अगम बेअंत तूं" और कबीर मौज में आए तो कहने लगे—

जा का मुख माथा नहीं, नाही रूप करूप।
पहुप बास ते पातरा, ऐसा तत अनूप॥

दोनों यह मानते हैं कि यह अनुभूति अवर्णनीय है। फरीद कहते हैं कि जिन्हें परमात्मा का सामीप्य प्राप्त हो जाता है, वे उस रहस्य को किसी पर प्रकट नहीं करते—"होनि नजीकि खुदाइ दै भेतु न किसै देनि।" और कबीर इस अनुभव की गूंगे के गुड़ के रसास्वादन से तुलना करते हैं—"गूगे केरा सरकरा" अथवा गूंगे का गुड़ गूंगै जाना।"

फरीद सूफी है, अत: उन का रहस्यवाद भी सूफियाना है, भावना-प्रधान विरह की पीड़ा से ओतप्रोत, प्रेम की चाशनी मे पगा हुआ है। कबीर ज्ञानमार्गी हैं, प्रेम पर अवलम्बित होते हुए भी उनका रहस्यवाद कहीं-कहीं बौद्धिक, यौगिक और अभिव्यक्ति-मूलक हो गया है। यह उन के संस्कारों का फल माना जायेगा। वे कोरी अथवा जुलाहा थे। निम्न जातियों पर योगियों ने अपनी विशेष धाक जमाई हुई थी। साधना के आरम्भिक काल में वे योग-साधना-पद्धति से बहुत प्रभावित रहे थे। अत: तत्सम्बन्धी पारिभाषिक शब्दावली और आध्यात्मिक सम्बोधों एवं प्रतीकों के प्रयोग में उन के यौगिक और अभिव्यक्ति-मूलक रहस्यवाद को देखा जा सकता है। परन्तु साधना के क्षेत्र में आगे बढ़ जाने पर

उन के रहस्यवाद के यह प्रसाधन छूट गए और भावात्मक सम्बन्ध ही शेष रह गए। अत: दोनों के रहस्यवाद में प्रेम का प्राधान्य है। फरीद उन्हीं को सदाचारी मानते हैं जिन के हृदय में परमात्मा के लिए प्रेम है, इससे भिन्न आदर्श वाला व्यक्ति कच्चा अथवा अपरिपक्व है--

दिलहु मुहबति जिन्ह सेई सचिआ।
जिन्ह मनि होरु मुखि होरि सि काँढे कचिआ ।1।
रते इसक खुदाइ रंगि दीदार के।--

कबीर ने भी ब्रह्म-लोक की यात्रा को प्रेम के बिना एकदम असंभव माना है--

जोगी जंगम सेवड़ा, सनयासी दरवेस।
बिना प्रेम पहुंचे नहीं, दुरलंभ सतगुरु देस॥

अत: स्पष्ट है कि दुस्तर भव सागर से पार तरने के लिए दोनों साधना-नौका का प्रेमरूपी डांड नहीं छोड़ते। हां कबीर कभी-कभी ज्ञान की चर्चा अवश्य करने लग जाते हैं, जिस का फरीद-वाणी में पूर्णत: अभाव है--

जल मैं कुंभ कुंभ मैं जल है, बाहर भीतर पानी।
फूटा कुंभ जल जलहि समाना, यह तत कथ्यो ग्यानी॥

दोनों साधकों ने अपनी भक्ति-भावना में भय को विशेष महत्व प्रदान किया है। वस्तुत: भाव और भय परस्पर निर्भर हैं, एक दूसरे के पूरक हैं। भय के बिना भाव की कल्पना ही नहीं की जा सकती। फरीद के भय पर इस्लामिक प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है—

फरीदा दरि दरवाजै जाइ के किउ डिठो घड़ीआलु।
एहु निदोसा मारीऐ हम दोसा दा किआ हालु॥

परन्तु कबीर के भय का आधार साँसारिक कार्य-विधान है, जिसे सभी को सहन करना पड़ता है -

चलती चक्की देख के दिया कबीरा रोइ।
दो पाटन के बीच में साबित रहिन न कोइ॥

कई बार अनुभूति-परक भय की अभिव्यक्ति भी कबीर ने की है—

थरहर कपै बाला जीउ। ना जानउ किया करसी पीउ।
रैनि गइ मति दिन भी जाए। भंवर गए बग बैठे आय।

ब्रह्म साक्षात्कार से पूर्व कतिपय विरोधी शक्तियों की साधक लोग कल्पना करते आए हैं। इनमें से सर्वप्रमुख स्थान उस शक्ति का है जिसे सूफ़ी साधकों ने 'शैतान' और भारतीय साधकों ने 'माया' की संज्ञा दी है। फ़रीद का मत है कि जिन लोगों को शैतान ने कुमार्ग पर डाल दिया है, वे वास्तविक मार्ग का अनुसरण नहीं कर पाते —

फरीदा कूकेदिआ चांगेदिआं मती देदिआं नित।
जो सैतानि वंजाइआं से कित फेरहि चित॥

कबीर की सांस्कारिक पृष्ठभूमि भारतीय है, अतः उन्होंने इसे माया का ही नाम दिया है और उसकी गतिविधि बहुत भयानक बतलाई है —

एक डायन मेरे मन बसै।
नित उठ मेरे जिय को डसै।
तां डायन के लरिका पाँच रे।
नित उठ मोह नचावहि ताच रे।

शैतान अथवा माया के प्रभाव को नष्ट करने वाली शक्ति गुरू में समाहित है। सूफ़ियों ने इसे 'मुर्शिद' की संज्ञा दी है। कबीर ने बताया है कि 'गुरु ने प्रेम का अंक पढ़ाय दिया रे' अन्यथा माया मुझे दबोच लेती अथवा बेहाल कर देती — 'नहि तो करती भांडि'। फ़रीद ने भी गुरु की कृपा के द्वारा ही इस शक्ति से बचने का प्रयास किया है और तभी कहा है 'जो गुरु दसै वाट मुरीदा जोलीऐ'। वस्तुतः यह संसार रंगस्थली है, विषय-वासनाओं का विषैला बाण बहुत आकर्षक है। इस में जो भी प्रवेश करता है, नष्ट हो जाता है। फ़रीद के मतानुसार जिन पर पीर अथवा गुरु की कृपादृष्टि रहती है, उन पर विषय वासनाओं का प्रभाव बिल्कुल नहीं पड़ सकता —

फ़रीदा भूमि रंगावली मंझि विसूला बाग।
जो जन पीरि निवाजिआ तिनां अंच न लाग॥

कबीर ने माया को दीपक, मनुष्य को पतंग, विषय-वासनाओं में अनुरक्ति को दीपक की ओर बार-बार पतंग के लपकने की चेष्टा मानते हुए यह स्थापना की है कि गुरु के ज्ञान से कोई एक आध प्राणी अपना उद्धार कर पाता है —

माया दीपक नर पतंग भ्रमि भ्रमि इवै पड़ंत।
कहै कबीर गुरु ज्ञान थैं एक आध उबरंत॥

संत-साधकों के अनुसार प्राणों के द्वारा किया गया कार्य, व्यापार, चेष्टा अथवा क्रिया उसका कर्म है और जो जो कर्म वह करता है, उसके अनुसार उसे फल भोगना पड़ता है। शुभ कर्मों से स्वर्ग और अशुभ कर्मों के द्वारा नरक का उल्लेख सभी धर्मों के ग्रन्थों में हुआ है। गीता (304–5) में तो यहां तक कहा गया है कि कर्म अवश्य करने पड़ते हैं। कर्म न करने से कोई व्यक्ति कर्मों से मुक्त नहीं हो सकता और कर्म के बिना सिद्धि असंभव है। वस्तुतः व्यक्ति को विवश हो कर कर्मों में प्रवृत्त होना पड़ता है, इस के बिना वह क्षण भर के लिए भी रह नहीं सकता। फ़रीद और कबीर इस बात से पूरी तरह सचेत एवं सचेष्ट हैं। फ़रीद मुसलमान है और मुसलमानों में कर्म को 'अमल' की संज्ञा दी जाती है। फ़रीद ने अमल करने पर बल दिया है। मृत्यु के पश्चात् यदि कोई वस्तु साथ जा सकती है तो वो अमल ही है; इसी के आधार पर स्वर्ग-नरक का निर्णय होता है—

(1) फरीदा मउतै दा बंना एवै दिसै जिउ दरीआवै ढाहा।
अगै दोजक तपिआ सुणीऐ हूल पवै कहाहा ।
इकना नो सभ सोझी आई इकि फिरदे बेपरवाहा।
अमल जि कीतिआ दुनी विचि से दरगाह ओगाहा।

(2) फरीदा अमल जि कीते दुनी विचि दरगहि आए कंमि।

कबीर किसी के महत्व की कसौटी कुलीन होने की अपेक्षा उस की 'करनी' को मानते हैं, क्योंकि यदि सोने का कलस मद्य से भरा हुआ हो, तो भी वह निंद्य है—

ऊचे कुल कहा जनमिया, जो करनी ऊचि न होय।
कनक कलस मद से भरा, साधन निंदा सोय।

'कच्ची करनी' से कभी सुख अथवा आत्मानन्द की प्राप्ति संभव नहीं हो पाती, क्योंकि इससे तो दुःख और मानसिक रोग बढ़ते ही जाते हैं— "काची करनी जिनि करै, दिन दिन बधै बियाधि।"

फ़रीद और कबीर दोनों ने नाम-स्मरण पर बहुत बल दिया है। वस्तुतः मध्य-युग की भक्ति-भावना में नाम साधना का अत्यधिक महत्व है। प्रत्येक सम्प्रदाय में चाहे वह निर्गुण हो चाहे सगुण, इस की महत्ता निर्विवाद है। नाम–साधना की विधि को नाम–स्मरण का अभिधान दिया जाता है। संसार के सभी दुःखों को दूर करने के लिए यह 'राम-वाण' के समान बहुत प्रभावशाली

औषध है। फ़रीद ने नाम को भुलाने वालों को भूमि पर व्यर्थ का भार माना है—"विसरिआ जिन नाम ते भुई भार थीए।" कबीर भी 'सिमरन को सार मानते हुए, इस पक्ष से पीछे नहीं रहे हैं, उनके रोम-रोम से नाम की ध्वनि सुनाई पड़ती है—

मन रे राम सुमिरि राम सुमिरि राम सुमिरि भाई।
राम नाम सुमिरन बिना बूड़त है अधिकाई॥

नाम-स्मरण का मूलाधार भक्ति है। मध्ययुग के सभी साधकों ने भक्ति को अपनाया है। वस्तुतः इसके बिना कोई साधना सम्पन्न ही नहीं हो पाती थी। फ़रीद ने भी भक्ति पर बहुत बल दिया है। उनकी भक्ति निष्काम थी और अलक्ष्य, निरंजन, घट-घटवासी, सर्वव्यापी और अंतर्वासी के प्रति थी। फ़रीद परमात्मा से यही वरदान मांगते हैं —

तेरी पनह खुदाइ तूँ बखसंदगी।
शेख फ़रीदै खैरु दीजै बंदगी।

कबीर को भी भक्ति के बिना अन्य कोई वस्तु नहीं रुचती। उन्होंने भगवान् को स्पष्ट कह दिया है—

अपनी भक्ति देहु भगवान।
कोटि लालच जो दिखावहू नाहिनै रुचि आंन।

कबीर के मतानुसार जिन्हों ने भक्ति को नहीं अपनाया, उन्हें जीने का कोई अधिकार नहीं है—"जा नरि राम भगति नहीं साधी, सो जनमत कांहे न मुयौ अपराधी।"

भक्ति साधना के क्षेत्र में सत्संगति अथवा साधु-संगति का बड़ा महत्व है। मध्ययुग के सभी साधकों ने इस के प्रति अपनी आस्था प्रकट की है। कबीर ने ऋद्धि-सिद्धि की अपेक्षा साधु के दर्शन को महत्व दिया है। इसकी उन्होंने प्रभु से याचना की है और जिज्ञासु को भी यही उपदेश दिया है—

कबीर इहु तनु जाइगा कवनै मारगि लाइ।
कै संगति करि साध की कै हरि के गुन गाई।

फ़रीद भी इसे प्रभु-प्रदत्त मानते हुए कहते हैं—"करि किरपा प्रभि साध संगि मेली। जा फिरि देखा ता मेरा अलहु बेली।" साधु संगति की सब से बड़ी देन नम्रता है। फ़रीद जितने मधुरभाषी हैं उतने ही विनम्र भी हैं। वस्तुतः

वही मधुरभाषी हो सकता है जो विनम्र हैं। इसके बिना मधुरता पनप ही नहीं सकती। फ़रीद अपने आप को काले वेष वाला और दोष-युक्त मानते हैं। प्रभु को वश में करने के लिए उन्होंने तीन गुणों को परमापेक्षित माना हैं—विनम्रता सहनशीलता और मधुरता। उन का कहना है—

निवणु सु अखरु खवणु गुणु जिह्बा मणीआ मंतु।
ए त्रै भैणे वेस करि ता वसि आवी कंतु॥

विनम्रता की भावाभिव्यक्ति कबीर-वाणी में भी हुई है। उन्होंने स्वयं को 'राम का कुत्ता' तक कह डाला है। यहां वे अतिशय विनीत हैं। परन्तु कहीं-कहीं वे चुनौती देते हुए भी दिखाई पड़ते हैं। यह स्थिति आध्यात्मिक और व्यावहारिक दोनों क्षेत्रों में देखी जा सकती है, परन्तु यह दर्पजनित नहीं, अपितु उनके आत्मविश्वास का परिणाम है। तभी तो वे कहते हैं—"मालिनि भूली जग भुलाना, हम भुलाने नाहि"। वास्तव में 'चदरिया' के रूपक द्वारा तुलनात्मक दृष्टि से उन्होंने अपने चरित्र को निष्कलंक घोषित किया है और ऐसा कहते हुए भी उनके अखंड विश्वास में दंभ का लेशमात्र भी नहीं आने पाया, वस्तुतः यह कथन "उनके आत्मविश्वास का आक्रामक रूप" ही प्रकट करता है—

सो चादर सुर नर मुनि ओढ़िन, ओढ़ि के मैली कीनी चदरिया।
दास कबीर जतन से ओढ़िन, ज्यों कै त्यों धर दीनी चदरिया।

फ़रीद और कबीर दोनों मानवतावादी हैं। यह मानवतावाद पश्चिम की नास्तिक पृष्ठभूमि वाला नहीं, अपितु इसका आधार शुद्ध आस्तिकता हैं। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के सुप्रसिद्ध भारतीय सिद्धान्त को सामने रखकर मध्ययुग के अन्य साधकों के समान इन दोनों ने भी मानवता के कल्याण को सर्वप्रमुख माना है और मनुष्य-मनुष्य में अन्तर मानने वाली भेद-भाव की रुचि का खंडन किया है। कबीर नें भ्रम का निवारण करते हुए कहा है—

लोका भरम न भूलो भाई।
खालक खलक, खलक में खालक सभ घट रहिउ समाई।

फ़रीद ने भी ऐसे ही उद्‌गार प्रकट किए हैं—

फ़रीदा खालुक खलक महि, खलक वसै रब माहि।
मंदा किस नो आखीऐ, जां तिसु बिनु कोई नाहि।

सभी मनुष्यों को समान मानते हुए फ़रीद ने इस बात पर बल दिया है कि

किसी को कभी अनुचित शब्द कहने नहीं चाहिएं, क्योंकि सभी में परमात्मा का निवास है —

इकु फिका ना गालाइ सभना मै सचा धणी।
हिआउ न कैही ठाहि माणक सम अमोलवे।।

कबीर ने भी मनुष्य मनुष्य में अन्तर न मान कर कहा है—

वोही महादेव वोही मुहम्मद, ब्रह्मा आदम कहीए।
को हिन्दू को तुरक कहावै, एक जिमी पर रहीए।

दोनों फकीर हैं। कविता करना दोनों का पेशा नहीं था, केवल साधन था विचाराभिव्यक्ति का। दोनों की वाणियों के भाव और विचार पक्ष बहुत महान् तथा गंभीर हैं। कला-पक्ष का इन की कविताओं में गौण महत्व है। परन्तु साधकों की वाणियों में एक विशेष लय,स्वर अथवा अनिर्वचनीय सौंदर्य रहा करता है। ऐसा सौंदर्य दोनों की वाणियों में उपलब्ध है। सच्चा कवि वही है जिस में आत्मतत्व की अनुभूति हो। उसे किसी प्रकार के कृत्रिम प्रसाधनों की आवश्यकता नहीं। संत-महात्माओ की वाणियों की परख इसी मानदंड पर करनी समीचीन है और दृष्टि से दोनों सफल एवं महान् कवि हैं।

सारांश यह कि दोनों साधक महान् हैं। फरीद का यह महत्व विरासत में मिला था। उन्हें हर प्रकार की सुविधाएं प्राप्त थीं। कुलीन और सामयिक बादशाह से सम्बन्धित होने के कारण वे समादृत थे। कबीर को अभाव के अतिरिक्त और कुछ भी विरासत में नहीं मिला था। वस्तुत: फक्कड़पन उन का मूल–धन था और अक्खड़ता उसका व्याज था। इसी से उन्होंने सब को झकझोर दिया। इस दृष्टि से वे फरीद से निस्संदेह आगे हैं। इन के लोक–नायकत्व के सम्मुख फरीद एक धर्म प्रचारक मात्र रह जाते हैं। दोनों रहस्यवादी हैं। फरीद के रहस्यवाद का स्वरूप एकांतिक एवं व्यक्तिवादी है और कबीर का सामूहिक और सामाजिक है। फरीद भक्ति के क्षेत्र में शालीनता से काम चलाते हैं और कबीर भक्ति को संग्राम–स्थली समझकर आक्रामक पद्धति को अपनाते हैं। दोनों अपने–अपने क्षेत्रों में महान् हैं और दोनों के अनुयायियों की सुदीर्घ परम्पराएं हैं। इनके पीछे गद्दियां भी कायम हुई हैं। दोनों का महत्व ऐतिहासिक और धार्मिक है। इसी महत्व के फलस्वरूप दोनों की वाणियों को 'आदि ग्रंथ' में संकलित करके समान धरातल पर खड़ा किया गया है।

संस्कृति-संश्लेषण का कवि-शेख़ बाबा फ़रीद

प्रो० प्रेम पाली

बाबा फरीद जिस युग में पैदा हुए उसे महान् संश्लेषण का युग कहा जा सकता है। संश्लेषण वास्तव में ऐसी प्रक्रिया होती है जिसके द्वारा दो विरोधी शक्तियों के आपसी आन्तरिक टकराव तथा आन्तरिक क्रिया में से एक तीसरी शक्ति अस्तित्व में आ रही होती है। इस नई शक्ति से बुनियादी विरोधी शक्तियों को अपने अन्दर समाप्ति किया होता है तथा साथ ही उनसे आगे निकल गई होती है। यह तृतीय शक्ति ही पंजाबी संस्कृति का वह रूप था जो उस समय पैदा हो रहा था। दो महान् संस्कृतियों के पारस्परिक टकराव और विरोध में से यह तीसरा संश्लेषण पैदा हो रहा था जिसे बाबा फरीद तथा अन्य सूफी कवि ही नहीं अपितु भक्ति लहर के सन्त कवि भी अपनी कविता से सींच रहे थे ब्राह्मणवाद में भारी पतन आ चुका था तथा यह जीवन से पलायन कर चुका था, लेकिन दूसरी ओर मुगल हमलावरों में इस्लाम की कट्टरता तथा अत्याचारी होने तक जीवन को आगे जाने की भावना हावी हो रही थी। इन दोनों शक्तियों के विरुद्ध एक शीत-विद्रोह जन्म ले रहा था, जो भिन्न-भिन्न रूपों में प्रकट होकर कई प्रकार की लहरों को जन्म दे रहा था। इन लहरों में सूफी लहर और भक्ति लहर व्यापक रूप धारण कर रही थी। पंजाबी संस्कृति के एक ओर सूफीवाद तथा दूसरी ओर भक्ति लहर वर्तमान रूप दे रही थी। बाबा फरीद ने इस संश्लेषण को अपने अन्दर क्रियात्मक रूप से प्रयोग करते हुए इस विशाल प्रक्रिया में अपना यथायोग्य हिस्सा डाला। उनकी प्राप्तवाणी इस संश्लेषण का ही विकसित रूप कही जा सकती है।

बाबा फरीद को इस्लामी और भारतीय संस्कृति के इस महान् संश्लेषण का प्रवर्तक कहा जा सकता है, जो कई शताब्दियों तक चलता रहा तथा जिसके परिणाम स्वरूप न केवल सिक्ख धर्म ने ही जन्म लिया बल्कि पंजाबी शिष्टाचार अपने अलग संघर्षशील रूप में स्थापित हुआ। इस विस्तृत इतिहास के आरम्भ में बाबा शेख़ फरीद का व्यक्तित्व उस पुरातन वट वृक्ष के समान छाया हुआ है, जिसके नीचे पंजाबी संस्कृति खेल कर पुष्ट और जवान हुई।

बाबा फरीद इस्लामी तथा भारतीय संस्कृतियों के संगम का नाम है। उसमें इस्लामी कट्टरता के विरुद्ध उठी आवाज़ सूफी लहर और ब्राह्मणवादी अन्यायपूर्ण सामाजिक ढांचे के विरुद्ध उठी भक्ति लहर दोनों के अंश देखे जा सकते हैं। दूसरे शब्दों में उसे केवल पंजाबी में सूफी लहर के प्रवेश के लिए ही जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता, अपितु भक्ति लहर का जन्मदाता भी माना जा सकता है।

सब से पहले बाबा फरीद ने इस संश्लेषण को अनुभव करते हुए कही है वह 'सत्य' और 'असत्य' के विरोध की है। वह किसी पराभौतिक अथवा तत्व-वैज्ञानिक विवाद में नहीं पड़ते, अपितु सीधा मानव को सम्बोधित करते हुए सत्य के मार्ग की पहचान कराना चाहते हैं। सत्य को वे मनुष्य से अलग करके नहीं देखते, मनुष्य के (अमल) प्रयोग और उसके आचरण द्वारा परिभाषित करने की कोशिश करते हैं–सच्चे कौन हैं?

दिलहु मुहब्बत जिन्नु सेइ सच्चिया।
जो मन होर मुख होर से काढ़े कच्चिया॥

बाबा फरीद की वाणी का तत्व इन प्रारम्भिक दो शब्दों 'दिलहु मुहब्बत' में ही समाहित है। वे दिखावे (आडम्बर) के सख्त विरोधी है। सच्चे तो वही हैं जिन्हें दिल से मुहब्बत होती है तथा जिनकी कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं होता। ऐसा सच्चा पुरुष ही बाबा जी का आदर्श-पुरुष दरवेश है। "कलि मुसला सूफ गलि" पहनने से कोई दरवेश नहीं बन जाता। यदि उसका दिल साफ नहीं है तो बातें चाह गुड़ के समान मधुर हों, उसके दिल में सदा अंधेरा ही फैला रहेगा।

फरीदा कन्नि मुसल सूफु गलि दिलि काती गुड़वाति।
बाहिर दिसै चानणा दिलि अंधियारी राति॥

इसी सन्दर्भ में बाबा जी ने 'नेहु' के उद्‌गार को मानव जीवन का सब से पवित्र और सच्चा भाव माना है। इसीलिए प्रेम, प्रीति, इश्क, मोहब्बत आदि शब्दों का प्रयोग किया है। यह 'नेहु' ऐसा है, जो लोभ और स्वार्थ से पाक हो, जो कठिनाईयों, मुसीबतों और दूरियों से घबराता न हो, न ही डरता हो और सबसे बड़ी बात तो यह है कि जिस मिलाप या विसाल से पैदा हुआ सुख नहीं, अपितु अपने 'प्रियतम' या अपने 'सांई' से मिलने की ललक से पैदा हुआ 'वियोग' अनुभव करना ही सच्चे आनन्द की अवस्था समझा गया हो।

फरीदा चिन्त खटोला वाणु दुखु बिरहि बिछावण लेफु ।
ऐहु हमारा जीवणा तू साहब सच्चे वेखु ॥

फरीद के लिए तो वह शरीर कब्र के समान है जिसमें कभी बिरह न पैदा हुआ हो। कब्र के समान होना मनुष्य के लिए सबसे बड़ा अभिशाप है। वियोग का भाव ही मनुष्य को मनुष्य होने का एहसास करवाता है, उसके जीवित होने का सबूत है और उसकी पहचान है। वियोग का अनुभव होना और मनुष्य होना एक ही बात है। इसके विपरीत प्रियतम को पा लेने का सुख कब्रों को चुप्पी के समान है और मनुष्य के न होने का चिन्ह है। बिरह निस्सन्देह सुलतान है।

बिरहा बिरहा आखिअै बिरहा तू सुलतानु ।
फरीदा जितु तनि बिरहा न उपजै से तनु जाणु मसानु ॥

कहा जा सकता है कि एक ओर बाबा फरीद के लिए बिरहा सुलतान है लेकिन दूसरी ओर उसके लिए "वसि रब हिआलिअें" या "सज्जन मैंडे नालि" है, भाव यह कि जिस प्रियतम को पाने की ललक से मनुष्य के अन्दर बिरह उत्पन्न होता है, वह प्रियतम कहीं अन्यत्र नहीं अपितु मनुष्य के दिल के अन्दर या उसके साथ ही रहता है। यह विरोध क्यों ? यदि प्रियतम अन्दर ही रहता है तो फिर बिरह कैसा ?

फ़रीद जी नें इस विरोध को आत्म ज्ञान द्वारा विजय किया है। केवल दरवेश लोगों को ही यह ज्ञान है कि मनुष्य की खोज अपने आप को जानने की अथवा स्व पहचान की है। दरवेश के विपरीत 'गहिला लोक' हैं, जो अपने से बाहर की वस्तुओं के पीछे लग कर 'बेपरवाह' हो कर घूम रहा है। "मैं" की खोज, या 'स्व' की पहचान कर लेना ही मनुष्य की खोज का वास्तविक लक्ष्य है और यह खोज जीवन भर का कार्य है। निस्सन्देह रब, प्रीतम, सज्जन आदि मनुष्य से बाहर की कोई वस्तु नहीं, अपितु उसका अपना 'स्व' रूप ही है। मनुष्य ने अपने अन्दर से ही अपनी सम्भावनाओं की पहचान करनी होती है और अपने आप को एक सच्चे और शुद्ध इन्सान के आदर्श में ढालना होता है। बाबा फरीद लिखते हैं।

आप सवारहि मैं मिलहि मैं मिलिया सुखु होइ ।
फरीदा जे तू मेरा होइ रहहि सबु जगु तेरा होइ ।।

किसी भी व्यक्ति को 'बुरा' नहीं समझना चाहिए, क्योंकि उसके अन्दर भी 'रब' (ईश्वर) रहता है। 'बुरा' कहने का अभिप्राय ऊंच-नीच समझने से है।

फरीद जी के लिए सभी इन्सान भगवान का ही रूप है जिस लिए सभी बराबर हैं।

फरीदा खालक खलकु महि खलक वसै रब माहि।
मन्दा किसनो आखीऐ जां तिसु बिनु कोई नाहि॥

निस्सन्देह बाबा फरीद ने एक सम्पूर्ण सैद्धांतिक अपनी वाणी में रचा है और यही सैद्धान्तिक प्रबन्ध पंजाबी संस्कृति का विचारात्मक आधार है। पंजाबी संस्कृति ने मानवीय आदर्श को दरवेश के रूप में ज्यों का त्यों स्वीकार किया हुआ है तथा सिक्खी में 'गुरमुख' इसी संकल्प का रूपान्तरण है। हिन्दू मुसलमान से ऊपर उठ कर सभी इन्सानों को बराबर समझने की कीमत पंजाबी संस्कृति की एक नवीनतम मूल्यवान मूल्य हैं। आडम्बर को सभी सिक्ख गुरूओं ने ही 'पाखण्ड' का नाम नहीं दिया अपितु शिष्टात्मक स्तर पर भी आडम्बर के प्रति लोगों के मन में घृणा भरी हुई है। सीधा सादा दरवेश ही लोगों के लिए आदर्श है। बाबा जी का मृत्यु के प्रति दृष्टिकोण भी पंजाबी लोगों के लिए नवीनतम मूल्य है। सत्य के मार्ग पर चलते हुए मृत्यु से भयभीत न होना तथा मृत्यु को एक स्वाभाविक प्रक्रिया समझना, अत्याचार का डट कर विरोध करना आदि पंजाबी संस्कृति के ऐसे मूल्य है जिन्हें जनसामान्य के लिए सैद्धान्तिक आधार बनाने में निस्सन्देह शेख फरीद का महत्वपूर्ण योगदान है।

फ़रीद की विचारधारा

डा० यश गुलाटी

भारतीय सूफीमत के इतिहास में बाबा फरीद का निजी और विशिष्ट स्थान है। उनके औपचारिक दीक्षा-ग्रहण से पूर्व ही ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती ने यह भविष्यवाणी कर दी थी कि वे एक ऐसे दीपक हैं जो सूफी-सम्प्रदाय (दरवेशों के सिलसिले) को प्रकाश देंगे।[1] इतिहास इस भविष्यवाणी की सत्यता का साक्षी है। फरीद के जीवन-काल में ही आध्यात्मिक और मानसिक शान्ति की प्राप्ति हेतु हजारों यात्री उनकी खानकाह की यात्रा करने लगे थे। उनकी शिष्य-परम्परा ने भी असंख्य दिग्भ्रमित और पथ-भ्रष्ट मनुष्यों को सत्य और आस्था की मशाल दिखा कर सत्पथ पर चलने के लिए प्रेरित किया है। इस क्षेत्र में सर्वाधिक योगदान उनकी उस रचना का है जो कि श्री गुरू ग्रंथ साहिब में सम्मिलित होकर विश्व के कोने-कोने तक उनके सदुपदेशों को प्रसारित कर रही है। यह रचना मात्रा में अत्यल्प होने पर भी उनकी विचारधारा के मुख्य तत्वों को प्रस्तुत करने में सक्षम है।[2]

यह कहना अनावश्यक है कि बाबा फरीद की विचारधारा का सम्यक् विश्लेषण सूफीमत के परिप्रेक्ष्य में ही करना उचित है। अध्यात्म-निरुपण की दृष्टि से सर्वप्रथम उनकी ब्रह्म सम्बन्धी धारना पर विचार अपेक्षित है। ब्रह्म के स्वरूप के सम्बन्ध में सभी सूफियों में मतैक्य नहीं है परन्तु यह सभी स्वीकार करते हैं कि अल्लाह एक, प्राचीन, प्रथम और अन्तिम सभी वस्तुओं की सीमा, अनुपम, अपरिवर्तनशील, अविभाज्य और अपदार्थेय है।[3] उनका मतभेद ब्रह्म और सृष्टि के सम्बन्ध के विषय में ही प्रतीत होता है। ब्रह्म सर्वगत या सर्वातीत, जगत् के भीतर ओतप्रोत है अथवा जगत् से नितांत परे, इसके बारे में सभी संभव मतों के अनुयायी सूफियों में मिलते हैं। अधिकांश सूफी यह मानते हैं कि वह सर्वगत भी है और सर्वातीत भी। जगत् तो ब्रह्म है परन्तु ब्रह्म जगत् ही नहीं। इस प्रकार ब्रह्म सब वस्तुओं में है परन्तु वह इस सृष्टि से कुछ अधिक और ऊपर है, उसके समान नहीं। इसे ईश्वराधिकत्ववाद कहा गया है। इसके विपरीत यदि

एक ओर इब्नुल अरबी जैसे कतिपय सूफी विचारक ब्रह्म को पूर्णतया जगल्लीन मानते हैं तो कालाबाघी जैसे सूफियों का विचार है कि ब्रह्म पूर्णतया सर्वातीत है वह सर्वथा जगल्लीन नहीं है। वह सृष्टि के निकट तो हैं पर इसमें व्याप्त नहीं हैं। रुमी में सभी मतों के तत्व खोजे जा सकते हैं पर उसका मुख्य स्वर यह है कि परमसत्ता अनिर्वचनीय है। उसे सामान्य स्थान, काल, कारण के वर्गों में नहीं रखा जा सकता।[4]

बाबा फ़रीद के अनुसार परमात्मा एक, अनुपम,[5] परमसत्य,[6] अपार, अगम और अनन्त है। वही इस सृष्टि का रचयिता और पालन करता है।[7] वह सर्व-शक्तिमान और स्वेच्छाचारी है। वह जो चाहता है, वही करता है।[8] वह न्यायकर्त्ता, क्षमाशील और करुणानिधान भी है। मानव भले ही उसे भुला दे, पर वह उसे कभी नहीं भूलता।[9] ब्रह्म के सम्बन्ध में शेख़ फ़रीद के ये विचार अधिकांश सूफियों के दृष्टिकोण के अनुरूप ही हैं। उनके मत की विशिष्टता वहां दिखाई पड़ती है जहां वे परात्पर सत्ता की स्थिति हृदय में स्वीकार करते हैं तथा उसे सभी वस्तुओं में विद्यमान कहते हैं।[10] इन उक्तियों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि शेख़ फ़रीद यदि इब्नुल अरबी जैसे अद्वैतवादियों की कोटि में नहीं आते तो कालाबाघी जैसे कट्टरपंथियों के वर्ग में भी उन्हें नहीं रखा जा सकता। वस्तुतः फ़रीद के अनुसार ब्रह्म सर्वगत भी है और सर्वातीत भी। वह सब पदार्थों में व्याप्त होने पर भी उनसे कुछ अधिक तथा ऊपर है। अतएव उन्हें अधिकतर सूफियों द्वारा स्वीकृत 'ईश्वराधिकत्ववाद' का अनुयायी कहना ही अधिक समीचीन और तर्कसंगत प्रतीत होता है।

सूफी साधकों ने ब्रह्म के दिव्य गुणों में उसके सौंदर्य (जमाल), ऐश्वर्य (जलाल) तथा अद्भुत शक्ति (कमाल) का उल्लेख किया है।[11] बाबा फरीद के श्लोकों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उनके मन में परमात्मा 'परम-ऐश्वर्य' रूप में ही अधिक प्रमुख रहा है। परमसत्ता के इस गुण का संकेत वे अनेक स्थलों पर करते दिखाई देते हैं।[12] उनकी रचना में उसके जमाल और कमाल सम्बन्धी संकेत प्रायः परोक्ष एवं नगण्य हैं। एक स्थान पर उन्होने परमसत्ता को मिस्री, खांड, गुड़, शहद और भैंस के दूध से भी मधुर बता कर अवश्य अप्रत्यक्ष रूप से उसके परम सुन्दर रूप को ध्वनित किया है।[13]

इस स्थल पर शेख़ फरीद द्वारा कल्पित वैयक्तिक ब्रह्म के सम्बन्ध में विचार कर लेना भी अनुचित नहीं होगा। वे एक रहस्य साधक थे, दार्शनिक

नहीं। अतएव उनकी ब्रह्म सम्बन्धी धारणा निर्वैयक्तिक नहीं है। अपनी कोटि के अन्य साधकों के समान उन्होंने भी उसके साथ निजी और वैयक्तिक सम्बन्ध स्थापित किया है। इस सम्बन्ध के आधार पर भी परमसत्ता सम्बन्धी उनके दृष्किोण को हृदयंगम किया जा सकता है। फरीद अनेक स्थलों पर ब्रह्म को 'साई' और 'साहिब' कहते हैं। उनका यह स्वामी बहुत कुछ एक सर्वशक्तिमान और स्वेच्छाचारी राजा के रूप में अंकित हुआ है जोकि कयामत के दिन मनुष्य के कर्मों का लेखा-जोखा भी करेगा।[14] परन्तु दूसरी ओर वे अनेक स्थलों पर उसे 'सहु', 'कंतु', 'प्रिय' भी कहते हैं। साधारणतया इन से उसका पति रूप ही अभीष्ट है जिसके सामीप्य की निरंतरता और प्रगाढ़ता के अभाव में जीवात्मा रूपी पत्नी को यह जीवन भार लगने लगता है।[15] एकाध श्लोक के पर्यालोचन से अवश्य ऐसा प्रतीत होता है कि फरीद ने यत्र-तत्र उसे विवाह चौहद्दी से बाहर 'प्रियतम'[16] के रूप में भी कल्पित किया था तथा उसे सख्य भावानुरूप मित्र और सखा समझते हुए भी उससे निजी सम्बन्ध जोड़ा था।[17] फरीद की वैयक्तिक ब्रह्म-कल्पना के इस अध्ययन से भी स्पष्ट हो जाता है कि ब्रह्म उनके मन में भय और प्रेम दोनों भावों को जन्म देने वाली सत्ता है इसलिए जहाँ उसके परम-ऐश्वर्य के सम्मुख वे नतमस्तक होते हैं, वहां उसके प्रति ऐसे अपार और असीम प्रेम का आकर्षक भी उन्हें अनुभव होता है जिसके सम्मुख सभी बाधाएं महत्वहीन और निरर्थक हो जाती हैं।

कुरान में रचित-जगत् में मानव को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है और उसके सम्मुख फरिश्तों को भी नत होते अंकित किया गया है, पर सूफी विचारक इससे भी आगे बढ़कर यह वह अणु है जो सूर्य से टूटकर आया है और फिर सूर्य बन जायेगा, एक ऐसी बूंद है जिसने दरिया को अपने में छिपा रखा है।[18] परमात्मा और मनुष्य में अन्तर यह है कि जहाँ परमात्मा की सत्ता, उसके नाम और उसके क्रिया-कलाप असीम हैं, वहां मनुष्य में ये सभी सीमाबद्ध है।[19] फरीद के गुरु ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती और ख्वाजा कुतुबद्दीन के अनुसार जीव और ब्रह्म में कोई मौलिक भेद नहीं है। मानव ब्रह्म के समान ही नित्य और अनन्त है, केवल उसका बाहय् स्वरूप ही नश्वर है। वह परमात्मा के साथ एक था तथा फिर एक हो जाएगा।[20]

बाबा फरीद के अधिकांश श्लोकों के अध्ययन से यही प्रतीत होता है कि वे मानव को परमात्मा की एक विशिष्ट रचना मानते थे जिसे पहले परमात्मा

का अत्यन्त नैकट्य प्राप्त था। इस जगत् में उसे विशेष उद्देश्य से भेजा गया है। इस उद्देश्य के लिए प्रयत्न न करने पर उसे कष्ट भी सहन करने होंगे।[21] वे यह भी कहते हैं कि वह परमात्मा को भले ही विस्मृत कर दें पर परमात्मा उसे कभी नहीं भूलता। वह तो प्रत्येक मानव के हृदय में स्थित है।[22] यहां यह कह देना अनुचित नहीं होगा कि फरीद की चिन्तनधारा का प्रमुख स्वर यही होने पर भी, एक मात्र स्वर नहीं है। एकाध स्थल पर वे उसे ब्रह्मरूपी समुद्र का अंश भी मानते हैं जो पुनः उसमें सम्मिलित होकर समुद्र ही हो जाएगा।[23]

इस स्थल पर फ़रीद द्वारा स्वीकृति मानवीय चेतना के केन्द्र का उल्लेख करना भी उचित ही है। अधिकांश सूफी आत्मा के दो भेद करते हैं— रूह और नफ्स। साधारणतया वे कहते हैं कि रूह सद्‌वृत्तियों का उद्‌गम स्थल है और नफ्स सब प्रकार की कुप्रवृत्तियों का स्थान है। इनके अतिरिक्त कल्ब (हृदय) को विशेष महत्व दिया गया है। हाफिज ने इसे सत्य का कोष तथा रहस्यानुभूति का भंडार बताया है।[24] शेख़ फ़रीद ने अपने कतिपय श्लोकों में रूह का उल्लेख किया है। उनके अनुसार मृत्यु के पश्चात रूह तो चली जाती है पर शरीर यहीं रह जाता है। मृत्युपरान्त 'रूह' ही नाना कष्ट सहन करती है। सद्‌वृत्तियों के उदगम स्थल के रूप में रूह का चित्रण उनकी रचना में अप्राप्य है।[25]

यह कहा जा चुका है कि सूफियों द्वारा नफ़्स को बुराई का केन्द्र माना गया है। इस लिए साधक इसे वश में करना नितान्त आवश्यक मानते रहे हैं। फरीद ने यद्यपि 'नफस' शब्द का प्रयोग नहीं किया तथापि चित्त, मन आदि शब्दों के द्वारा वे इसका संकेत अवश्य कर देते हैं। एक श्लोक में यदि वे यह कहते हैं कि शैतान द्वारा पथभ्रष्ट हुए व्यक्ति कैसे चित्त (नफ्स) पर नियंत्रण कर सकते हैं तो दूसरे में मन के ऊबड़खाबड़पन को दूर करने की प्रेरणा भी देते हैं। ऐसा करने पर ही जीव नरकाग्नि से बच सकता है।[26] एक अन्य स्थल पर वे इन्द्रियों को मन में विकार पैदा करने वाला बताते हैं।[27] यहां दृष्टव्य है कि वास्तविक दोषी नफ्स को न बताकर, इन्द्रियों को बताया गया है।

'क्लब' शब्द का भी प्रयोग फ़रीद ने नहीं किया पर कई स्थलों पर वे यह स्पष्ट कर देते हैं कि इसे वे परमात्मा और उसके दिव्यज्ञान का आधार मानते हैं।[28]

'जीव' के सम्बन्ध में फरीद के मत का अध्ययन करते हुए एक स्वाभाविक प्रश्न यह उठता है कि क्या फरीद आवागमन और पुनर्जन्म में विश्वास रखते

थे अथवा नहीं। अधिकांश सूफियों की तरह फरीद की न केवल इसमें आस्था नहीं थी, वल्कि वे स्पष्ट रूप से यह कहना आवश्यक समझते हैं कि पुनर्जन्म नहीं होता।[29]

पूर्वनिश्चित भाग्य और कर्म स्वातंत्र्य को लेकर सूफियों में सदा से मतभेद रहा है। वस्तुतः इस मतभेद का आधार कुरान है जिसमे दोनों का संकेत किया गया है और अन्त में यह कह कर कि यह परमात्मा का रहस्य है, इसलिए इसकी चर्चा नहीं करनी चाहिए, समाहित का प्रयास नहीं किया गया।[30] परवर्ती सूफियों ने अवश्य इनमें समन्वय की चेष्टा की थी। बाबा फरीद के काव्य में बार-बार यह बात दुहराई गई है कि मृत्युपरान्त मनुष्य के कर्मो के अनुसार ही उसे सुख-दुःख की प्राप्ति होती है।[31] इस सम्बन्ध में उन्होंने कुरान में वर्णित अल-योम-उल-आखिर (लेखा जोखा के दिन) की भी बार-बार चर्चा की है।[32] अतएव वे कहते हैं कि मानव को बुरे कामों में बचकर शुभ काम करने चाहिएं। पर साथ ही यह भी स्वीकार करना होगा कि फ़रीद पूर्ण-कर्म-स्वातंत्र्य के पक्षपाती नहीं रहे। उन्होंने जहां मृत्यु को पूर्व निश्चित बताया है वहाँ मानव-जन्म को भी दुःख का कारण घोषित किया है।[33] उनकी दृष्टि में मानव-जन्म 'किसी अन्य' की इच्छा का परिणाम है जो स्वेच्छाचारी है और जिसके दरबार में कई बार निर्दोष भी कष्ट सहते हैं।[34] अतएव यह स्पष्ट है कि कर्मवाद में विश्वास करते हुए भी फ़रीद पूर्णतया कर्म-स्वातंत्र्य के पक्षपाती प्रतीत नहीं होते।

जगत् के विषय में सूफी विचारकों ने विस्तार से विचार किया है। परन्तु फरीद की प्राप्त रचना में इस सम्बन्ध में बहुत ही नगण्य से संकेत मिलते हैं। इनके आधार पर यह तो ज्ञात होता हैं कि वे इसे परमात्मा द्वारा रचित मानते हैं पर यह कहना कठिन है कि वे सृष्टि की उत्पत्ति को तात्कालिक मानते थे अथवा इसके क्रमिक विकास में आस्था रखते थे। उनकी रचना में न तो सृष्टि के तत्वों का वर्णन है और न ही सात आसमानों अथवा सात पृथ्वियों का। स्वर्ग और नरक में से भी केवल 'नरक' का उल्लेख हुआ है। नरक की भयंकर यातनाओं का यह वर्णन मनुष्य को सत्पथ पर प्रेरित करने के उद्देश्य से ही किया गया है।[35] नरक के ऊपर वाले पुल (अस-सिरात) का उल्लेख भी एकाधिक स्थलों पर प्राप्त होता है।[36] कुरान में उल्लिखित फ़रिश्तों में केवल अज़राईल (खलकुलमौत) की ही चर्चा यहां हुई है।[37]

फ़रीद के काव्य में जिन विचारों की बार-बार आवृत्ति हुई है वे हैं संसार की दु:खमयता और नश्वरता। उनकी दृष्टि में यह सृष्टि सुन्दर बाग है परन्तु साथ ही यह क्षणभंगुर भी है। इस संसार रूपी सरोवर को बसाने वाले पक्षी ही इसे छोड़कर नहीं चले जाते, एक दिन यह सरोवर भी रीत जाता है और इसका अकेला कमल भी मुर्झा जाता है।[38] इस संसार में सुख एक छलावा है, मृग मरीचिका है। जब तक मनुष्य अपने में ही सीमित रहता है उसे प्रतीत होता है कि वही अकेला दु:खी है परन्तु निजत्व से ऊपर उठने पर उसे सर्वत्र दु:ख ही दु:ख दिखाई देता है।[39] यहां यह कह देना अनुचित न होगा कि अधिकांश अन्य सूफ़ी भी सृष्टि को अनित्य और नश्वर मानते हैं।[40] एक स्थल पर फ़रीद सृष्टि को 'झूठा' भी कहते हैं।[41] इससे यह भ्रांति होने की आशंका है कि वे जगत् को वेदान्तियों के समान मिथ्या और माया मानते थे। परन्तु गहराई से विचार करने पर यही लगता है कि उन्होंने यहां सृष्टि को मिथ्या न कह कर सांसारिक आकर्षणों को ही निस्सार और सत्वहीन बताया है।

किसी भी सूफ़ी कवि के अध्यात्म-निरूपण पर विचार करते हुए उसकी "मुहम्मद" सम्बन्धी धारणा पर दृष्टिपात कर लेना भी आवश्यक है। सामान्यतया मुसलमान मुहम्मद को परमात्मा का पैगम्बर, तारक और मध्यस्थ ही मानते हैं जबकि सूफ़ी उन्हें सारी सृष्टि का केन्द्र, चालक और प्रेरक तत्व बताते हैं। उनके अनुसार वे (हकीकतुल मुहम्मिदया) सारी वस्तुओं की आत्मा और जीवन है। इसके अतिरिक्त वे उन्हें दैवी करुणा का मध्यस्थ तथा माध्यम और पैगम्बर भी मानते हैं।[42] श्री गुरू ग्रन्थ साहिब में संगृहीत फ़रीद की रचना में कहीं भी स्पष्ट रूप से 'मुहम्मद' के सम्बन्ध में कोई उल्लेख नहीं मिलता। परन्तु उनके जीवन तथा अन्य उल्लेखों से पैगम्बर मुहम्मद के प्रति उनकी दृढ़ तथा अटूट आस्था के प्रति कोई संदेह नहीं रह जाता।[43] पर यह कहना संभव नहीं है कि वे हकीकतुल मुहम्मदिया (मूल विचार) में विश्वास रखते थे अथवा नहीं ?

बाबा फ़रीद की विचारधारा का अध्ययन करते हुए उनकी "शैतान" सम्बन्धी मान्यता का उल्लेख भी अनुचित न होगा। कुरान के 'सूरे आराफ' में इबलीस (शैतान) को एक ऐसी शक्ति बताया गया है जो मानवों के हृदय में परमात्मा का विरोध करती है। शैतान मनुष्यों को पथ विचलित कर देता है और उन्हें पाप की ओर प्रेरित करता है। पर प्रसिद्ध सूफ़ी मंसूर अल-हल्लाज

ने प्रचलित धारणा का विरोध करते हुए इब्लीस को परमात्मा का सच्चा भक्त कहा था। उसका कहना था कि जब सभी फरिश्ते आदम के सम्मुख झुक गये थे तो उस समय इबलीस ने प्रणत होने से इन्कार कर परमात्मा के प्रति अपनी सच्ची भक्ति और एक-निष्ठता का ही परिचय दिया था।[44] इस पृष्ठभूमि के आधार पर यदि फ़रीद की उक्तियों पर विचार किया जाए तो कोई संदेह नहीं रह जाता कि फ़रीद शैतान को पाप की ओर प्रेरित करने वाली तथा पथ विचलित करने वाली शक्ति ही मानते थे।[45] हल्लाज के अनुरूप उसे परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ भक्त उन्होंने नहीं माना।

फरीद ने अपने काव्य में स्थान-स्थान पर साँसारिक आकर्षणों की निन्दा की है। उन्हें यह संसार जहरीली गंदलों जैसा प्रतीत हुआ है जो बाहर से खांड चढ़ी हुई होने के कारण बहुत ही आकर्षक और मधुर प्रतीत होती है परन्तु आज तक ये किसी के लिए भी सुखद और कल्याणकर नहीं हुई।[46] उन्हें वे सांसारिक पदार्थ कसुंभा फूल की तरह लगते हैं जिनका रंग कच्चा होता है और चमक केवल दिखावटी होती है।[47] उनके अनुसार इस संसार के सभी पदार्थ सारहीन और प्रच्छन्न अग्नि जैसे हैं जिनसे व्यर्थ ही जल जाने के अतिरिक्त कुछ उपलभ्य नहीं है।[48] इस संसार के पचास विकाररूपी शिकारी अकेली जीवात्मा को फंसाने के लिए लालायित हैं। इसलिए मानव यदि नरक की भयंकर यातनाओं से बचना चाहता है तो इनसे दूर ही रहना होगा।[49] उपर्युक्त विचार से स्पष्ट है कि फरीद के श्लोकों में सांसारिकता के अर्थ में माया का संकेत अवश्य हो गया है पर मध्यकालीन संतों की तरह वे न तो माया शब्द का ही प्रयोग करते हैं और न ही ठगिनी, डाइन, सर्पिणी कहकर उसे मूर्तिमान ही करते हैं।

परमलक्ष्य के सम्बन्ध में सूफी साधकों में मतैक्य नहीं है। अधिकांश सूफी यह मानते हैं कि जीव परमात्मा से बिछुड़ा हुआ है और इस संसार की भूलभूलैयों में खोया हुआ है। उसका उद्देश्य परमात्मा से पुनः एकत्व प्राप्त करना है। इसके लिए वे फना और बका शब्दों का प्रयोग करते हैं। फना का सामान्य अर्थ निजत्व का पूर्ण लोप और बका का अर्थ परमसत्ता में सतत निवास माना गया है। कालाबाघी और हुज्वीरी जैसे पुरातन पंथी इस व्याख्या को स्वीकार नहीं करते। उनके अनुसार इनका अर्थ क्रमशः व्यक्तिगत भावनाओं, इच्छाओं की समाप्ति और परमात्मा की इच्छा की पूर्ण अधीनता ही है।[50]

शेख़ फरीद की रचना के गंभीर अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि वे

यह मानते थे कि जीव का वास्तविक देश यह संसार नहीं है और उसे अपने देश को लौटना है।[51] उस देश पहुंचने के पश्चात् जीव की क्या अवस्था होगी, इसके सम्बन्ध में फरीद की वाणी में तीन प्रकार के स्वर दिखाई देते हैं। एक स्वर तो यह प्रकट करता है कि मृत्यूपरान्त जीव को अल्लाह के दरबार मे उपस्थित होकर अपने कर्मों के अनुसार फल प्राप्त करना होगा।[52] दूसरा और सबसे प्रबल स्वर परमात्मा के साक्षात्कार विषयक है। उसके दीदार (दर्शन) की अत्यन्त प्रबल अभिलाषा फरीद-वाणी में स्थान-स्थान पर प्रकट हुई है।[53] दो स्थल ऐसे भी हैं जहां वे दर्शन तक ही सीमित नहीं रहते, स्पष्ट रूप से एकमेकता का वर्णन करते हैं और समुद्र में मिलकर समुद्र ही हो जाने की बात कहते हैं।[54] इससे स्पष्ट है कि फरीद की दृष्टि में जीव का वास्तविक ध्येय परमात्मा से एकमेक होना है। यह अवस्था ऐसी होती है जबकि जीव का पृथक अस्तित्व ही नहीं रहता।

परमात्मा से एकमेक होने के लिए मानव क्या करे? इसका उत्तर प्राय: सभी सूफी यही देते हैं कि उसके लिए सर्वाधिक आवश्यक है प्रभु का अनुग्रह, जिसके अभाव में सारे प्रयास निरर्थक ही हैं। बाबा फरीद भी भगवद्नुग्रह की सर्वोच्च को स्वीकार करते थे।[55] इसके साथ ही अन्य सूफियों के समान ही यह भी मानते थे कि जीव के आन्तरिक सहयोग की भी आवश्यकता है। परम लक्ष्य के लिए जीव की साधना का अध्ययन करते हुए ज्ञान, प्रेम, क्रिया पक्ष और आचार-सहिता आदि पर विचार किया जाता है। इसी के अन्तर्गत गुरू सम्बन्धी धारणा का उल्लेख भी आवश्यक है।

सूफी साधना में ज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है। सूफी विचारकों के अनुसार एकत्व की अनुभूति ज्ञान द्वारा ही संभव है। ज्ञान द्वैत के मायिक आवरण को चीर कर विषय और विषयी के भेद के परे पहुंच जाता है। यह ज्ञान बौद्धिक ज्ञान से भिन्न है और कल्ब (हृदय) द्वारा प्राप्य है।[56] यह ठीक है कि बाबा फरीद की साधना-पद्धति में आचार-पक्ष और प्रेम पर अपेक्षाकृत अधिक बल दिया गया है परन्तु इसमें भी सन्देह नहीं है कि वे हृदय की भ्रान्ति (अज्ञान) का निवारण भी आवश्यक मानते हैं।[57] वे कहते हैं कि जब प्रभु के दीदार की कस्तूरी बांटी जाती है तब अज्ञान की निद्रा में मग्न व्यक्ति कैसे कुछ प्राप्त कर सकता है?[58] परमात्मा के रहस्य से जो व्यक्ति अपरिचित रह जाता है, पश्चाताप के अतिरिक्त वह क्या कर सकता है?[59] और जो इस रहस्य को जान लेता है वह ज्ञानवान् व्यक्ति तो सभी की श्रद्धा का पात्र हो जाता है।[60]

'प्रेम' की अभिव्यक्ति शेख़ फ़रीद ने बहुत ही स्टीक और मर्म स्पर्शी ढंग से की है। उनके हृदय की कोमलता और मधुरता का बहुत ही सुन्दर वर्णन इन स्थलों पर दिखाई पड़ता है। यह सर्वदा एक स्त्री की ओर से किया गया प्रेम-निवेदन है। इसे पढ़कर प्रतीत होता है कि फ़रीद का माधुर्य-भाव आरोपित और ओढ़ा हुआ नहीं था। उनके भीतर एक नारी थी जो इन स्थलों पर बाहर प्रकट हो जाती है। फरीद के अनुसार जो व्यक्ति परमात्मा के प्रेम में लीन है उन्हें ही 'दीदार' का परमानन्द उपलब्ध होता है।[61] परमसत्ता के प्रति बाबा फरीद का यह प्रेम विरह के अश्रुओं से स्नात और व्यथा तथा वेदना से आप्लावित है। वे दर्द (वेदना) को अत्यन्त मूल्यवान् मानते थे और प्रत्येक आगुन्तक को 'परमात्मा तुम्हें दर्द दे' कहकर आशीर्वाद दिया करते थे। निज़ामुद्दीन औलिया के अनुसार इससे उनका अभिप्राय 'अश्रुपूर्ण नेत्र और भावपूर्य हृदय' से था।[62] इसलिए साधक के रूप में वे चिन्ता की चारपाई को सहर्ष स्वीकार करते हैं जो कि दुःख की मूँज से बुनी है तथा जिस पर विरह का गद्दा बिछा हुआ है।[63] यह विरह कितना ही कष्टप्रद क्यों न हो, पर त्याज्य नहीं है क्योंकि जिस शरीर में विरह नहीं होता, वह श्मशान से अच्छा नहीं है।[64] प्रेम में दृढ़ता और एकनिष्ठता के फ़रीद प्रबल समर्थक हैं और इसके लिए सब प्रकार की पीड़ाओं के सहर्ष सहन करने की प्रेरणा देते हैं।[65]

बाबा फरीद के काव्य में 'भय' की अवस्थिति देखकर कुछ विद्वानों को उन के सूफी होने में सन्देह होने लगता है। वस्तुतः सूफियों का एक दल प्रेम और भय को परस्पर विरोधी भाव नहीं मानता। इमाम गज़ाली के अनुसार भय प्रेम के लिए आवश्यक है यदि मानव का प्रेम प्रभु के भय से युक्त न हो तो वह प्रेम की तीखी आंच सहन नहीं कर सकता।[66] बाबा फरीद की प्रिय पुस्तक 'अवारिफुल मुआरिफ' में भी भय की सार्थकता स्वीकार की गई है।[67] ऐसी स्थिति में साधना के प्रेरक-भाव के रूप में फरीद द्वारा भय की स्वीकृति किसी प्रकार आश्चर्यजनक नहीं कही जा सकती। कयामत के अवसर पर कष्टों का भय और परमात्मा के द्वारा तिरस्कार की आशंका फरीद में बड़ी तीव्र है।[68] वस्तुतः उन के प्रेम का प्रेरक तत्व परात्पर सत्ता का सौंदर्य कम है, उसका ऐश्वर्य अधिक।

सूफी-साधना में गुरु का विशेष स्थान है। सूफियों के अनुसार गुरू की सहायता के बिना जो व्यक्ति इस साधनापथ को पार करने की चेष्टा करता है,

उसका मार्ग-दर्शक शैतान हो जाता है। ऐसा जिज्ञासु उस वृक्ष के समान ही होता है जिसमें माली की देखरेख के अभाव में कोई फल नहीं लगा अथवा कड़वे फल लगते हैं।[69] बाबा फरीद का साधना के क्षेत्र में सफलता के लिए, गुरू की अनिवार्यता पर दृढ़ विश्वास था। चिश्ती सम्प्रदाय के इतिहास में वही अकेले व्यक्ति हैं जिन्हें दो गुरूओं से दीक्षा प्राप्त हुई थी।[70] अपनी रचना में भी एकाधिक स्थलों पर वे गुरू की महत्ता का प्रतिपादन करते हैं। प्रभु के सामीप्य की प्राप्ति के इच्छुक के लिए वे सच्चा गुरू खोजना अत्यन्त आवश्यक समझते हैं। उनके अनुसार यदि किसी को अच्छा गुरू न मिले तो उसे निराशा ही प्राप्त होती है।[71] फरीद कहते थे कि साधक को अपने गुरू द्वारा निर्दिष्ट पथ का पूरी दृढ़ता और ईमानदारी से अनुसरण करना चाहिए, तभी उसे लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है।

सूफियों की साधना-पद्धत्ति सामान्यतया दो वर्गों में विभाजित की जाती है सामान्य और विशिष्ट। सामान्य के अन्तर्गत विधि और निषेध (अवामिर और नवाही) आते हैं। नमाज़ (शास्त्रोक्त विधि से प्रार्थना). रोज़ा (व्रत), हज्ज (तीर्थ यात्रा) ज़कात (दान) आदि क्रियाएं तो सभी मुसलमानों द्वारा स्वीकृत हैं। फरीद ने भी अपनी रचना में नमाज़ के लिए काफी कठोर शब्दों में प्रेरणा दी है।[72] उन्होंने नमाज़ न पढ़ने वालों को 'कुत्ता' तक कह दिया है और उसका सिर तक उतार देने की बात कही है।[73] उनकी रचना में रोजा सम्बन्धी निर्देश तो नहीं है पर उनका अपना जीवन व्रतों, प्रार्थनाओं और जागरणों की एक लम्बी गाथा है।[74] इस्लाम में निर्दिष्ट आय के चालीसवें भाग के रूप में ज़कात का संकेत न करते हुए फरीद ने सच्चे भक्त के लिए अपने पास कुछ न होने पर भी (जो कुछ प्राप्त हो उसे) बांट देने के लिए कहा है।[75] उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि फरीद शरीयत (बाह्य कर्म काण्ड) में विश्वास रखते थे पर साथ ही वे यह भी स्पष्ट कर देते हैं कि बाह्य कर्म काण्ड मात्र ही उन्हें ग्राह्य नहीं। यदि यह हृदय में ज्ञान की ज्योति जागृत नहीं करता तो इसकी कोई सार्थकता नहीं।[76] सूफी—साधना की विशिष्ट क्रियाओं में जिक्र (जप), फिक्र (चिन्तन), मुराक़ाबा (ध्यान), मुजाहदा (स्वपीड़न) आदि के उल्लेख उनकी रचना और जीवनी दोनों में उपलब्ध हैं। उनके अनुसार परमात्मा का नाम-जप भूल जाने वाले न केवल इस संसार में कष्ट पाते हैं, और इस पृथ्वी पर ही भार स्वरूप हो जाते हैं उन्हें तो कयामत के दिन भी कोई सहारा नहीं मिलता।[77] 'स्वपीड़न' के सम्बन्ध में न केवल फरीद की वाणी में कई उल्लेख हैं इतिहास भी इसकी पुष्टि करता है।

सूफियों में साधना-सोपानों और साधना की अवस्थाओं के सम्बन्ध में

मतभेद है। कुछ सूफियों ने तोबा (पश्चाताप), वरा (संयम), जुहद (वैराग्य), फक्र (दैन्य), सब्र (धैर्य) तवक्कुल (शरणागति), रजा (संतोष) ये सात सोपान और मुराकब, (ध्यान), कुरब (सामीप्य). मुहब्बत (प्रेम), खौफ (भय), शौक (औत्सुक्य), यकीन (निश्चयात्मकता) आदि दस दशाएं स्वीकार की हैं।[78] बाबा फरीद सम्बन्धी विविध उल्लेखों से पता चलता है कि अपने उपदेशों में बार-बार फक्र और तवक्कुल पर विशेष रूप से बल दिया करते थे।[79] उपर्युक्त में से अनेक अन्य सोपान और दशाएं भी फरीद की कविता में मिल जाती है अथवा उनकी जीवनी से पुष्ट हो जाती हैं।[80] इनके अध्ययन से स्पष्ट है कि फरीद की दृष्टि में लोभ, अहंकार, क्रोध, परनिंदा, दुष्कर्मों आदि का त्याग और परोपकार, दया, सहनशीलता सत्संगति आदि का वरण किए बिना परमात्मा से एकत्व की प्राप्ति नहीं हो सकती।[81] फरीद ने स्वयं से प्रश्न करते हुए उत्तर रूह में परमात्मा की प्राप्ति के लिए जो तीन बातें कहीं हैं -- नम्रता (अहंकार नाश.. क्षमा (सहन-शीलता धैर्य), मधुर वचन (प्रभु का नाम स्मरण), वे उनके द्वारा संकेतित साधना-पद्धत्ति का सार कही जा सकती है।[82]

फरीद की विचारधारा के इस किंचित विस्तृत-विश्लेषण के उपरान्त यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि उनकी विचार-सरणि सूफी दिशा में ही प्रवाहित हुई है। अनेक विद्वान इस द्वन्द्व से ग्रस्त रहे हैं कि वे फरीद को सूफी माने या मुसलमान। वास्तव में वे सूफीमत के सम्बन्ध में अपने अल्प-ज्ञान का परिचय ही देते रहे हैं। यह निर्विवाद है कि मुस्लिमेतर विचार-सरणियों से प्रभावित होते हुए भी सूफीमत इस्लामी रहस्यवाद ही है। कतिपय सूफी साधक भले ही मुसलमानों के सामान्य विधि-निषेधों का तिरस्कार कर भी देते हैं तो भी इस्लाम की परिधि के बाहर सूफीमत की कल्पना करना निरर्थक ही है।[83] अतएव हमारी दृष्टि में फरीद मुसलमान भी थे और रहस्यवादी भी या इसे एक शब्द में कहें तो वे सूफी थे। वस्तुत: फरीद के योगदान के अभाव में भारतीय सूफीमत क्या होता यह कहना कठिन है। उनकी महत्ता इस बात में है कि एक विशिष्ट धर्म के अनुयायी होने पर भी उनमें हार्दिक और मानसिक संकीर्णता तथा कट्टरता का अभाव है। उनकी विचारधारा में मानव-मात्र के लिए अनेक उपयोगी और कल्याणकारी तत्व विद्यमान है इसके लिए श्री गुरू ग्रन्थ साहिब में उनकी रचना के सम्मिलन से और बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है ?

---

1. Siyar-ul-'Arfin' P. 23. Quoted in the Life And Times of Shaikh Farid-u'd-Din Ganl-i-Shakar by Dr. K.A. Nizami, P. 21.

2. उनसे संबद्ध 'मलफूज़ साहित्य' की प्रामाणिकता संदिग्ध है। अरबी फारसी के कुछ काव्यांश अमीर खुर्द द्वारा उद्धृत हुए हैं।
3 Oriental Mysticism—E.H. Palmer. P. 22.
4. Sufism And Vedanta, Part I. Dr. Roma Chaudhary, p p 9-10.
5. तै जेवड् मैं नाहि को सभु जगु डिठा हंढि—श्री गुरू ग्रंथ साहिब सलोक सेख फरीद के 5।
6. सच्चे तेरी आस, वही, 125।
7. (क) परवदगार अपार अडम बेअंत तू—वही, आसा 4/1।
(ख) खालकु खता न करी – वही, सलोक सेख फरीद के 115।
8. जिधरि रबरजाइ वहणु तिदाऊ गंउ करे—वही 84।
9. (क) लेखा रबु मंगेसीआ, वही, 38।
(ख) साई बाझऊ आपणे वेदन कहीअै किसु, वही, 10।
(ग) जे तै रबु विसारिआ त रबि न विसरिओहि, वही, 107।
10. (क) बसी रबु हिआलीऐ, वही, 19
(ख) सभना में सचा धणी, वही, 129।
11. Cf Studies in Islamic Mysticism—Nicholson P. 100 Footnote
12. सलोक 59।
13. फरीदा सकर खंडु निवात गुडु माखिउ मांझा दुधु।
सभे वसतू मिठीयां रब न पुजनि तुधु। श्री गुरु ग्रंथ साहिब, सलोक सेख फरीद के, 27।
14. (क) लेखा रबु मंगेसीआ—वही, 38।
(ख) मतु सरमिंदा थी वही सांई दै दरबारि - वही, 59।
(ग) फरीदा साहिब दी करि चाकरी— वही, 60
15. (क) जोबन जांदे ना डरां जे सह प्रीत न जाइ—वही, 34।
(ख) अजु न सुती कंत सिउ, अंगु मुड़े मुड़ि जाइ – वही, 30।
16. फरीदा गलीए चिकड़ दूरि करू नालि पिआरे नेहु—वही, 25।
17. (क वही, 22।
(ख) वही, राग सूही 3/1।
18. शेरुल अजम-शिबली नअमानी, भाग 5, पृ० 147।
19. सूफीमत-साधना और साहित्य—डा० रामपूजन तिवारी, पृ० 276।
20. Cf. Sufi Movement in India—Dr. Md. Enamul Haq, Indo Iranica Vol III, No. 3.

21. श्री गुरू ग्रंथ साहिब, सलोक सेख फरीद के 129, 38
22. वही, 19, 107।
23 वधि थीवहिं दरीआउ टुटि न थीवहि वाहड़ा—वही, 117।
24. द्रष्टव्य सूफीमत - साधना और साहित्य पृ० 280-281।
25. (क) जालण गोरां नाल उलामे जीअ सहे—श्री गुरू ग्रंथ साहिब, राग आसा 8/2।

(ख) हंसु चलसी डुंमणा अहि तनु ढेरी थीसी वही, राग सूही, ललित 3/2।
26. (क) जो सैतानि वैजाइआ से कित फेरहि चित—वही, सलोक सेख फरीद के, 15।

(ख) फरीदा मनु मैदानु करि टोए टिबे लाहि।

अगै भूलि न आवसी दोजक संदी माहि॥—वही, 74।
27. आजु मिलावा सेख फरीद टाकिम कूजड़िआ, मनहू मचिंदड़ीआँ वही, रागआसा 1/1
28. वही, सलोक 92, 19।
29. वही, राग आसा 2/2।
30. द्रष्टव्य Quranic Sufism—Mirvaliuddin, Chapter VI.
31. फरीदा लोडै दाख बिजउरीआं किकरि बीजै जटु।

हंढै उन कताइदा पैधा लोडै पटु॥ - श्री गुरू ग्रंथ साहिब, श्लोक 231।
32. वही, 44।
33. वही, श्लोक 1, 76, 81।
34. वही, 84, 39।
35. अगै दोजक तपिया सुणीऐ हूल पवै काहाहा।—वही, 98।
36. वही, 1।
37. वही, 48, 100
38. चलि चलि गईआं पंखीआ जिनी वसाए तल।

फरीदा सरु भरिआ भी चलसी थके कवल इकल—श्री गुरू ग्रंथ साहिब, श्लोक 66।
39. फरीदा में जानिआ दुखु मुझ कू दुखु सबाइऐ जगि

उचे चड़ि के देखिआ तां घरि घरि एहा अगि—81
40. Cf. Sufism & Vedanta, Part I, P.P. 16-17 & The Secret Rose Garden—Florence Lederer, P. 70.

41. झूठी दुनीया लगि न आपु बनाईऐ—श्री गुरू ग्रंथ साहब आसा 2/2
42. द्रष्टव्य The Idea of Personality in Sufism-Nicholson, P. 59
43. उदाहरणार्थ शेख निज़ामुद्दीन औलिया को प्रदत्त खिलाफत नामा में उल्लेख-देखिए The Life and Times of Shaik Farid-ud-Din Ganj-i-Shakar P. 98.
44 (क) The Encyclopaedia of Islam, Vol IV., P. 286.
(ख) तसंवुफ अथवा सूफीमत—पं० चन्द्रबली पांडे, पृ० 146
45. जो सैतानि बंआइआ से कित फेरहि चित । श्री गुरू ग्रंथ साहिब, सलोक 15.
46. वही, 37
47. वही, सूही ललित 1/2
48. वही, राग आसा —1/2, श्लोक 3
49. वही, श्लोक 125
50. Sufism & Vedanta, Part II, Page 43-44 & Part I, Page 81.
51. श्री गुरू ग्रंथ साहिब, सलोक सेख फरीद के, 7
52. वही, 59
53. वही, 90, 91, 92
54. (क) दुधा थणी न आवई फिरि होई न मेला—वही, सूही ललित 2/2
(ख) वधि थीवहि दरी आउ टुटि न थीवहि वाहड़ा—सलोक 117
55. जा होइ कृपाल ता प्रभू मिलाए—राम सूही 2/1
56. Understanding Islam—Firthjof Schuon Trans D. M. Matheson, P-4.
57. श्री गुरू ग्रंथ साहिब, सलोक 60
58. फरीदा राति कथूरी वंडीऐ सुतिआ मिलै न भाउ
जिन्हा नैन नीद्रांवले तिन्हा मिलन कुआउ - वही, 80
59. वही, राग सूही 1/1
60. वही, राग आसा 3/1
61. वही, राग आसा 1/1
62. Life And Times of Shaikh Farid-ud-Din Ganj-i-Shakar, P. 3.
63. सलोक, 35

64. वही, 36
65 वही, 51, 114
66. Cf Some Religious and Moral Teachings of Al-Ghazzali by Prof Nawab Ali, PP 158-60.
67. अवारिफुल मआरिफ, (पंजाबी अनुवाद) प्रो० गुलवंत सिंह, पृ० 69
68. सलोक, 54, 4, 31
69. इस्लाम के सूफी साधक — निकलसन, अनुवादक — नमर्देश्वर चतुर्वेदी पृ० 26-27
70. Life And Times of Shaikh Farid-ud-Din Ganj-i-Shakar, P. 22.
71. सलोक, 53
72. राग आसा 3/2
73. सलोक 70, 71
74. Shaikh Farid-ud-Din Ganj-i-Shakar, P. 24
75. सलोक, 128
76. वही, 33
77. सलोक 106, राग आसा 1/1
78. Influence of Islam on Indian Culture, Dr. Tara Chand, P. 80.
79. Farid-ud-Din Ganj-i-Shakar, P. 90.
80. कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—
वरा हंसु न कोधरा खाइ 65
जुहद— जिनी वेसी सहु मिलै सोई वेस करेउ — 103
सब्र - सबर अंदरि साबरी तनु एवै जालेन्हि — 116
फक्र —फरीदा रोटी मेरी काठ की लावणु मेरी भुख-28
तवक्कुल – जिन्हा नाउ सुहागणी तिन्हा झाक न होर-114
कुरब-होई नजीकि खुदाइ दे भेतु न किसै देनि-116
81. सलोक 4, 6, 7, 16, 17, 18, 37, 60, 78, 129
82. निवणु सु अखरु खवणु गुणु जिहबा मणीआ मंतु ।
ऐ त्रै भैणे वेस करि ता वसि आवी कंतु ।। --वही, 127
83. देखिए (i) Islamic sufism-Ikbal Ali Shah, Preface P. 14.
(ii) The Mystics of Islam, Nicholson, Introduction, P. 3.

बाबा शेख़ फ़रीद का सन्देश

प्रो० सुखदेव शर्मा

बाबा फ़रीद एक सूफी रहस्यवादी थे। वे उस परम सत्ता में विश्वास रखने वाले थे जो इस समस्त चराचर सृष्टि के संचालन का केन्द्र-बिन्दु है। परम सत्ता से जब आत्मा का रागात्मक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है तो उसे कुछ ऐसी अनुभूतियां होती हैं जिन्हें शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। उसी परम सत्ता के लिये बाबा फरीद ने अल्लाह, प्रभु, बेली, खुदा, परवरदगार, अपार, अगम, अथाह, बेअंत, साईं, रब, प्यारा, सज्जन, सच्चा आदि अनेक शब्दों का प्रयोग किया है। कई स्थानों पर प्रीतम, सहू, कन्त आदि शब्दों का भी प्रयोग हुआ है।

1 जिनि वेसी शहु मिले साई पेस करेड।

2 पैरों थका सिर जुला जेमू पिरी मिलन।

3 ऐ दुई नैना मत छुहओ फिर देखन की आस।

4 फरीदा एऊ लोड़ी शहु अपना तू लोड़सि आंगीमार

5 जे जाना शहु नड़ढा ताँ थोड़ा मान करीं

6 अज न सुती कंत सिऊ अंग मुड़े मुड़ जाये।

बाबा फ़रीद की वाणी में विरह की कसक है बिछुड़ने का दर्द है सिद्धान्त यह है कि आत्मा जितना प्रियतम के विरह में तड़पती है उतनी ही वह परमात्मा को पाने की अधिकारिणी बनती है। इस तड़पन में भी मिठास है रब्बी प्यार के सम्बन्ध में उनका कहना है :-

शकर, खंड, निवात गुड माखओं माझा, दूध
सबे वस्तु मिठियाँ, रब न पुजन तुछ
रब खजूरी पकीया, माखओं नदी वहन

बाबा फ़रीद के अनुसार परमात्मा के प्यार का रंग ही अनोखा है :-

कर साई सिऊ पिरहड़ी रंग नवेला होय।

बाबा फ़रीद ने आत्मा को पत्नी और परमात्मा को पति के रूप में स्वीकार किया है। जिस प्रकार सांसारिक रिश्ते में पति-पत्नी बंधे हुये होते हैं उसी प्रकार आत्मा और परमात्मा भी एक दूसरे के साथ प्रेम सम्बन्ध में जुड़े हुये होते हैं।

बाबा फ़रीद के अनुसार परमात्मा को आसानी से प्राप्त नहीं किया जा सकता। इसके लिये कठोर साधना की आवश्यकता है। सतत प्रयत्न अनिवार्य है। सांसारिक रिश्तों में पति का स्थान सर्वोच्च है। जिस प्रकार पत्नी पति की कृपा प्राप्त करने के लिये नाना प्रकार का श्रृंगार कर सुन्दर बनने का प्रयत्न करती है, सद्गुणों को धारण करती है और पति को रिझाने के लिये अनेक उपाय करती है उसी प्रकार आत्मा को भी अपने पति परमत्मा को पाने के लिये श्रृंगार की आवश्यकता है :-

सबना मन मानक, ठाहुन मूल मया गवां,
जे तऊ पिरीया दी सिक, हिआऊ न ठाहे कहीदा।

बाबा फरीद के अनुसार कठिन तपस्या ही परमात्मा को रिझाने का एक मात्र साधन है।

परमात्मा को पाने के लिये सांसारिक सुख छोड़ने पड़ते हैं :-

फरीदा पाड पटोला धज करो, कम्बलड़ी पहरेअ।

बाबा फरीद की वाणी चिन्तन युक्त है। उन की वाणी में दार्शनिक तत्व बिखेर पड़े हैं। उनके अनुसार मौत का दिन निश्चित है। मनुष्य की आयु कम है। बुढ़ापा जीवन की संध्या है। इन्द्रियां शिथिल हो जाती हैं। शरीर कमजोर हो जाता है। मनुष्य कुछ भी करने में समर्थ नहीं रहता। अत: मनुष्य को अपना अधिकतर समय प्रभु की भक्ति में व्यतीत करना चाहिये और नेकी के काम करने चाहिये। प्रभु को पाने के लिये तड़प जगाओ। तड़प के बिना परमात्मा को नहीं पाया जा सकता। अपने शरीर को मट्टी बना लो। हड्डियों को ईन्धन की तरह जलाओ तभी तुम्हें उस परमात्मा के दर्शन होंगे।

जीवन जांदे न डरां, जे सहो प्रीत न जाय,
फरीदा किती जोबन प्रीत बिन, सुक गये कुमलाए।

आज जब भौतिकता की आंधी ने मानव की दृष्टि को मलिन कर उसे कामुकता, स्वार्थपरता ईर्ष्या-द्वेष, कलह-क्लेश की दलदल में फंसा कर रख दिया है बाबा फरीद का दर्शन और भी अधिक प्रासंगिक हो गया है। आज धर्म, जाति, सम्प्रदाय, भाषा आदि के नाम पर उपद्रव हो रहे हैं मानवता के पुजारी बाबा फरीद की शिक्षाओं की उपादेयता और अधिक बढ़ गई है। उनके अनुसार संसार में केवल एक ही जाति है वह है इन्सानियत ! आओ हम उनके द्वारा प्रतिपादित एवं प्रदर्शित मार्ग का अनुगमन करें यही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

बाबा शेख़ फ़रीद शकरगंज :
सूफीमत एवं भक्ति-परम्परा के संदर्भ में

डा० जय भगवान गोयल

मनुष्य ने अपनी बुद्धि से ज्ञान-विज्ञान के अनेक क्षेत्रों का विस्तार करके मानव-सभ्यता का विकास किया। किन्तु मानवीय भावना अथवा मानवीय मनोवृत्तियों के परिष्कार, उन्नयन एवं उदात्तीकरण में धर्म भावना का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। अध्यात्म चिंतन एवं धर्म-साधना का हमारे यहां सदा आदर होता रहा है। भारतीय धर्म-साधना के कर्म, ज्ञान एवं भक्ति-तीन प्रमुख रूप रहे हैं। भक्ति इनमें सबसे अधिक सरस एवं सरल माध्यम है।

भक्ति की पावन पयस्विनी भारत में अत्यन्त प्राचीन काल से प्रवाहमान रही है। कुछ विद्वानों का मत हैं कि भक्ति का उद्भव दक्षिण में हुआ था। वहीं से इसका आगमन उत्तर भारत में हुआ। इस सम्बन्ध में 'श्री मद्भागवत्' का यह उद्धरण उल्लेखनीय है :

"उत्पन्न द्रविडं साहं वृद्धि कर्नाटके गता।
क्वचितक्वचिन्महाराष्ट्रे गुर्जरे जीर्णतां गता।
तत्रघोर कलेर्योगात् पाखण्डै: खण्डितांगका।
दुर्बलाहं चिरं याता पुत्राभ्याँ सह मन्दताम्
वृन्दावनं पुन: प्राप्य नवीनेव सरूपिणी।"

(मैं द्रविड में उत्पन्न हुई, कर्नाटक में बढ़ी, कभी-कभी महाराष्ट्र में मेरा पोषण हुआ, गुर्जर में जीर्ण हो गई, वहां घोर कलि के कारण खण्डिताँग हो गयी। दुर्बलता को प्राप्त हो पुत्रों सहित धीरे-धीरे वृन्दावन में आई, जहां मैं सुन्दर रूप प्राप्त कर युवती हो गई और अब उत्कृष्ट रूपवाली हूं।

(श्रीमद्भागवत् महात्म्य, 1, श्लोक 48-50)

कुछ विद्वानों की धारणा है कि भक्ति उत्तर भारत में पहले से ही विद्यमान थी। भक्ति के कुछ तत्वों-श्रद्धा, स्तुति, नाम-स्मरण आदि का अन्वेषण वेदों तक में किया गया है, तथापि भक्ति के लिए जिस 'रागात्मक सम्बन्ध' की अपेक्षा की

जाती है, उसका वेदों में अभाव है। उपनिषदों में असंदिग्ध रूप से भक्ति का निरूपण हुआ है। श्वेताश्वतर उपनिषद् में सर्वप्रथम भक्ति के महत्व की सूचना मिलती है :-

यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।
तस्यैते कथिता ह्यर्था: प्रकाश्यन्ते महात्मन: ।

(श्वेताश्वतर उपनिषद् 6/23)

'महाभारत' तथा श्रीमद्भगवद्गीता' में तो स्पष्ट रूप से भक्ति के महत्व का प्रतिपादन हुआ है। भक्ति का विशेष विकास 'भागवत्-धर्म' के अन्तर्गत हुआ। डा० भण्डारकर के अनुसार "पांचवी शती ई० पू० वैष्णव धर्म एकेश्वरवाद के सिद्धांतों को आधार बनाकर धर्म-सुधार आन्दोलन के रूप में खड़ा हुआ, जिसे 'भागवत्-धर्म कहा जाने लगा।"[1] डा० हेमचन्द्रराय चौधरी का मत है कि "चौथी शती ई० पू० में भागवतों की संख्या अधिक थी और दूसरी शती ई० पू० में 'भागवत धर्म' भारत के पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेश में पहुचा। अब अनेक विदेशी भी उसे स्वीकार करने लगे। प्रथम शती ई० पू० तक वह महाराष्ट्र में भी पहुचा, जहां से वह तमिल प्रदेश में गया और फिर वहां से नई गति एवं नया कलेवर ले कर सारे हिन्दू जगत् में फैल गया।[2]

वस्तुत:, द्रविड़ में, विशेषत: तमिल प्रदेश में भी वैष्णव भक्ति का उदय ईसा की कई सौ शताब्दियों पूर्व हो चुका था। "ईसा की आठ नौ शताब्दियों के पूर्व ही आर्यों और द्रविड़ लोगों की संस्कृतियों के सम्पर्क की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई थी और उपनिषद् काल से ही दोनों की विचारधारा का आदान प्रदान होने लगा था।"[3] उपनिषदों में भक्ति का निरूपण हुआ है और इनका समय ई० पू० दसवीं या नवीं शती माना जाता है। उधर तमिल का प्राचीनतम उपलब्ध ग्रंथ 'तोलकाप्पियम' है, जिसमें भक्ति परम्परा की झांकी मिलती है। इसका समय भी ई० पू० पांचवी शती माना जाता है।[4]

इस विवेचन से स्पष्ट है कि उत्तर भारत में भी और दक्षिण भारत में भी भक्ति परम्परा ईसा पूर्व से ही प्रचलित थी। उत्तर भारत में भक्ति परम्परा उपनिषदों आदि से प्रभावित होकर विकसित हो रही थी और दक्षिण में तमिल प्रदेश में द्रविड संस्कृति से पोषित हो रही थी। दक्षिण के वैष्णव भक्तों (तिरूमाल)

1. वैष्णव भक्ति आन्दोलन का अध्ययन (डा. मलिक मुहम्मद)-पृ० 19-20 से उद्धृत
2. वही 3. वही पृ० 30 4. वही

की भक्ति भावना में बड़ी निष्ठा थी। बाद में आलवार भक्तों एवं शैव नायनमारों के माध्यम से इसका खूब प्रचार-प्रसार हुआ और उसने एक 'आन्दोलन' का रूप धारण कर लिया। मध्ययुग में उत्तर भारत में भी सगुण एवं निर्गुण भक्त कवियों ने अपनी सरस संगीतमयी वाणी से इसे जन आन्दोलन का रूप प्रदान किया।

संयोग की बात यह है कि जिस समय दक्षिण के आलवार भक्त (समय पांचवी शती से नवीं तक) परमात्मा के प्रति अपनी भक्ति भावना प्रकट कर रहे थे, लगभग उसी समय ईरान और अरब आदि में सूफीमत का अभ्युदय हो रहा था जिसमें अल्लाह के प्रति अपनी अनुरक्ति व्यक्त करके इस्लाम से सैद्धान्तिक मतभेद प्रकट किया जा रहा था। इधर आलवार भक्तों में आंडाल परमात्मा के प्रति अपनी प्रीति प्रटक कर रही थी, तो उधर राबिया भी अल्लाह के प्रति अपनी प्रणय भावना को व्यक्त करती थी। विद्वानों का मत है कि भारतीय धर्म और दर्शन से अरब तथा ईरान आदि देश ईसा के बहुत पहले से परिचित एवं प्रभावित रहे हैं। सूफीमत पर भी भारतीय दर्शन का प्रभाव स्वीकार किया गया है। ईसा की सातवीं-आठवीं शती में कुछ इस्लाम धर्म प्रचारक दक्षिण भारत में मालाबार के समुद्रतट एवं मैंलापुर (मद्रास) आदि में आने लगे थे। उत्तर भारत में भी मुहम्मद बिन कासिम के आक्रमणों के साथ इस्लाम का प्रवेश आठवीं शती में होने लगा था। दक्षिण में यह समय आलवार भक्तों के प्रचार और प्रभाव का था और उत्तर भारत में हीनयानी सिद्धों और शैवों तथा नाथों का अधिक प्रभाव था। कोई आश्चर्य नहीं कि भारतीय सूफीमत को इन दोनों धाराओं ने प्रभावित किया हो। वैसे भी प्रेम (अनुरक्ति) भक्ति एवं सूफी-साधना का एक ऐसा मूलभूत तत्व है, जो दोनों में समान रूप से अनिवार्यत: विद्यमान रहता है। यही कारण है कि प्रेममार्गी सूफियों का जब भारत में प्रवेश हुआ तो उनकी धर्म साधना का किसी ने विरोध नहीं किया।

वस्तुत:, जब भी दो महान् संस्कृतियों का पारस्परिक साक्षात्कार अथवा टकरावट होती है, तो दोनों ही एक-दूसरे के प्रभाव को ग्रहण करती हैं। यही स्थिति आर्य और द्रविड़ों के सांस्कृतिक समागम से उत्पन्न हुई थी और बहुत कुछ ऐसी ही स्थिति भारतीय संस्कृति के इस्लाम के साथ सम्पर्क में आने से उपस्थित हुई। भारतीय भक्ति-परम्परा तथा सूफीमत ने यथेष्ट मात्रा में एक-दूसरे के

1. (क) वही, पृ० 12-16

(ख) आलवार भक्तों का तमिल प्रबन्धम् (मालिक मुहम्मद)–पृ० 3-4

प्रभाव को ग्रहण किया। सूफियों ने उत्तर भारत में निर्गुण भक्तिधारा के दृढ़ करने में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। पंजाब में निर्गुण भक्ति परम्परा के अभ्युदय में फरीद का महत्वपूर्व स्थान है।

वैसे तो आठवीं शती में ही कुछ सूफी भारत में आ गये थे किन्तु यहां सूफी-मत का वास्तव में प्रचार 11वीं शती में प्रसिद्ध सूफी अल-हुज्विरी के लाहौर आगमन से प्रारम्भ हुआ। फरीद भी 12वीं-13वीं शती के प्रसिद्ध सूफी-संत थे।

सूफीमत का आविर्भाव और विकास मूलत: इस्लाम धर्म के ही अन्तर्गत हुआ। आरम्भ में सूफियों की 'शरीअत' में भी निष्ठा थी, किन्तु बाद में सूफियों में स्वतन्त्र चिन्तन का विकास हुआ और उन्होने इस्लाम से अपना मतभेद प्रकट किया तथा 'शरीअत' की भी अपेक्षा की जाने लगी। जुनैद तथा अल-गजाली जैसे सूफियों का एक वर्ग ऐसा भी था, जो समन्वयवादी थे। फरीद उन्हीं की परम्परा के 'बा-शरह सूफी थे।

फरीद का जन्म 1173 ई० में खोतुवाल (मुलतान) में हुआ था। उनके पिता जमालुद्दीन सूलेमान का सम्बन्ध काबुल के शाही परिवार से था, किन्तु फरीद रूखी-सूखी खाकर मैला कुचैला पहनकर संतोष, त्याग एवं गरीबी का जीवन व्यतीत करने वाले दरवेश थे। उनकी माता बीबी कुरसम, 'हजरतअली' के वंश में से थी और उनकी धार्मिक निष्ठा एवं पवित्र आचरण का प्रभाव फरीद पर संस्कार रूप में पड़ा था, तथापि फरीद किसी सनातन पंथी मुस्लमान की भांति संकुचित नहीं थे। उनकी साधना मूलत: सूफियों की भांति प्रेममार्गी थी। वे उस युग के प्रसिद्ध सूफी विद्वान् ख्वाजा कुतबुद्दीन बखतियार शाह काकी के मुरीद थे, जिन्होने उनकी धार्मिक निष्ठा को दृढ़ किया था।

फरीद अल-गजाली की भांति सिद्धाँती अथवा दार्शनिक नहीं थे। वह प्रधानत: एक साधक थे और साधना के क्षेत्र में वे भारतीय धर्म-साधना, विशेषत: भक्ति से काफी प्रभावित दीख पड़ते हैं। 'नारद भक्ति सूत्र' तथा 'शाण्डिल्य भक्ति-सूत्र' आदि ग्रंथों में भक्ति की परिभाषा इस प्रकार दी गई है :

"सा परानुरक्ति ईश्वरे"

जड़ के प्रति अनुरक्ति लोकिक प्रेम होता है और चिन्मुखी प्रीति भक्ति होती है। भक्ति शास्त्रों में भक्ति को ही परमात्मा की प्राप्ति का सर्वश्रेष्ट साधन माना गया है। सूफियों के लिए भी प्रियतम का प्रेम ही सब कुछ है। शिबली का कथन है कि "प्रेम हृदय में अग्नि के समान है, जो परमात्मा की इच्छा के सिवाय अन्य सभी

इच्छाओं को जलाकर भस्मीभूत कर देता है।"[1] बाबा फरीद ने ईश्वरीय प्रेम के महत्व का प्रतिपादन निष्ठा से किया है। उनके अनुसार "सच्चा वही है, जिसको परमात्मा से हार्दिक प्रेम है, और जो परमात्मा के प्रेम में लवलीन है, वही उनके दर्शन कर सकता है।

दिलहु मुहबति जिनै सेई सचिआ।
जिन मनि होरु मुखि होरु सि कांढे कचिआ। ..(राग आसा)

"जिसे वह प्रेम प्याला मिल गया, उसी का जग में आना सफल है, और जो इस से वंचित रहते हैं, उनके मुख डरावने लगते हैं, यहां वे दुखी रहते हैं और आगे भी उन्हें आश्रय नहीं मिलता।"[2]

पंजाबी के सूफी कवियों के साधक को प्रेमिका तथा परमात्मा को (प्रिय) के रूप में प्रस्तुत किया है, जबकि हिन्दी के सूफी कवियों ने साधक को प्रेमी और परमात्मा को प्रेमिका के रूप में चित्रित किया है। फरीद पंजाबी के प्रथम सूफी कवि हैं। उन्होंने परमात्मा को कंत अथवा सुहु तथा स्वयं को पत्नी रूप में प्रस्तुत किया है। आगे चलकर पंजाबी के प्राय: सभी सूफी कवियों ने उन्हीं की पद्धति का अनुसरण किया। यह पद्धति सर्वथा भारतीय भक्ति-परम्परा के अनुकूल है।

हिन्दी के सूफी कवियों ने लौकिक प्रेम को अलौकिक प्रेम की प्राप्ति का माध्यम माना है। यही कारण है कि उनकी प्रणय अभिव्यक्ति में कभी-कभी ऐन्द्रियता आने लगती है। जायसी जैसा श्रेष्ठ कवि भी जब पद्मावती एवं रत्नसेन के, जो क्रमश: परमात्मा और साधक के प्रतीक माने गये हैं, विवाहोपरान्त के मिलन का चित्रण करता है, तो उनके भोग-विलास का अत्यधिक स्थूल चित्रण करने लगता है। आध्यात्मिक मिलन के ऐसे आनन्दमय क्षणों में शृंगारसुख के ऐसे कामुकतापूर्ण बिम्बों का उभरना यह संकेत करता है, कि कवि की काव्य-चेतना अभी विलासिता के दंश से मुक्त नहीं है। फरीद में इस प्रकार की अनुभूति का सर्वथा अभाव है। वस्तुत, फरीद की प्रेम साधना निवृत्तिमूलक है, जो बहुत कुछ भारतीय धर्म साधना के वैराग्य चिंतन से प्रभावित प्रतीत होती है। वैसे जामी, अल गज़ाली आदि की साधना का भी यही रूप था। संसार एवं शरीर के मिथ्यात्व, असारता एवं क्षण भंगुरता आदि का चित्रण फरीद ने जिस विशदता से

1. सूफीमत साधना और साहित्य पृ० 330
2. श्लोक 106

किया है, उससे भी यही धारणा पुष्ट होती है कि फरीद में 'वैराग्य' की भावना बलवती है। लौकिक सौन्दर्य के मिथ्यात्व का निरूपण करते हुए फरीद कहता है-

फरीदा जिन लोइण जगु मोहिआ से लोइण मैं डिठु ।
कजल रेख न सहदिआ से पंखी सूइ बहिठु ।।14।।

"जिन सुन्दर नेत्रों ने सारा संसार मोह लिया था, जो इतने नाजुक थे कि काजल का बोझ भी नहीं सह सकते थे, अब उनमें पक्षियों ने घर कर लिए हैं"

फरीद के अनुसार शरीर का सारा सौन्दर्य, शक्ति, आकर्षण परमात्मा के प्रेम के बिना व्यर्थ है ।

सांसारिक वैभव एवं ऐश्वर्य की निरर्थकता का चित्रण भी फरीद ने विशदता से किया है । फरीद का कथन है-

पासि दमामे छतु सिरि भेरी सडो रड ।
जाइ सुते जीराणि महि थीए अतीमा गड ।।45।।
फरीदा कोठे मंडप माडीआ उसारेदे भी गए ।
कूडा सउदा करि गए गोरी आइ पए ।।46।।

सभी जीव-धारियों का अन्त 'मृत्यु' है । फरीद के अनुसार मृत्यु का दिवस पूर्व-निश्चित है । कोई भी उसे मिटा नहीं सकता । "जिस दिन वधू ने विवाहित होकर जाना है, वह क्षण उसने लिखवाया हुआ है । मौत का फरिश्ता आकर मुंह दिखाता है और हड्डियों को तोड़-तोड़ कर प्राण निकाल लेता है ।" (श्लोक 1) फरीद ने मृत्यु और दोजख की भयंकरता का वर्णन विशदता से किया है, जिसके आधार पर कुछ समीक्षकों ने उन्हें निराशावादी कहा है, जो उचित नहीं है । निराशावादी व्यक्ति कर्म क्षेत्र से विमुख हो जाता है और अपने मानसिक उत्पीड़न से मुक्ति हेतु आत्महत्या तक करने की सोच सकता है लेकिन फरीद बार-बार शुभ-सात्विक कर्म करने तथा दुष्कर्मों से बचने की एवं परोपकार आदि की प्रेरणा देते हैं । वे न तो पलायनवादी हैं न निराशावादी । यह सांसारिक मोह-माया से वैराग्य की भावना उत्पन्न करने का प्रयास है । संसार की नश्वरता का बोध निरन्तर फरीद को एक सादा, सच्चा, संतोषी, संयमी, सात्विकता एवं उच्चता का जीवन व्यतीत करनें की प्रेरणा देता रहा है । वैराग्य की यह भावना भक्ति-भावना की पोषक है, वल्कि उसका आधार बनती है । सूफियों में भी वैराग्य का महत्व स्वीकृत रहा है । अल-गज़ाली का मत है कि "संसार

का प्रेम और परमात्मा का प्रेम दोनों एक साथ नहीं रह सकते। जो अन्यथा करता है, वह असत्य है।"[1]

सूफियों एवं भक्तों दोनों का लक्ष्य परमात्मा के साथ 'एकमेव' की स्थिति को प्राप्त करना है। फरीद में 'एकमेव' की यह स्थिति नहीं है। हां, इस स्थिति को प्राप्त करने की उत्कट लालसा अवश्य है। उनमें 'वस्ल' तक की स्थिति के दर्शन तो होते हैं। हाल', 'फनाह' एवं 'वका' में से कोई भी अवस्था उनमें नहीं है। हुसैन बिन मंसूर की सी 'अनलहक' की स्थिति भी उनमें नहीं है। सूफियों की साधवा का मूल तत्व अल्लाह का प्रेम है। फरीद के ईश्वरीय-प्रेम में निष्ठा है, दृढ़ता है, पवित्रता है। परमात्मा के प्रति अपनें प्रेम को व्यक्त करते हुए फरीद लिखता है—

फ़रीदा गलीए चिकड़ु दूरि घरु नालि पिआरे नेहु।
चला त भिजै कंबली रहां त तूटै नेहु ॥24॥
भिजउ सिजउ कंबली अलह वरसउ मेहु।
जाइ मिला तिना सजणा तुटउ नाही नेहु ॥25॥

"गली में कीचड़ है, मूसलाधार वर्षा हो रही है, प्रिय का घर बहुत दूर है, जाने से वस्त्र भीगते है और न जाने से प्रेम टूटता है।"

फरीद का मत है, वर्षा मूसलाधार होती रहे, वस्त्र भीग जाएं, किन्तु प्रिय से जाकर अवश्य मिलना है।

फरीद के प्रेम में मिलन की तीव्र उत्सुकता है, आतुरता है, न मिल पाने की तड़प है, एक टीस है, दर्द है। विरह की व्याकुलता है, लेकिन उसमें अन्य सूफियों की भांति उद्विग्नता, उग्रता, प्रचण्डता एवं उन्माद नहीं है। उनकी प्रणयानुभूति में विलक्षण शाँति, स्निग्धता, सयम एवं कोमलता है जो भारतीय भक्ति-पद्धति के बहुत सीमा तक निकट है।

अपनी विरह वेदना को फरीद ने इस प्रकार व्यक्त किया है—

फरीदा रती रतु न निकलै जे तमु चीरै कोइ।
जो तन रते रब सिउ तिन तनि रतु न होइ ॥51॥

फरीद का कथन है कि विरह सभी संवेदनाओं का 'सुलतान' है। जिसके तन में विरह व्याप्त नहीं है, वह शरीर शव समान है।

---

1. Sufis, Mystics and yogis of India, Page 35

विरहा-विरहा आखीए बिरहा तू सुलतान्।
फरीदा जितु तनि बिरहु न ऊपजै सो तनु जाणु मसानु।

विरह की यह भावना भक्ति-परम्परा में भी विद्यमान रही है। कुछ सम्प्रदायों में तो 'विरहासक्ति' को सर्वाधिक महत्व दिया गया है।

परमात्मा के प्रेम के साथ-साथ 'नाम-स्मरण' का महत्व सूफीमत एवं भक्ति में समान रूप से मान्य रहा है। सूफ़ियों का मत है, कि "यदि परमात्मा को पाना चाहते हो, तो 'नाम' का साहचर्य प्राप्त करो, नाम का जाप करो, और विश्वास रखो कि परमात्मा से एकमेव अवश्य होगा, क्योंकि परमात्मा और उसके 'नाम' में कोई भेद नहीं है।"[1] भक्ति-शास्त्रों में भी 'नाम-स्मरण' का महत्व प्रतिपादित है। 'श्रीमद्भागवत्' में भी कहा गया है कि यदि पतित स्खलित अवस्था में भी एक बार परमात्मा का 'नाम-स्मरण' कर लिया जाए, या सुन लिया जाए तो सभी पापों से छुटकारा मिल जाता है।[2] पंचरात्र के अनुसार 'हरि का नाम सर्व-कल्याणकारी है, कलि में इसके अतिरिक्त मुक्ति का और कोई मार्ग नहीं है।[3] मध्ययुग में गोस्वामी तुलसीदास, संत कबीर तथा गुरू नानक आदि संतों ने भी नाम-स्मरण के महत्व का निष्ठापूर्वक निरूपण किया है। फरीद ने भी नाम-स्मरण की महिमा का वर्णन किया है उनके अनुसार जो 'नाम' का स्मरण नहीं करते वे पृथ्वी पर व्यर्थ के भार हैं—

विसरिया जिन सामु ते भोइ भारू थीए। (राग आसा)

'भक्ति-शास्त्रों' के अनुसार माहात्म्य-ज्ञान तथा साधक की 'दैन्यता' भक्ति के दो प्रमुख तत्व हैं। 'नारद भक्ति सूत्र' मे महात्म्य-ज्ञान के महत्व का निरूपण इस प्रकार हुआ है—

सा त्वस्मिन् परम प्रेम रूपा अमृत स्वरूपा च.
तत्रापि महात्म्यज्ञान विस्मृतवाद तद्विहीनं जाराणमिव।

इसी प्रकार बल्लभाचार्य के अनुसार—

महात्म्यज्ञान पूर्वस्तु सुदृढ़ सर्वतोऽधिकः।
स्नेहो भक्तिरीति भोक्तस्तया मुक्ति न चान्था।

महात्म्य-ज्ञान से परमात्मा के प्रति 'श्रद्धा' का भाव जागता है और साधक

1. Sufis, mystics and yogis of India, Page 15
2. श्री मद्भागवद्—xiii—12-46
3. Sufis, mystics and yogis of India, Page 16

आत्म-दैन्य की अनुभूति करके परमात्मा से अनुराग करता है।

फरीद में भक्ति के ये दोनों तत्व प्रचुरता में विद्यमान हैं। परमात्मा को फरीद ने 'अगम, अपार, बेअंत,' (आसा राग-1) कहा है और स्वयं को दूब और घास के समान कहा है जो सभी के पाँवों के नीचे आती है, सभी से प्रताड़ित होती है, तभी प्रभु के द्वार पहुंचती है :

घास फरीदा थीउ पवादी दभु जे सोई लोड़हि सभु।
इक छिजहि बिआ लताडीअहि तां सांई दे दरि दाडीअहि।

भक्तों की ही भांति फरीद ने अपनी दीनता, आत्मग्लानि, पश्चाताप आदि का प्रतिपादन किया है। एक उदाहरण देखिये—

फरीदा काले मैंडे कपड़े, काला मैंडा वेस,
गुनही भरिआ मैं फिरां लोक कहे दरवेसु ॥61॥

फरीद ने 'विनम्रता' के महत्व का भी निरूपण किया है।[1]

भक्ति-भावना के अन्तर्गत 'शरणागति' (प्रपत्ति) एवं अनुग्रह का भी बड़ा महत्व है। फरीद ने भी परमात्मा की शरण में जाकर उनकी 'अनुकम्पा' प्राप्त करने पर बल दिया है। यथा—

तेरी पनह खुदाइ तूं बखसंदगी।
सेख फरीद खैर दीजै बंदगी। (राग आसा)

वह अशरण-शरण है, आश्रयहीनों का आश्रय है। फरीद उस क्षमावान से 'बंदगी' का दान मांगता है। 'वंदना' अथवा 'बंदगी' के महत्व को भी सूफियों एव भक्तों ने समान रूप से स्वीकार किया है।

फरीद में 'दैन्य' एवं विनम्रता तथा शरणागति आदि के साथ-साथ भक्ति के अन्य तत्व-आस्था, निष्ठा, विश्वास, आत्म-समर्पण आदि भी विद्यमान हैं। भक्ति पद्धति में अपने स्वामी (परमात्मा) की 'सेवा' का भी अत्यधिक महत्व है। जिस पर 'दास्य-भाव' की भक्ति आधारित है। सूफियों ने भी परमात्मा की 'सेवा' एवं 'आत्म-समर्पण' के महत्व को स्वीकार किया है। प्रसिद्ध सूफी जामी का कथन है, "हे प्रभु! मेरे शरीर एवं आत्मा का ध्येय केवल आप ही हैं, मैं केवल आपकी सेवा के लिए जीवित हूं, अथवा मरता हूं, जहां कहीं भी मैं जाता हूं, मैं तुम्हें ही खोजता हूं।"[2]

---

1. श्लोक 126. 127
2. Sufis mystics and yogis of India Page 36

फरीद ने भी परमात्मा को अपना 'साहब' कहकर सम्बोधित किया है और उसकी 'चाकरी' (सेवा) मन के सभी भ्रम (शंका) को त्यागकर करने की इच्छा प्रकट की है—

फरीद साहब दी कर चाकरी
दिल दी लाहि भराँद ॥

फरीद पूर्ण 'आत्म-समर्पण' में विश्वास रखते हैं और उनका मत है कि जो सिर परमात्मा के सम्मुख 'बंदगी' में नहीं झुकता, उसे अग्नि में जला देना चाहिए अथवा तलवार से काट देना चाहिए (श्लोक 71-72)। 'श्रीमद्भगवद्गीता' में भी भगवान कृष्ण यही कहते हैं कि "जो मन और बुद्धि से पूरी तरह मुझे समर्पित हैं, वे ही मेरे प्रिय भक्त हैं।"[1]

भारतीय भक्ति-पद्धति विरक्ति एवं ज्ञान से सिंचित है। जैसे कि पहले कहा गया है फरीद की साधना निवृत्तिमूलक थी और संसार एवं शरीर के मिथ्यात्व का प्रतिपादन करके उन्होंने वैराग्य के महत्व का निरूपण किया है। 'ज्ञान' के महत्व को भी उन्होंने स्वीकार किया है। उनमें सूफियों की 'मारिफ' की अवस्था के दर्शन होते हैं। सूफियों का मत है कि इस ज्ञान के द्वारा ही साधक परमात्मा के दर्शन कर सकता है और उसका साक्षात्कार करते हुए उसके साथ एकमेव हो जाता है।[2] गोस्वामी तुलसीदास ने भक्ति के साथ ज्ञान और विरक्ति का बहुत सुन्दर समन्वय स्थापित किया है। गुरू नानक तथा अन्य सिक्ख गुरूओं ने भी भक्ति के साथ विरक्ति और ज्ञान के महत्व का निरूपण किया है। उन्होंने ज्ञान, कर्म, योग आदि की सार्थकता भी भक्ति से ही मानी है।

अस्तु, यह कहना असंगत न होगा कि सूफीमत की प्रेम-साधना और भारतीय भक्ति परम्परा में पर्याप्त समानता है और फरीद में भक्ति के प्रायः सभी तत्व विद्यमान हैं। भारतीय भक्ति परम्परा के ही अनुरूप फरीद की रागात्मकता (अनुरक्ति) भी विरक्ति एवं ज्ञान से समर्थित – संपुष्ट हैं। भक्ति–परम्परा में जिस प्रकार अहंकार के नाश तथा लोभ, मोह, क्रोध आदि को त्याग कर सत्य, संतोष, परोपकार, अहिंसा, विनम्रता आदि को ग्रहण करके सदाचार, त्याग और तपस्या का जीवन व्यतीत करने पर बल दिया गया है, उसी प्रकार फरीद ने

---

1. मय्यर्पित मनो बुद्धियोमद् भक्तस्य मे प्रिय : (गीता)
2. सूफीमत साधना और साहित्य—पृ० 320-21

भी इन सभी के महत्व का प्रतिपादन किया है। सूफीमत में भी इनके महत्व को स्वीकारा गया है।

फरीद ने धर्म को जीवन के प्रत्येक व्यवहार में प्रतिष्ठित करने पर बल दिया। उन्होंने मनुष्य को धर्म का वास्तविक अर्थ समझाया और सही सात्विक जीवन की पहचान दी। संकुचित साम्प्रदायिकता से ऊपर उठ कर मानव-एकता एवं मानव-मंगल की भावना को प्रश्रय दिया। मनुष्य की मनोवृत्तियों का परिष्कार करके उसकी आध्यात्मिक चेतना का विकास किया। मानव को पूर्ण-मानव (इंसानुलकामिल) बनने का मार्ग दिया। सभी मनुष्यों की समानता एवं मानव-प्रेम का प्रतिपादन करते हुए फरीद ने कहा :

सभना मन माणिक ठाहण मूलि मचांगवा।
जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कहीदा ॥130॥

"सभी मनुष्यों के मन कीमती मोती हैं, इन्हें तोड़ना अच्छा नहीं। यदि तू परमात्मा से मिलना चाहता है, तो किसी का दिल न दुखा।"

फरीद की एक विशेषता यह है कि उन्होंने भारतीय परिवेश को अपनी कविता में पूरी तरह आत्मसात् कर लिया है। सम्भवतः वे पहले सूफी कवि हैं, जिन्होंने भारतीय सन्दर्भों को बिम्बों एवं प्रतीकों के रूप में रूपाहित किया है। हिन्दी और पंजाबी के परवर्ती सूफी कवियों ने इस प्रवृत्ति को और आगे बढ़ाया। अन्त में मैं कहूगा कि फरीद की कविता दरवेशी की कविता है। वह पक्की खजूरों एवं शहद के बहते दरियाव की भांति मधुर है। उसमें ईश्वरीय प्रेम का रस है और वह मानवीय प्रेम के पराग से सुरभित है।

फ़रीद वाणी की प्रासंगिकता

प्रो० ब्रह्मजगदीश सिंह

किसी भी महान साहित्य की सबसे बड़ी पहचान यह होती है कि वह सार्वभौमिक और सार्वकालिक होकर सदैव अर्थ पूर्ण और प्रासगिक रहता है। महान साहित्य में मानवीय जीवन से सम्बन्धित और इसे दिशा निर्देश देने वाला कुछ ऐसे मूल प्रश्न उठाए जाते हैं जो किसी भी युग में पुरातन या अप्रासंगिक नहीं होते। मानवीय जीवन में 'होने' (being) से 'बनने' (becoming) तक का जो संवर्ष निरन्तर चलता रहता है महान साहित्य सदा इसी से अपना सरोकार रखता है। चाहे 'होने' से 'बनने' तक मनुष्य का संघर्ष उसकी ऐतिहासक परिस्थितियों तथा इनके प्रति अपनाए गए उसके दृष्टिकोण के अनुसार बदलता तो रहता है लेकिन कभी समाप्त नहीं होता। यही कारण है कि प्रत्येक महान साहित्यकार चाहे उसका सम्बन्ध अलौकिक (Sacred) से हो चाहे लौकिक (profane) से इस संघर्ष को अपने साहित्य का प्रतिपाद्य बनाता है।

शेख फरीद (1173-1265) आज से आठ शताब्दी पूर्व के पंजाब में अवतरित हुए। उन्होंने अपने युग की परिस्थितियों के सन्दर्भ में एक आदर्श पुरुष का मानचित्र आंका। लेकिन इस व्यापक मानचित्र को आंकते समय आपने मनुष्य के आन्तरिक संघर्ष को इतना व्यापक धरातल प्रदान कर दिया कि आज का मनुष्य भी इस मानचित्र को अपना आदर्श बना सकता है। शेख फरीद का मनुष्य एक ऐसा व्यक्ति है जो 'होने' से बनने' तक में भौतिक परिस्थितियों की उलझन से मुक्त है। वह एक स्वतन्त्र व्यक्ति है। मोह-माया के आकर्षण उसे अपने जाल में बांध नहीं सकते तथा न ही वह विकारों के शिकंजे में फंसता है। लेकिन ऐसी व्यक्ति की स्वतन्त्रता बिलकुल निरपेक्ष अथवा प्रतिबद्धता से कोरी नहीं है बल्कि इस स्वतन्त्रता से उसकी प्रतिबद्धता और उत्तरदायित्व जुड़ा हुआ है। यह मनुष्य मोहमाया और बिकारों से तो मुक्त है लेकिन एक आदर्श मनुष्य के विधान का वह पूर्णत: सम्मान करता है। इस विधान के समक्ष वह पूरी तरह

समर्पित है। इस विधान की परिभाषा देते हुए आप लिखते हैं—

> जितु दिहाड़े धन वरी साहे लए लिखाइ ॥
> मलकु जि कली सुणींदा मुहु देखाले आइ ॥
> जिन्दु निमाणी कढ़ीऐ हडा कू कड़काइ ॥
> साहे लिखे न चलनी जिंदु कू समझाइ।
> जिन्दु वहूटी मरणु वरु लै जानी परणाइ ॥
> आपण हथी जोलि के कै गलि लगै पाई ॥

शेख बाबा फरीद की सम्पूर्ण वाणी में जीव रूपी कन्या के सच्ची सुहागिन सिद्ध होने की दास्तां कलमबद्ध है। चाहे बाबा फरीद जी ने अपने श्लोकों में बहुत अन्त में जाकर (126 संख्या) में यह प्रश्न किया है कि किन गुणों अथवा लक्षणों से परमात्मा को वश में किया जा सकता है लेकिन आपकी वाणी संसार का समग्र अवलोकन करने से सहज ही यह तथ्य प्रकट हो जाता है कि प्रत्येक श्लोक की तह में आदर्श जीव (अथवा जीव रूपी स्त्री) बनने की रीति और मर्यादा ही क्रियाशील है।

इन श्लोकों में नैतिक आचारसंहिता (Ethical code) के विवेचन के साथ-साथ वह आध्यात्मिक आकर्षण (Mystical quest) भी भूर्तिमान हुआ है, जिसके अभाव में समूची आचार संहित केवल कर्मकांड बन कर रह जाती है। इस आध्यात्मिक आकर्षण या तलाश को प्रस्तुतकरते हुए आप लिखते हैं—

> दिलहु मुहबति जिन सेइ सचिआ।
> जिन मनि होरु मुखि होरु सि कांढे कचिआ ॥
>
> (आसा राग)

अर्थात् जिस जीव की आत्मा में प्रभु को मिलने की सच्ची इच्छा ही पैदा नहीं हुई, जो विरक्त ही नहीं हुआ, वह अभी कच्चा है, अपरिपक्व है। वह आज एक (आदर्श) की बात करता है कल किसी दूसरे (आदर्श) की बात करेगा। ऐसा मनुष्य न केवल अच्छे आचरण बल्कि अध्यात्मिक परिपक्वता (Metaphysical Maturity) की दृष्टि से भी नाबालिग (कच्चा) ही कहा जाएगा। कई बार ऐसा नाबालिग, बालिग हो ही नहीं पाता। नाबालिग अवस्था में ही वह 'कुसंभे' से प्रीति कर बैठता है, 'मजीठ' के विषय में उसे कोई ज्ञान नहीं होता। ऐसे नाबालिग व्यक्ति को जब उसका स्वामी (परमात्मा) आवाज

देकर पुकारता है तो बहुत देरी हो चुकी होती है। अज्ञानता के कारण ऐसा जीव अपने आपको पहले ही किसी अनुचित सम्बन्ध में बांध चुका होता है। इसलिए जब परमात्मा की आवाज पड़ती तो वह अपने अनुचित सम्बन्धों की शर्म में डूबता हुआ उसके सामने उपस्थित होता है इस स्थिति को स्पष्ट करते हुए शेख फरीद लिखते हैं—

कहै फरीद सहेली हो सहु अला ऐसी।
हंमु चलसी डुंमणा अहि तनु देरी थीसी॥

(सूही ललित)

धन और प्रिय अथवा पत्नी और पति, शेख फरीद की वाणी के दो केन्द्रीय ध्रुव हैं। कई बार यह ध्रुव 'दरवेश/भक्त' और ईश्वर के रूप में सीधे तौर भी प्रस्तुत हुए हैं। फरीद जी के अनुसार सच्चा दरवेश वह है जो वृक्ष जितना विशाल हृदय रखता है। क्योंकि दरवेश होना बड़ा कठिन है। इसे आम सांसारिकता की परम्परा के अनुसार नहीं निभाया जा सकता। फरीद जी का दरवेश शारीरिक सौन्दर्य के पीछे लग कर विलासिता में नहीं डूबता। वह अपनी साधना द्वारा किसी प्रकार का भी भौतिक लाभ नहीं चाहता। संसार की विनाशशील प्राप्तियों के पीछे नहीं भटकता। सब्र-सन्तोष धारण करके अपना निर्वाह करता है और अपनी शक्ति का प्रदर्शन नहीं करता। आत्मिक तौर पर इतना शुद्ध व्यक्ति ही प्रभु की प्राप्ति कर सकता है।

इसी प्रकार फरीद जी ने दरवेश के व्यक्तित्व के कुछ सामाजिक पहलू भी प्रस्तुत किए हैं। फरीद जी का आदर्श मानव अथवा दरवेश बुरे कर्म नहीं करता। हिंसा का उत्तर प्रतिहिंसा में नहीं देता। अपने सज्जनों, मित्रों की सहायता हेतु सदा तत्पर रहता है। किसी से कटुवचन नहीं कहता क्योंकि वह जानता है कि प्रत्येक मनुष्य के हृदय में वही सच्चा 'धनी' (परमात्मा) बसा हुआ है। इस लिए सभी मनुष्य समान हैं बल्कि परमात्मा का अंश होने के कारण आपस में भाई-भाई हैं। 'आदिग्रन्थ' में संकलित अपने 130 (112 + 18 गुरू साहिबान के) श्लोकों में से अन्तिम दो श्लोकों में अपनी विचारधारा का निष्कर्ष निकालते हुए आप कहते हैं।

इक फिका ना गालाइ सभना मैं सचा धनी।
हिआउ ना कैही ठाहि माणक सभ अमोलवे ॥129॥

समना मन माणिक ठाहुण मूलि मचांगवा ।।
जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कहीदा ।।130।

शेख फरीद जी के वाणी संसार में मृत्यु और इसका भय एक निरन्तर सन्दर्भ (केन्द्रीय भाव) है एक स्थान पर आप यह भी लिखते हैं कि जिस दिन आदमी का नडू (नाभि) काटा जाता है उस दिन अगर थोड़ा सा गला भी काट दिया जाता तो उसे इतनी समस्याओं से न उलझना पड़ता। इतने कष्ट न उठाने पड़ते। (श्लोक संख्या 76) इस प्रकार और भी कई श्लोकों में जीवन की विनाशता के बड़े सजीव लेकिन भयानक लिज प्रस्तुत हुए हैं। जैसे :

गोर निमाणी सड करे निधरिआ घर आऊ।
सरपर मैथे आवण मरणऊ ना पती आहु ।।

कई बार ऐसे श्लोक पढ़ कर आज का पाठक उदास हो जाता है और उसके मन में वैराग्य-भाव जगृत हो जाता है। परन्तु फरीद जो जान बूझ कर ऐसा करते हैं। वह जानते हैं कि उनका समकालीन और उत्तरकालीन मनुष्य मोहमाया के आकर्षण में इस कदर उलझा रहेगा कि वह कभी भी वैराग्य की अवस्था तक पहुंचेगा ही नहीं। आज के मनुष्य की भी यही विसंगति है। उसे कभी वैराग्य नहीं होता। मोह-माया के अनुराग में बंध कर वह वैराग्य से बहुत दूर निकल आया है। लेकिन वैराग्य की स्थिति जागृत हुए बिना मनुष्य मनुष्य ही नहीं है। उस अवस्था में तो वह एक राक्षस है जो संसार की प्रत्येक वस्तु को केवल खाने या भोगने की दृष्टि से ही देखता परखता है। फरीद जी मृत्यु के इतने सजीव और यथार्थ चित्र केवल इस लिए अंकित कर रहे हैं ताकि मनुष्य मोहमाया के चक्र से मुक्त होकर कुछ पल के लिए आत्म निरीक्षण कर सके। अपने मानवीय उद्देश्य से स्पष्ट हो सके और फिर उस मानवीय उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपना पूर्ण प्रयास कर सके। पांच समय मस्जिद जाना, चालीस-चालीस दिन कूएं में उल्टा लटकना, मूसलाधार बारिश में कीचड़ में बच बच कर परमात्मा के घर तक पहुंचने की प्रतिज्ञा निभाना यह सब बातें केवल काव्य-प्रतीक के तौर पर प्रस्तुत हुए हैं। इनके केवल शाब्दिक अर्थ ही नहीं है बल्कि यह किसी व्यक्ति के उस आत्म अनुशासन तथा आत्म-प्रतिज्ञा की प्रस्तुति करते हैं जिसके बिना किसी भी युग का व्यक्ति अपने मानवीय उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर सकता।

फरीद जी के श्लोक मानव-जीवन का व्याकरण हैं। इनमें अच्छे ढंग से

जीवन जीने के कुछ सिद्धान्त तथा संकल्प प्रस्तुत हुए हैं। लेकिन मानव जीवन का व्याकरण काफी जटिल और उलझा हुआ है। यह एक फुलकारी के समान है जिसकी उल्टी तरफ से कढ़ाई की जाती है लेकिन सीधी तरफ से ओढ़ा जाता है अज्ञानी पुरुष इसकी उल्टी तरफ से कढ़ाई करके उल्टी तरफ से ही ओढ़ते हैं। फरीद वाणी ऐसे लोगों को उल्टे सीधे का भेद समझाती है। इसी प्रकार दुनियां में मोहमाया का धीमा सा अन्धेरा सदा छाया रहता है। सामान्य व्यक्ति जो जीवन को 'भोगने' तक ही सीमित रखता है अन्धेरे में रहने का अभ्यस्त हो जाता है कि ज्ञान के प्रकाश में उसकी आँखें चुंधिया जाती हैं तथा उसे पहले जितनी दुनियां भी नज़र नहीं आती। इस स्थिति में वह जान बूझ कर अपनी आंखों पर हाथ रख लेता है और ज्ञान के सूर्य को अनदेखा कर देता है ऐसे व्यक्ति की आंखें खोलने के लिए ही बाबा फरीद जी मृत्यु को जीवन के बिल्कुल निकट ला देते हैं। मृत्यु पाद-प्रकाश बन कर जीवन के यथार्थ पर प्रकाश डालती है तथा मनुष्य को जीवन की सारी हकीकत समझ आ जाती है। मृत्यु और जीवन की ऐसी समीपता शेख फरीद के काव्य लोक की सब से बड़ी पहचान है। यह पहचान एक आधुनिक व्यक्ति के लिए भी उतनी ही प्रासंगिक और अर्थ पूर्ण है जितनी यह आज से कई शताब्दी पूर्ण के मनुष्य के लिए थी।

बाबा फरीद जी के वाणी-जगत में मृत्यु के शारीरिक पक्ष से उसके अशारीरिक पक्ष को चित्रित करने पर अधिक बल दिया गया है। शेख फरीद के समकालीन संसार में राजनैतिक अस्थिरता तथा उथल पुथल मची हुई थी। बाबा जी अभी दो वर्ष के ही होंगे जब शहाबूद्दीन ने मुलतान को जीता और लूटा। सन् 1192 तक उसने पंजाब पर कई आक्रमण किए तथा अन्त में गजनवी राज्य को समाप्त करके गौरी घराने का राज्य स्थापित कर दिया। निज़ामी के अनुसार "बाबा फरीद ने पंजाब में गजनवी राज्य का अन्त, गौरी का आगमन राजपूत शक्ति का समापन तथा तुर्कों का हिन्दुस्तान को अधीन करना देखा। उसने मंगोलों को भारत के द्वारों पर खट खट करते भी सुना तथा इनके आक्रमणों से पैदा हुई घबराहट तथा डर भी देखा। वह अभी तीस वर्ष के ही थे जब शहाबुद्दीन मुहम्मद गौरी मारा गया तथा बाबा फरीद जी 90 वर्ष के हो गए थे जब कई गुलाम बादशाह कुतबुद्दीन एबक. अल्तमश तथा रजिया जैसे शहनशाहों की मृत्यु के बाद बलबन दिल्ली के तख्त का स्वामी बन बैठा था।

भले ही शेख फरीद का युग राजनैतिक अस्थिरता और युद्धों का युग था,

मृत्यु मनुष्य को सदा सामने खड़ी नजर आती थी। लेकिन आम आदमी के लिए मृत्यु का अर्थ है सब कुछ खत्म हो जाना। वह मृत्यु के केवल शारीरिक अर्थ ही जानता है। इसी लिए वह मृत्यु को निकट देख कर अधिक घबरा जाता है। छीना झपटी करने लगता है ताकि वह अपने पीछे रह जाने वाले परिवार के लिए अधिक से अधिक धन इकट्ठा कर सके। मृत्यु का ऐसा भय मनुष्य को इन्सान की अपेक्षा हैवान अधिक बना देता है। बाबा फरीद जी मृत्यु का ऐसा संकल्प प्रस्तुत नहीं करते। मृत्यु उनके लिए कोई गमी या नाशादी नहीं बल्कि एक खुशी और शादी है। अनेक श्लोकों में आपने मृत्यु को विवाह और जीव को दुल्हन के रूप में प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार मृत्यु जीवन का कोई निराशावादी अन्त नहीं बल्कि वास्तविक और सहज जीवन का प्रवेश का द्वार है। इस प्रवेश द्वार को पार करने के बाद मिलने वाली जिन्दगी की रूपरेखा व्यक्ति के किए हुए कर्मों के अनुसार अच्छी या बुरी होगी। मृत्यु का ऐसा आशावादी संकल्प ही मनुष्य को जीवन में अच्छे कर्म करने की प्रेरणा दे सकता है।

शेख बाबा फरीद जी के समकालीन पंजाब के समान ही आज का पंजाब भी राजनैतिक अस्थिरता तथा सामाजिक उथल-पुथल की स्थिति में से गुजर रहा है। मृत्यु आज भी चारों तरफ प्रधान दिखाई देती है। लेकिन आज का मनुष्य भी मृत्यु के केवल शारीरिक अर्थ ही ले रहा है। इसी लिए मृत्यु को अपने बिल्कुल निकट जानकर भी वह लूट पाट करना नहीं छोड़ रहा है। ऐसे अज्ञानी पुरूष के लिए शेख फरीद जी की वाणी ज्ञान के नए द्वार खोलती है। मृत्यु के बाद मिलने वाले जीवन के विषय में बता कर उसे शुभ कर्मों की ओर प्रेरित करती है तथा अशुभ कर्म करने का निशेध करती है। वर्तमान स्थिति में शेख बाबा फरीद की वाणी की प्रासंगिकता का महत्व और भी बढ़ गया है।

बिरह बिरह आखीए

डा० रश्मि खुराना

रसराज श्रृंगार का मानव जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। नर-नारी का एक दूसरे के प्रति अनुरक्त रहना श्रृंगार के लिए स्पृहणीय है। श्रृंगार रस में स्थायी भाव 'रति' की जागृति संयोग एवं वियोग दोनों स्थितियों में होती है। नायक-नायिका के मिलन अथवा समागम से जो अनुराग हृदय में आविर्भूत होता है वह संयोग श्रृंगार कहा जाता है, किन्तु जहां "रति भाव प्रकर्ण तो प्राप्त करे, लेकिन अभीष्ट को न पा सके, वहां विप्रलम्भ श्रृंगार कहा जाता है। इस प्रकार आचार्यों ने अभीष्ट की अप्राप्ति ही विरह की निष्पत्ति के लिए आवश्यक मानी है। विप्रलम्भ अथवा वियोग का जीवन में और तदनुरूप साहित्य में विशेष महत्व है। काव्य के उदय में विरह और करूणा वैदिक काल से ही पाई जाती है। भारत के अति प्राचीन काल ऋग्वेद से लेकर अधुनातन कालों में इस भाव के विभिन्न रूप मिलते हैं।

भारतीय धर्म साधना में भक्तों ने जो साधना की उसमें स्वयं को पत्नी मान कर पुरुष रूपी परमात्मा के प्रति अपना प्रेम अभिव्यक्त किया है। प्रेम का यह दिव्य रूप है जिसका आलम्बन सूक्ष्म अनिवर्चनीय है। ऋषियों, सन्तों और भक्तों ने इस दिव्य प्रेम की अनेक रूपों में अनुभूति प्राप्त की, लेकिन उन्होंने अनुभव किया कि यह "अकथ कहानी प्रेम की" है। अत: इसके लिए उन्होंने लौकिक प्रेम का आश्रय लिया। उन्होंने अनुभव किया कि माधुर्य भाव में ही उस प्रेम की सरल अभिव्यंजना की जा सकती है। साथ ही तीव्र विरहानुभूति को भी अभिव्यक्त किया जा सकता है। निर्गुण, निराकार, अव्यक्त ब्रह्म के प्रति उन्होंने प्रेम के जिस रूप की अभिव्यक्ति की वह सूक्ष्म है और इन्द्रिय-जन्म ज्ञान से परे है।

पंजाबी ज़ुबान के पहले शायर. अरबी-फारसी के आलम, रूहानी रहनुमा, समाज-सुधारक, नेकी, पवित्रता, सादगी और मुहब्बत की प्रतिभूर्ति सूफी-सन्त

बाबा शेख फ़रीद इसी साधना मार्ग के पथिक थे। सन् 1173 ई० में मुलतान के एक छोटे से गांव खोतवाल में जन्मे शेख फरीद ने जीवन पर्यन्त लोगों की बेलौस सेवा की। विनम्रता उनकी रग-रग में समाई हुई थी। बाबा फरीद अपने जीवन काल में सदैव टूटे हुए दिलों को जोड़ने में ही लगे रहे। अजोधन जो आज पाक पटण के नाम से प्रसिद्ध है, वहाँ फरीद जी ने लगभग 20 वर्ष खुदा की याद में गुजारे। फ़रीद अरबी भाषा का एक शब्द है जिसका अर्थ है— विलक्षण, अद्वितीय, बेजोड़, नायाब। बाबा फ़रीद की वाणी में मिठास रस इतनी थी कि लोग उन्हें 'गंजे शकर' यानि मिठास का खजाना कहा करते। इस मिठास के साथ उनकी वाणी उनकी कथनी से बहुत ऊंचाइ और गहराई थी। इस बात का सबूत है श्री गुरू ग्रन्थ साहब में उनकी वाणी का सुशोभित होना।

बाबा शेख फ़रीद प्रेम को परमेश्वर की प्राप्ति का साधन मानते थे। जैसे जैसे प्रेमी (साधक) का प्रेम पकता है वह प्रियतम के और करीब होना चाहता है। प्रियतम से पल भर का विछोह भी वह सहन नहीं कर पाता। विरह प्रफुल्लित हो रहे प्रेम की अनूठी अवस्था है जिसमें प्रेमी प्रेम का रसिया बन रहा होता है। उस से रस का स्रोत परे हटा लेना मछली से जल, चकोर से चांद छीनने से कम नहीं।

बाबा शेख फ़रीद ने प्रेम में विरह भाव को श्रेष्ठ मानते हुए कहा है

विरहा विरहा आखीऐ विरहा तू सुलतानु
फ़रीदा जितु तन विरहु न उपजै सो तनु जाण मसानु

वह तन मृतप्राय: है जिसमें प्रियतम (प्रभु) प्राप्ति की तड़प नहीं।

अपने महबूब से मिलन की तड़प की बात कहते हुए शेख फ़रीद फरमाते हैं 'महबूब से मिलन में रूकावटें हैं। ऐ फरीद गली में कीचड़ है, उसका घर दूर है। किन्तु मुझे प्रियतम से अनन्य प्रेम है। अगर मैं जाऊं तो कमली भीग जाएगी और अगर न जाऊं तो प्यार टूट जाएगा—

"फरीदा गलीए चिकडु दूरि घरू नालि पिआरे नेंहु ॥
चला ता भिजै कंबली रहां त तुटै नेहु ॥"

किन्तु प्रभु प्रियतम के प्रेम में सराबोर हुई बाबा फ़रीद की आत्मा यह जानती है कि विरह वह भट्टी है जिस में तप कर प्रेम सुघड़ होता है।

कंबली चाहे भीग जाए, खुदा मेह बरसाए, पर मैं अपने प्रियतम से जाकर जरूर मिलूंगा, ताकि मेरा प्रेम न टूटने पाए—

भिजउ सिजउ कंबली अलह बरसउ मेहु ॥
जाइ मिला तिन्हा सजणा तुटउ नाही नेहु ॥"

प्रियतम से विछोह की अकथ वेदना, अपार पीड़ा हृदय में हूक और मन में कसक पैदा करती है ।

'मेरी तो आज ही अपने प्यारे से मुलाकात न हुई तो मेरा अंग अंग टूट रहा है । कोइ उस बदनसीब औरत से जिसके शौहर ने उसे छोड़ रखा है, जाकर यह पूछे कि तेरी रातें कैसी गुज़रती हैं—'

अजु न सुती कंत सिउ अंगु मुड़े मुड़ि जाइ ॥
जाइ पुछहु डोहागणी तुम किउ रैणि बिहाइ ॥

शेख फरीद जी विरह को सच्चे प्रेम की निशानी मानते हैं । विरह प्रेम को प्रकट भी करती है और हठ भी ।

"जो औरत नहा धो कर और साज शृंगार करके अपने पति के इन्तज़ार में जागनें की बजाए बेफिक्र होकर सो जाती है, वह मानो कस्तूरी की सुगन्ध गंवा बैठती है और हींग की नथड़ी मात्र रह जाती है —'

"नाती धोती संबही सुती आइ नचिंदु
फरीदा रही सु बेड़ी हिङु दी गई कथूटी गंधु ।।"

फ़रीद मानते हैं कि प्रभु प्रेम के अभाव में न जाने कितने यौवन निरर्थक बीत गए ।

"अगर मेरे मालिक से मेरा प्यार न टूटे, तो मुझे अपनी जवानी के गुज़र जाने का कोई अंदेशा नहीं । ऐ फ़रीद ! प्यार विहीन कितने ही यौवन कुम्हला कर सूख गए—"

"जोबन जांदे न डरां जे सह प्रीति न जाइ ।
फरीदा किनी जोबन प्रीति बिनु सुकि गए कुमलाइ ॥

साधक की साधना जब उस चरमबिंदू पर पहुंचती है जहां प्रभु ही उसके प्राणों का आधार बन जाते हैं—ऐसी स्थिति में फ़रीद कहते हैं, "ऐ फ़रीद जो लोग खुदाई इश्क में रंगे हैं, उनके तन में लहू नहीं होता, उनके शरीर को यदि चीरा

जाए तो रत्ती भर भी रक्त नहीं निकलता—"

"फरीदा रती रतु न निकलै जे तनु चीरै कोइ ॥
जो तन रते रब सिउ तिन तनि रतु न होइ ॥"

प्रेम की इन्तहा में प्रेमी को स्वयं की सुध बुध नहीं रहती। ऐ फरीद! शरीर सूरत का ढाँचा मात्र रह गया है। कौए तलवों को ढूंढने लगे हैं। किन्तु बन्दे की किस्मत देखो कि अभी भी परमात्मा से एकाकार नहीं हुआ—

"फरीदा तनु सुका पिंजरू कीआं तलीआँ खूंडहि काग।
अजै सु रबु न बाहुड़िओ देखु बंदे के भाग।"

विरह की पराकाष्ठा को पहुंच बाबा फरीद की आत्मा पुकार उठती है—

"ऐ कौए! ये मेरा सारा ढांचा (पिंजर) तूने ढोंग लिया है और सारा मांस खा लिया है। पर ईश्वर का वास्ता मेरी इन दो आंखों को न छेड़ना। क्योंकि मुझे अपने प्रिय को देखने की आरजू है"

"कागा करग ढढोलिआ सगला खाइआ मासु।
दुइ नैना मत छुहउ पिर दुखन की आस॥"

प्रेममार्गी अन्य साधकों की भांति शेख फरीद यह मानते हैं कि विरह प्रेम की संजीवनी शक्ति है—

"विरह ज्वर से मेरा अंग अंग जल रहा है। बेचैनी में मैं अपने हाथों को मरोड़ती हूं। प्रियतम से मिलने की लालसा ने मुझे पागल बना दिया है। मुझे उससे मिलने की बेचैनी है। स्वामी के गुणों की पहचान न कर पाने के कारण ही लोग उनसे बिछुड़ जाते हैं। प्रियतम से विलग होकर क्या कभी किसी को सुख मिला है।"

"तपि तपि लुहि लुहि हाथ मरोरउ, बावलि होइ सो सहु लोसु।
तै सहि मन महि कीआ रोसु, मुझे अवगुण सहि नहीं दोषु
पिरहि बिहून कतहि सुखु पाए जा होइ कृपालु ता प्रभु मिलाए॥"

इस वेदना में भी फ़रीद एक अनूठे आनन्द का अनुभव करते हैं "मेरा जिस्म तंदूर की भांति तप रहा है, हड्डियाँ इंधन की तरह जल रही हैं, अगर मेरा मालिक मुझे मिल सके तो मैं पांव थके होने पर सर के बल चलने लगूं—"

"तनु तपै तनूर जिउ बालणु हड बलन्हि॥
पैरी थकां सिरि जुलां जे मूं पिरी मिलन्हि॥"

प्रभु-प्रेम में विलिप्त विरहिणी आत्मा के लिए फ़रीद प्रभु प्राप्ति का जो मार्ग सुझाते है वह है नम्रता, क्षमा, मधुर बोल –

"वह कौन सा हर्फ है, कौन सी कला है कौन सा अमूल्य मन्त्र है और कौन सा भेष है जिसे अपना कर मेरा मालिक मेरे वश में हो जाए –

नम्रता ही वह अक्षर है, क्षमा ही वह गुण है तथा मधुर वाणी ही वह मन्त्र है जिससे भगवान वश में हो जाते हैं। सद्गुणों को धारण कर पति परमेश्वर से मिलन की निरन्तर कामना करने से ही प्रियतम प्रभु वश में हो जाते हैं –"

"कवणु सु अखरू कवणु गुणु, कवणु सु मणीआ मंतु।
कवणु सु वेसो हउ करी, जितु वसि आवै कंतु॥
निवणु सु अखरू खवणु गुणु जिहवा मणीआ मंतु
ए जै भैणे बेस करि ता वसि आवी कंतु॥"

बाबा शेख फ़रीद ने अपनी प्रेम-मार्गी साधना द्वारा विश्व बन्धुत्व का सन्देश दिया है। विरह से प्रेम का सौन्दर्य द्विगुणित होता है। उसमें अलौकिक शक्ति का संचार होता है। अपने को मिटा देने की उत्कट इच्छा होती है यह अपने को मिटा देने की तीव्र इच्छा, निज-सुख त्याग की भावना 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' की ओर अग्रसर करती है।

फरीद काव्य : सामाजिक सार्थकता का संकल्प

प्रो० जसपाल सिंह

समाज भौतिक गति का सर्वोत्तम सामाजिक रूप है। यह लोगों के विभिन्न भौतिक और आध्यात्मिक सम्बन्धों की जटिल गतिशील प्रक्रिया का प्रतिनिधित्व करता है। समाज की संरचना भले ही बाहर से सरल प्रतीत होती है लेकिन इसके निर्माण की जटिलता का समझना सामान्य व्यक्ति की बुद्धि से बाहर की बात है। इसका निर्माण मानवीय सम्बन्धों की गतिविधियों और मानसिक प्रतिक्रियाओं की जटिलता के कारण अधिक पेचीदा बन जाती है। सामाजिक ताने में उलझी हुई मानवमन की तारें प्रत्येक पल एक ऐसी प्राप्ति की इच्छा करती रहती है जो इस उलझन को सुलझाने में सहायक हो सके और इस प्राप्ति का मुख्य रूप साहित्यिक कला कृतियां ही रहा है। किसी कला/काव्य की सामाजिक सार्थकता तत्कालीन समाज को सही दिशा निर्देश प्रदान करने में निहित होती है। जीपलेखानोव का कथन है "कला का कर्त्तव्य है कि मनुष्य की चेतना के विकास में सामाजिक प्रबन्ध को श्रेष्ठ बनाने में सहायक हो।" सामाजिक प्रबन्ध को श्रेष्ठ बनाने के लिए कार्यशाली व्यक्तियों को भी दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है। एक वे जो समाज को श्रेष्ठ बनाने के लिए किसी मूल भौतिक ढांचे में परिवर्तन के पक्षधर हैं तथा दूसरे वे जो मनुष्य को उसके क्षणभंगुर जीवन से परिचय करवा कर उसे सच्चे और अच्छे जीवन मूल्यों को अपनाने, पारस्परिक प्रेम और सहयोग आदि का सन्देश देते हैं। दूसरी श्रेणी में आध्यात्मवादी दार्शनिक आते हैं।

पंजाबी के प्रथम कवि और सूफी दरवेश बाबा फरीद जी की वाणी का अध्ययन करने के बाद जब उपरोक्त सन्दर्भ में हम फरीद काव्य को देखते हैं कि चिश्ती सम्प्रदाय से सम्बन्धित फरीद साहिब ने अपनी शहद से भी मधुर वाणी से लोगों की मानसिकता को बदलने में जितनी बड़ी भूमिका अदा की शायद उस समय के शासकों की तलवार भी न कर सकी। इसका तात्पर्य यह नहीं कि हिन्दुओं द्वारा इस्लाम धर्म धारण करने में फरीद जी को कोई राजनीतिक लाभ

प्राप्त होना था, अपितु वास्तविकता तो यह थी कि जिन मानवीय गुणों का उपदेश फरीद जी ने दिया वे उस समय के दूसरे धर्मों में लगभग लुप्त थे। शरई (सैद्धान्तिक) जीवन व्यतीत करने वाले बाबा फरीद अल्लाह की इबादत को सर्वोच्च समझते थे जिसने सृष्टि की रचना की है और मनुष्य को पृथ्वी पर भेजा है जिस पृथ्वी के स्पर्श हेतु देवता भी तरसते हैं। पांच समय नमाज़ अदा करना प्रत्येक मुसलमान के लिए अनिवार्य है। जो ऐसा नहीं करता उसे फरीद जी कुत्ता तक कह देते हैं क्योंकि प्रभु-प्रेम के समक्ष धन, जवानी, ऐश्वर्य सब निरर्थक हैं। आप कहते हैं।

जोबन जांदे न डरां, जे सह प्रीति न जाई,
फरीदा किती जोबन प्रीत, बिन सुक गए कुमलाइ ॥

प्रभु से प्रेम करने वाले हृदय में ही सामाजिक जीवों के प्रति प्रेम की भावना पनप सकती है। क्योंकि प्रभु-प्रेम में मस्त व्यक्ति ही स्वार्थ सिद्धि से रहित हो सकता है। फरीद जी ने स्वार्थ रहित मनुष्य को ही उत्तम मनुष्य माना है। उनका पावन विचार है कि जब इस पृथ्वी पर कोई पीर पैगम्बर सदा के लिए नहीं रह सका तो हे सामाजिक प्राणी तुम्हें भी इस धरती के रसों, स्वादों में अपने आपको नष्ट नहीं करना चाहिए। सामाजिक जीवन की वास्तविकता से परिचित कराते हुए आप लिखते हैं।

"जे सउ वरियां जीवना, भी तन होसी खेह"

तो फिर क्यों न इस जीवन को किसी अच्छे काम में लगाया जाए आपने अपने अनेक श्लोकों में मधुर बोलनें, नम्रता धारण करने, आत्म निरीक्षण करने, मन की पवित्रता, सफलता और सन्तोष आदि आदर्श गुणों को धारण करने के लिए प्रेरणा दी है।

फरीद जी ने आत्म निरीक्षण के गुण को धारण करने पर बल दिया है। यह विचार शायद पंजाबी काव्य में प्रथम विचार था। हमारी समझ में किसी भी समाज के ढांचे को आदर्श बनाने के लिए आत्म निर्णय का विचार, जितना फरीद जी के समय में कारगर था उससे कहीं ज्यादा आज के युग में लाभदायक और सार्थक है। यदि व्यक्ति अपने अन्दर झांक कर अपने अवगुणों को समाप्त कर ले तो निश्चय ही सारा समाज उत्तम समाज बन जाएगा। फरीद जी लिखते हैं।

फरीदा जे तू अकलि लतीफ, काले लिख न लेख ।
आपनड़े गिरीवान महि सिर नीवा कर देख ।

सामाजिक तनाव के बहुत से कारणों में से मधुर बोलने तथा नम्रता का अभाव आदि प्रमुख हैं। जब तक मनुष्य नम्रता धारण नहीं करता तब तक उसकी वाणी में मधुरता नहीं आ सकती। फरीद जी ने मनुष्य को मृत्यु की अटलता का एहसास करवा कर भ्रातृत्व की सांझ को और दृढ़ करनें की प्रेरणा दी है। यह दोनों विचार मानवीय आदर्श सामाजिक ढांचे के लिए आज भी उतने ही गुणवान हैं जितने 12वीं 13वीं सदी में मूल्यवान थे। मधुर बोलने और नम्रता का उपदेश देने वाली आपकी अमूल्य पंक्तियां इस प्रकार हैं।

(क) इक फिका न गालाइ सभना मैं सचा धनी ।

(ख) निवन सु अखर खवण गुण जिहवा मणीआ मंत ।

बाबा फरीद जी ने सामाजिक व्यवहार में से अनैतिक मूल्यों को निष्कासित करने पर बल दिया है जिनके कारण मनुष्य कुमार्ग पर चल पड़ता है और इन्हीं बुरे कर्मों के कारण उसे मृत्यु के बाद परमात्मा के दरबार में शर्मिन्दा होना पड़ता है। फरीद वाणी गुणों से रहित कर्मों को छोड़ने की प्रेरणा देती है।

"फरीदा जिनी कंमी नाहि गुण ते कंमड़े विसारि।
मतु शरमिंदा थीवहि साई दे दरबारि ॥"

अच्छे मार्ग दर्शन के बावजूद भी अगर मनमुख बुरे काम करने से नहीं हटता तो फरीद जी ने ऐसे बुरे मनुष्य का भी भला करने की सलाह दी है ताकि सामाजिक जीवन में टकराव के कारण अशान्ति न फैल जाए।

"फरीदा बुरे दा भला कर गुस्सा मन न हड़ाइ ।"

बुरे का भला सोचने वाला व्यक्ति एक तो शारीरिक रोगों से बचा रहता है दूसरे अन्त में उसे परमात्मा के समक्ष शर्मिन्दा नहीं होना पड़ता।

उपरोक्त विवेचन के सन्दर्भ में हम कह सकते हैं कि फरीद जी ने अपनी सम्पूर्ण वाणी द्वारा जीवात्मा को मृत्यु का भय और संसार की क्षणभंगुरता से परिचित कराया है और उसे आत्म निरीक्षण, नम्रता मधुरवाणी और सन्तोष जैसे अमूल्य गुणों को धारण करने का जो उपदेश दिया है वह आधुनिक समाज के लिए भी उतने ही मूल्यवान और सार्थक है जितने फरीद-युग में थे। आवश्यकता है इन गुणों को धारण कर एक आदर्श समाज के निर्माण करने की।

फरीद वाणी का महत्व

श्रीमति अर्चना वैद

फरीदा दुखु सुख इकु करि दिल ते लाहि विकारु
अकह भावै सो भला तां लभी दरबारु

संसार में महान् पुरुष समय-समय पर पैदा होते रहते हैं, उनके बताये हुए आदर्श एवं उनके सन्देश भूले-भटके लोगों को प्रेरित करते रहते हैं। उनकी रचनायें तत्कालीन समाज के अन्धकार को ही दूर नहीं करती बल्कि युगों युगों तक समाज को प्रकाशित करती रहती है। बाबा फरीद भी ऐसे ही महापुरुषों में से एक थे। बाबा फरीद ने 12वीं शताब्दी में पंजाब की भूली-भटकी जनता को जो सन्देश दिया वह उस समय के समाज में ही नहीं बल्कि आज भी लोगों का मार्ग-दर्शन करता है।

बाबा फरीद एक मनमोहक और आकर्षक व्यक्तित्व के स्वामी थे। वह एक महान कवि, दार्शनिक और धार्मिक व्यक्ति थे। वह पहले सशक्त प्रामाणिक सूफी कवि थे। उनका जन्म शेख जमालुद्दीन के घर बीबी कुरशूभ की कोख से सन् 1175 में गाँव कोठीवाल जिला मुलतान में हुआ। आप ने अपनी आरम्भिक शिक्षा अपने गांव कोठीवाल से ही प्राप्त की। आप ने अपनी नियमित शिक्षा मुलतान के मौलाना मिनहाजुद्दीन तिरमिजी से प्राप्त की। गुरू की अपार कृपा आप पर थी इसलिए ज्ञान का असीम भण्डार आप ने उनसे प्राप्त किया।

आप ने एक से अधिक विवाह किये। आपके घर 5 लड़के और तीन लड़कियां पैदा हुई। आप सांसारिक होते हुये भी इस संसार से अलग रहे। 24 घन्टे में एक बार कुरान शरीफ का अध्ययन आप जबानी कर लेते थे। एक दिन ईशा की नमाज तीन बार आप ने पड़ी और बेहोश हो गये। सन् 1265 में आप अपनी सांसारिक यात्रा पूरी करके परमात्मा की शरण में चले गये। आप सिर्फ पंजाब के पीर और फकीरों में ही नहीं बल्कि समस्त भारत के सूफी सन्त स्वीकार किये जाते हैं। आपकी महानता का सब से प्रसिद्ध पहलू यह है कि तीन शताब्दियों तक आप की प्रसिद्धि सुन कर श्री गुरू नानक देव जी स्वयं चल कर पाकपटन (जो अब पाकिस्तान में है) गये और बाबा जी के बाहरवें उत्तराधिकारी शेख ब्रह्म जी को मिले उनसे आपकी वाणी प्राप्त की जिसको बाद में पांचवें गुरू अर्जुन देव जी ने 'आदिग्रन्थ' की स्थापना के समय भक्तों की वाणी के साथ

'गुरू ग्रन्थ साहिब' में शामिल किया। यह ग्रन्थ मध्ययुगीन बोध एवं इतिहास का सार्थक दस्तावेज स्वीकार किया जाता है पंजाबी और हिन्दी साहित्य के इतिहासों के लिए यह ग्रन्थ एक ओर प्रामाणिक स्रोत है तो दूसरी ओर दर्शन का पुंज। इस महान ग्रन्थ में आपके 118 श्लोक और 4 शब्द (दो सूही राग में और दो आसा राग में) शामिल हैं। आपकी बहुत सी रचनायें अब तक विवादस्पद बनी हुई हैं।

बाबा फरीद ने प्रभु की भक्ति की ओर मनुष्य का मन आसक्त हो ऐसी प्रेरणा आपने अपने भक्तों को दी। इसके अतिरिक्त आपकी रचनाओं में दया, माया, प्रेम, अगाध विश्वास, भाईचारा, त्याग, नम्रता, सहनशीलता और सेवापरक भावना देखी जाती है। परमात्मा को प्राप्त करना मनुष्य की चरम्-परिणिति है। आत्मा भटकती रहती है। जब तक वह अपने प्रिय परमात्मा को प्राप्त नहीं कर लेती। बाबा फरीद के अनुसार शरीर नाशवान है।

फरीदा उमर सुहावड़ी सेगि सुवंनड़ी देह।
विरले केइ पाई अनि जिनां पिआरे नेह॥

बाबा जी ने जीवन को व्यर्थ के जंजालों में फंसाने की बजये प्रभु भक्ति में तल्लीन रखने का सन्देश दिया। आप की वाणी आत्मिक शान्ति के लिये है। यह संसार उस परमात्मा के 'हुक्म' के अनुसार ही चल रहा है। जीव की हस्ती का आधार आत्मा है और आत्मा उस परमात्मा का ही रूप है। यह संसार नाशवान है लेकिन आत्मा और परमात्मा अमर और अविनाशी है। इस जगत् से सुख की कामना व्यर्थ है। भोग विलासिता से विमुख होते हुए फरीद जी उपदेश देते हैं—

फरीदा कोठे मंडप माड़ीआं एतु न लाए चितु
मिटी पई अतोलवी कोइ न होसी मितु

इस जगत् में सुख कम और दुख अधिक है। सुखों की कामना छोड़ कर परमात्मा की भक्ति ही मनुष्य का धर्म है। उनके अनुसार जो मनुष्य इस संसार में परमात्मा का स्मरण नहीं करता वह इस जीवन में कष्ट सहने के साथ आगे भी कष्ट ही सहन करता है। उसे मुक्ति नहीं मिलती। मुक्ति के लिए गुरू की शरण में जाना आवश्यक है। जो गुरू शरण में चला जाता है वह इस भव सागर से पार हो जाता है—

खड़ा पुकारे पातणी बेड़ा कपट वाति
जो जन पीर निवाजिआं तिनां अंच न लाग।

व्यक्ति का सब से बड़ा ध्येय जन्म-मरण के चक्र से छुटकारा पाना है। मनुष्य जन्म-मरन के चक्र से परमात्मा का स्मरण करके ही छूट सकता है इसीलिए बाबा फरीद लिखते हैं—

फरीदा तिना मुख डरावणे जिना विसारिउनु नाऊ।
अैथे दुख धणेरिआ अगैं ठहर न ढाउ।।

आपने परमात्मा को मिट्टी के कण कण में व्यापक माना है। बाबा फरीद जी की वाणी मनुष्य के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक समस्याओं की बजाए आत्मिक और सदाचारपूर्ण समस्याओं का स्मरण करवाती है। उनकी बाणी पूर्ण रूपेण धार्मिक और आध्यात्मिक वाणी है। आप परमात्मा को सत्य मानते हैं जो सदैव एक रंग, रूप और रस होता है। आप की वाणी तल्लीनता और संगीतमकता लिए हुए है जो आध्यात्मिक प्यास बुझाने वाली है।

आपके श्लोक 'रोटी मेरी काठ दी' 'तन सुक्का पिंजर जिया' इत्यादि को देख कर अनुमान लगाया जा सकता है कि आपने घोर तपस्या की। आप का विश्वास था घोर तपस्या ही प्रभु मिलाप करवाती है।

फरीद जी फारसी, उर्दू और पंजाबी के रचनाकार थे। अमीर खुसरों ने आपके फ़ारसी शेयरों पर ही रुबाईयाँ लिखी हैं। मौलवी अब्दुल हक ने अपनी पुस्तक 'दी सूफीज़ वर्क इन दी अरली डिवेल्पमेन्ट आफ उर्दु लैंगुएज़' में आपकी उर्दु कविता के उदाहरण प्रस्तुत किये हैं।

आपने अपनी वाणी को भाषा में प्रचलित किया। जिस भाषा का शब्द उपयुक्त लगा वह ही आपकी वाणी की शोभा बना। छन्दों और अलंकारों ने आपकी वाणी को चार चांद लगाए। अलंकारों और मुहावरों के सहयोग से आपकी वाणी अनुपम हो गई। चमक, उत्प्रेक्षा, उपमा रूपक का विशेष प्रयोग आपकी वाणी में हुआ है, आपने पदों कीं रचना, सोरठा, चौपाई, दोहा आदि अनेक रागों में की।

फरीद जी की वाणी का अध्ययन करने से पता चलता है कि फरीद जी ने एक आदर्श मानव के लिए आवश्यक गुणों को अपनी वाणी में संजोया है। उन्होंने कटु से काटु सत्य को भी इतनी मधुरता से प्रस्तुत किया है कि कहीं भी नीरसता का आभास नहीं होता। उनकी वाणी केवल उनकी कथनी नहीं है अपितु उनकी अनुभूति का परिणाम है। फ़रीद जी का प्रयास है कि अगर प्रत्येक मानव नैतिक दृष्टि से अपना सुधार कर ले तो समाज स्वत: नैतिक स्तर पर उन्नत हो जाएगा। फरीद वाणी की मुख्य विशेषता यह है कि सम्पूर्ण वाणी लोक कल्याण की भावना से ओत-प्रोत है। संसार के भटके हुए प्राणियों को जीवन की सार्थकता और उपयोगिता दर्शाना ही फरीद वाणी का लक्ष्य है। फरीद वाणी मानव के लिए एक आदर्श समाज की परिकल्पना स्थापित करती है। आज प्रत्येक वर्ग, सम्प्रदाय, जाति और देश के लोगों के लिए समान महत्व की अधिकारिणी है।

बाबा फरीद : एक विलक्षण व्यक्तित्व

श्री इन्द्रजीत शर्मा

जब संसार में मानवता का अस्तित्व समाप्त हो जाता है, लोग एक दूसरे के खून के प्यासे हो जाते हैं सन्देह और भ्रम अपनी स्थापना कर लेते हैं तथा इन सब के कारण ही मानवता चिन्ताओं की चिता में जल रही होती है उस समय परमात्मा की ओर से किसी वली, पीर, पैगम्बर को भेजा जाता है ताकि इस संसार को यह प्रकाश स्तम्भ कोई राह दिखा सके। अन्धेरा समाप्त हो जाए तथा प्रकाश स्तम्भ अपनी किरणो को फैला सके। यह सब कुछ सत्य ही सिद्ध होता है जैसा कि भाई गुरदास जी ने लिखा है।

सतिगुरु नानक प्रगटिआ मिटी धुंध जगि चानणु होआ।

इस प्रकार महापुरूष जन्म लेकर संसार को सत्य का मार्ग दिखाते हैं। सन्दर्भ बाबा शेख फ़रीद के जन्म का है। बाबा शेख फरीद भी इसी आशय को लेकर इस संसार में आए। उन्होंने अपनी बाणी की रचना करके भूली भटकी मनुष्यता को सत्य के मार्ग पर चलाया। गुरु नानक देव जी ने यह वाणी बाबा जी के मुरीदों (शिष्यों) से प्राप्त की, जो गुरु ग्रन्थ साहिब में संकलित है।

शेख फरीद जी का जन्म (1175 से 1265 ई०) उस समय हुआ जब इस्लाम जगत का नेतृत्व अरबों से छिन कर तुर्कों के निकट सम्बन्धी अफगान जाति में से थे। उनके पिता गजनी के थे। सम्भव है वह तुर्क जाति की किसी शाखा से सम्बन्धित हों। तुर्कों ने इस्लाम जगत के स्वभाव में एक अकथनीय पदार्थ प्यार और कठोरता ला दिया था।

शेख फरीद जी के युवा होने तक पंजाब पर कोई दो सौ वर्ष तक मुसलमानो का राज्य रह चुका था। शेंख फरीद उच्चकोटि के विद्वान, इस्लाम धर्म शास्त्र के ज्ञाता, संसार के चक्रों में से गुजरे हुए व्यावहारिक कथनी और करनी वाले पथिक थे। आप का जीवन अत्यन्त शुद्ध, संचमित दृढ़ और स्वाभिमानी था। 'गंज शंकर' उपाधि उनके नाम के साथ उनके मधुर स्वभाव, नम्र व्यवहार तथा मधुर वाणी के कारण ही मिली हुई प्रतीत होती है जिन वचनो का एक आदरणीय भंडार गुरु

ग्रंथ साहिब में संकलित होकर हमारे तक पहुचा है। यह वचन उनमें उच्चनैतिक मूल्यों की जानकारी देते हैं जिन्हें उन्होंने अपने जीवन में आत्मसात् किया हुआ था। जैसे :—

इकु फिका न गालाइ समना मैं साचा धनी,
फरीदा बारि पाराहुऐ बैसना सांइ मुझे न देहि,

इनके वचन जीवन को प्रकाशित करने वाले सत्य हैं।

1. लोगो की सर्द वाते सुनकर अपने वतनो की आग को शीतल न करो।
2. निराशा के पल पुरुष के लिए आत्मिक उन्नति की रात है।
3. स्वाभिमान रहित जीवन तुम्हारी कमजोरी की निशानी है।
4. जैसा है, वैसा ही लोगो को दिखा नही तो एक दिन स्वयं भेद खुल जाएगा।
5. किसी का (प्रत्येक का) भोजन न खा बल्कि प्रत्येक को अपना भोजन खिला।
6. गुनाह पर मान न कर
7. शरीर को अधिक न श्रृंगार।
8. अपने शत्रुओं को भी प्रसन्न रखो।
9. ऐसा यत्न करो कि मरने से पहले जीवित हो जाएं।

फरीद जी ने अपने सहधर्मी सूफियों कि लिए कहा—

(क) सूफी वह है जिससे प्रत्येक वस्तु पवित्रता ग्रहण करे।
(ख) दरवेशी पर्दा-पोशी है। इसलिए दरवेश को चाहिए कि अपनी आंखें बंद कर ले, कान बहरे कर ले, जुबान गुंगी कर ले, पैर तोड़ ले ताकि गलत स्थान पर जाने का अवसर ही न मिले।
(ग) फकीर को चाहिए कि वह संसार तथा इसकी वस्तुओ यहा तक कि अपने अस्तित्व से भी बेगाना हो जाए।
(घ) जो कोई खुदा की रजा (प्रसन्नता) में काम करता है खुदा उसको सफलता देता है।

इस प्रकार और भी अनेक वचन हैं जो उनके व्यक्तित्व को उभारते हैं।

इनकी धार्मिक उदारता का प्रमाण इससे ज्यादा और क्या हो सकता है कि पिछले 800 वर्षा से उनका आरम्भ किया हुआ कार्यक्रम हिन्दू, सिक्ख, मुसलमान तथा अन्य धर्मो के प्यार और आदर का पात्र बना हुआ है। इनके लिए यह श्रद्धा

केवल हिन्दुस्तान तक ही सीमित नही अपितु विदेशो में भी खासतौर पर अफ्रीका और बाकी इस्लामी देशो में भी बहुत है।

इनकी धार्मिक उदारता के कारण ही सिक्ख गुरुओ ने इनकी वाणी को अपने धार्मिक ग्रन्थ में स्थान दिया। आज वह सिक्ख जगत के उतने ही प्रिय इष्ट हैं जितने कि उनके गुरु साहिबान। इस भावना में केवल सिक्ख ही सम्मिलित नही पंजाब तथा उत्तरी भारत के हिन्दू भी शामिल हैं।

कहा जाता है कि जीवन की स्वाभाविकता से पूर्ण कविता निश्चय ही उत्तम कविता होती है तथा इतिहास इस बात का साक्षी है कि पंजाबी काव्य में यह एक सर्वोत्तम कविता है। इनकी कविता में शैली और भाषा की स्वाभाविकता, भावों की कुशलता, बुद्धि की सूक्ष्मता का स्वाभाविक तथा सबसे अधिक जीवन के सजीव सौन्दर्य का चित्रण विद्यमान है। इनकी कविता जहां तीक्षण, लुभावनी, भावोत्तेजक तथा हृदय का द्रवित करने वाली है वहाँ वह विचार प्रवाह का एक महान स्रोत भी है। जैसा कि निम्नलिखित पंक्तियों से स्पष्ट होता है —

फरीदा मैं भोलावा पग दा मतु मैली होइ जाइ।
गहला रूहुन जाणई सिरू भी मिट्टी खाइ॥

जोबन जांदे नां डरां जो सह प्रीति न जाइ।
फरीदा किती जोबन प्रीत बिनु सुकि गए कुमलाइ॥

मन की सन्तुलित अवस्था, जिसमें सुख दुख तथा विषय-वासना कोई विघ्न नही डालते फरीद जी का नैतिक उद्देश्य है। गुरू अर्जुन देव जी की टिप्पणी इस उद्देश्य की पुष्टि करती है "फरीदा दुख सुख इक वारी दिल ते लाहि विकारू।" जीवन के सीमित पल ध्यान पूर्वक बिताने की आवश्यकता है। इन्हें हाथ से जाने न दें। अगर तिल थोड़े हो तो ध्यान पूर्वक अंजलि भरें। बुद्धिमानों के वहन सुनाई दे रहे हैं। अपने आप को लुटाओ नही।

आत्म निमन्त्रण का एक अन्य पक्ष सब्र सन्तोष तथा सहनशीलता के रूप में विकसित हुआ है। फरीद जी का विश्वास है कि सब्र का वाण खाली नही जाएगा। लेकिन मनुष्य सब्र का दरिया बनकर बहने की छोटी मोटी नदी। स्वयं रूखी सूखी खाकर ठण्डा पानी पी ले दूसरों के लिए दरवेशों वाली वृत्ति धारण करे, जिनके पास वृक्षों की जोरादि तथा सहनशीलता होती है फरीद जी अपनी आलोचना स्वयं करने की सिफारिश करते हैं।

फरीदा जे तू अकलि लतीफु, काले लिखु न लेख
आप नड़े गिरीवान महि सिरू नीवां करि देखु ।।

फरीद जी किसी को बुरा कहना ठीक नही समझते क्योंकि मनुष्य में अपने में पता नहीं कितने अवगुण है। वह बुरे मनुष्य को भी भला करने की प्रेरणा देते हैं तथा क्रोध से दूर रहने के लिए कहते हैं।

फरीदा बुरेदा भला करि,
गुस्सा मनि न हंडाइ ।

फरीद जी ने भारतीय दार्शनिक परम्परा के 'कर्म' और 'धर्म' के संकल्प को भी अपने जीवन में स्थान दिया है।

नैतिक मूल्यो में फरीद जी ने स्वतन्त्र जीवन, फकीरी तथा मान प्रेम को सर्वोत्तम स्थान दिया है। दूसरे के दरवाजे पर बैठने की अपेक्षा मृत्यु को श्रेष्ठ समझा है।

फरीदा बारि पराइअै बैसना सांई मुझे न देहि,
जे तू ऐवें रखसी, जोऊ सरीरूह लेहि ।

फरीद जी पंजाब के आज तक के हुए कुछ प्रमुख व्यक्तियों में से एक हैं। उनके महान व्यक्तित्व के कारण उनका अनुभव विशाल तथा अर्थ पूर्ण था। उसकी भाषा की मधुरता और शक्ति उनके अनुभव की देन है। निस्सन्देह फरीद जी के निजी अनुभव ने उनसे इतनी सौन्दर्यमयी कविता लिखवाई।

कहा जाता है कि बाबा फरीद जी की कविता की मधुरता के कारण उनकी रचना के अन्दर की उदासी, भय, सहानुभूति, भावो की गहनता तथा तीक्षण बौद्धिकता आदि है। फरीद जी अपनी समकालीन स्थिति को पूर्ण तथा अनुभव करते हैं।

आज इस बात की आवश्यकता प्रतीत होती है कि कोई बाबा फरीद जैसा महापुरुष पैदा हो जो इस संकट पूर्ण विश्व को सुख का सन्देश दे तथा इस कलयुग को सतयुग का मार्ग दर्शाए।

तर्कशील कवि बाबा फ़रीद

डा० कुलबीर सिंह कांग

बाबा फ़रीद बादशाह अल्तमश के मन्त्री बलबन के दामाद थे जो बाद में बादशाह भी बना। बलबन की दूसरी बेटी भी बाबा जी की छत्र छाया में उनके डेरे में आजीवन सेवा करती रही। बाबा शेख फ़रीद अगर चाहते तो बादशाह से बहुत बड़ी जागीर लेकर बहुत अच्छा डेरा बना सकते थे लेकिन उन्हें केवल प्रभु से प्रेम था। डेरे में कई बार अत्यन्त गरीबी के दिन भी आए, लेकिन बाबा जी ने कभी किसी के आगे हाथ नहीं फैलाया। उनके डेरे की इस दशा के विषय में उनके ही चिश्ती सम्प्रदाय के आधुनिक विद्वान डा० खलीक अहमद निजामी ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'लाईफ एण्ड टीचिंगज आफ शेख फ़रीद-उ-दीन' में विस्तृत चर्चा की है। इसीलिए फ़रीद जी ने कहा है --

फ़रीदा बारि पराइऐ बैसणा सांई मुझहिन देहु।
जे तू ऐवें रखसी जीऊ सरीरहु लेहु॥

अर्थात् ऐ खुदा! मुझे किसी के दर का भिखारी न बनाना अगर ऐसा होना है तो इससे मर जाना बेहतर है।

बाद में तथा आजकल इस डेरे और उनके सम्प्रदाय को अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता मिली है। अभी-अभी पाकिस्तान में एक अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रैंस हुई है, सैंकड़ों पुस्तकें उनके विषय में अनेक भाषाओं में प्रकाशित हुई हैं। 800 वर्ष पहले दो पंक्तियों में जीवन का अमर सत्य दिखाने वाला यह सांई फकीर पंजाब का ही नहीं, संसार का अनुपम ईन्सान था।

उनके जीवन से सम्बन्धित एक मिथक 'काठ की रोटी' के विषय में भी विचार करना जरूरी है। वास्तव में आम लोग साहित्यिक चिन्ह या बिम्ब विधान के विषय में अधिक सुचेत नहीं होते इसी लिए श्लोक अथवा कविता में आए किसी चिन्ह के साथ कहानियां जोड़ लेते हैं। 'काठ की रोटी' के विषय में डा० शीतल ने "बाबा फ़रीद, जीवन ते रचना' नामक पुस्तक में बताया है कि

उस समय के पंजाब में कुछ अनाजों के पिसे हुए आटे में घी मिला कर ऐसी खुश्क किस्म की रोटी तैयार कर ली जाती थी कि जिसे फकीर लोग दो चार दिन तक रख सकते थे, पथिकों के लिए भी ऐसी रोटी लम्बे सफर के लिए पकी पकाई खुराक का काम देती थी। फ़रीद जी जैसे सांई लोक के शिष्य बहुत थे लेकिन हमारे रुढ़िवादी भक्तों ने 'काठ की रोटी' के विषय में कई लोकोक्तियां बना ली हैं। 'रोटी मेरी काठ की' एक अलंकृत अभिव्यक्ति भी है कि मैं तो सादा भोजन स्वयं कमा कर खाता हूं लेकिन जो दूसरों के परिश्रम का सोषण करके आज 'चुपड़ी हुई रोटी' खाते हैं अर्थात् ऐश्वर्य का जीवन व्यतीत करते हैं उन्हें खुदा की दरगाह में हिसाब चुकाना पड़ेगा और वे किए हुए पापों की सजा भुगतेंगे।

"जिनाँ खाधीयां चोपड़ीयां
घने सहिणगे दुख ॥'

यह पंक्तियां उन लोगों को चेतावनी देती हैं जो मलिक भागो के समान दूसरों की कमाई पर पलते हैं अथवा उनकी खुराक में गरीब श्रमिकों का रक्त हैं। इस सन्दर्भ में बाबा जी का निम्नलिखित श्लोक भी दृष्टव्य है।

इकना आटा अगला, इकना नाहीं लोण।
अगे गए शिवापसन, चोटां खासी कोण ॥

इससे पता चलता है कि 12वीं शताब्दी में ही बाबा फ़रीद आधुनिक चिन्तनधारा के विषय में बहुत सुचेत थे। उपरोक्त श्लोक में मनुष्य की आर्थिक विषमता की ओर संकेत है, जो खुदा ने ही बल्कि इस शैतान मनुष्य में पैदा की है। इसी लिए बाबा जी ने दूसरी पक्ति में कहा है —

"अगै गए सिंगापसन, चोटां खासी कोण ॥"

उनके यह श्लोक बताते हैं कि वे खुदा की बन्दगी में मस्त जरूर थे लेकिन अपने समकालीन समाज की आर्थिक परिस्थिति के विषय में भी पूर्णतः तथा अग्रगामी तौर पर जागरूक थे। इससे हमारा यह भ्रम भी दूर हो जाना चाहिए कि वह केवल तहखाने में बैठ कर बन्दगी ही करते थे। बाबा शेख फ़रीद अपने समय का गहन अध्ययन करके, अत्यन्त सूत्र रूप में अपने समय का चित्र साकार कर देते थे। आज की समाजवादी सोच बारहवीं शताब्दी के इस महामानव में शताब्दियों पूर्व प्रस्तुत कर दी थी। आज हम इसे वैज्ञानिक विधि से सोचते हैं।

बाबा फरीद के यह प्रासंगिक श्लोक सम्पूर्ण ब्राह्मण्ड के आर्थिक भाईचारे को प्रस्तुत करते हैं।

हमारे पूर्ववर्ती आलोचक और चिन्तक बाबा फरीद जी को 'नाशमानता' का कवि कहते रहे हैं। इस दृष्टि से 'शेख फ़रीद अति यथार्थवादी' कहे जा सकते हैं। नाशमानता और निराशावाद दो विभिन्न संकल्प हैं। 'निराशावाद' निस्सन्देह निन्दनीय है, लेकिन नाशमानता तो ब्राह्मण्ड की अमर सच्चाई है, सारी दुनियां नाशमान है, लाफ़ानी तो केवल खुदा आप ही है। हमें जन्म और मृत्यु के बीच का भाग्यशाली जीवन काल मिला है, इसके प्रत्येक पल का सदुपयोग करना प्रत्येक प्राणी का कर्त्तव्य है। इसी लिए बाबा जी ने अपने श्लोकों में मनुष्य को मृत्यु की याद दिलाई है ताकि हम अटल मृत्यु से पूर्व कुछ शुभ कर्म करके और अल्लाह की दरगाह में सम्मान प्राप्त करें। बाबा फ़रीद जी लिखते हैं—

"फरीदा किथे तैंड़े मापड़े जिनी तू जणिओ इ ॥
तैं पासहु उह लद गए त अजे न पतीणिउ इ ॥"

अथवा

कंधी उते रुखड़ा किचर कु बनो धीर ॥

अत: इस से पूर्व अमूल्य समय के प्रत्येक पल का सदुपयोग करना चाहिए। अच्छे कर्मों के लिए अत्यन्त निकटतम बिम्ब द्वारा समझाते हैं।

"दरि दरवाज़े जाह के किआ डिठोइ घड़ियाल ॥
इह निदोसां मारीऐ, हम दोसां का क्या हाल ॥

एक श्लोक में कहते हैं —

फरीदा जिनी कमी नाहि गुण ते कंमड़े विसारि ॥
मत शरमिन्दा थीवहि सांई दे दरबारि ॥

अथवा

अमल ज कीते दुनीं विच दरगाहे आह कम ॥
लेखा रब्ब मंगेसीआ तू आहो केरे कम ॥

ऐसे महा कर्मशील चिन्तक को नाशमानता का कवि कहना अथवा निराशावादी कहना हमारी अपनी अल्प बुद्धि का ही प्रमाण है।

फरीद जी के जीवन से जो चमत्कार जोड़े गए हैं, यह अन्ध विश्वास भक्तों की मेहरबानी है। बाबा जी से पूर्व जोगियों, नाथों में भी ऋद्धियों सिद्धियों के

प्रमाण दे कर लोगों को भक्त बनाने की रुचि भारत में विद्यमान थी। इस्लामी फकीरों से भी गैबी शक्तियों की आशा की जाती थी। लेकिन बाबा फरीद एक तर्कशील चिन्तक थे, वे प्रत्येक वात सूत्र शैली में तर्क सहित प्रमाणित करते थे, चमत्कार से नहीं। आठ सौ वर्ष बहुत बड़ा अन्तराल है इसमें मिथकों का आ जाना स्वाभाविक ही है। एक पुस्तक "खैरुल मजालिस" कर्त्ता मौलाना हमीद शायर कलन्दर का पंजाबी अनुवाद "श्रेष्ठ गोष्टाँ" के नामाधीन प्रो० प्रीतम सिंह ने किया है, इससे पूर्व सन्त इन्द्र सिंह चक्रवर्ती ने भी इसका पंजाबी रूपान्तरण किया था। तब उस समय महापुरुषों के साथ हुए सम्वाद अथवा गोष्ट सम्भालने की परम्परा थी। इस पुस्तक में बाबा फरीद की सदाचारपूर्ण शिक्षा का संचार तो मिलता है लेकिन तर्क को छोड़ कर चमत्कार जोड़ना उनके अनुपम तर्कशील चरित्र के साथ अन्याय करना है।

उनके विषय में चली आ रही लोक गाथाओं को अगर वैज्ञानिक दृष्टि से पढ़ें तो उनमें से महान अर्थ मिलते हैं। उनके इस श्लोक के विषय में अनेक लोकगाथाएं प्रचलित हैं।

"फरीदा गलीए चिकड़ दूरि घरु, मेरा नाल पिआरे नेहु ॥
चला त भिजै कम्बली रहां त तुटै नेहु ॥
भिजउ सिजउ कम्बली, अलह बरसहि मेह ॥
जाइ मिलां तिना सजणा, तुटिउ नाही नेहु ॥"

इस अर्थ पूर्ण श्लोक ने विषय में लोगों ने अद्भुत कथा जोड़ रखी हैं कि उनके पास एक ही कम्बली थी तथा वर्षा में उन्हें अपने मुरशद से मिलना था. अगर जाते थे तो कम्बली भीगती थी अगर नहीं जाते थे तो प्रेम टूटता था अन्त में वे मुरशद के प्रेम के आकर्षण के कारण बरसात में ही चल पड़े आदि-आदि

ऐसी कथा जोड़ना उस महामानव के साथ बहुत बड़ा अन्याय है। यह श्लोक धर्म और गृहस्थ के समन्वय का प्रतीक है, गलीयां अर्थात् जीवन में काम, क्रोध, लोभ, अहंकार का कीचड़ फैला हुआ है। मनुष्य के पास शरीर रूपी एक ही कम्बली है, इस कीचड़ और वर्षा को पार कर परमार्थ की ओर चलना कठिन है। वही मनुष्य शूरवीर है जो काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार आदि सभी शुभ-अशुभ भावनाओं में से गुजरता है, इन हुंकारती नदियों को नियन्त्रित करके मन को शुभ कर्मों की ओर लगाता है। ऐसे संयमी मनुष्य ही अपने प्रियतम (मुरशद) को प्राप्त कर सकते हैं और उसकी दरगाह में उसको सामीप्य पा सकते

बाबा फरीद जी ने यह विचार 12वीं शती में दिया। बाद में निर्गुण धारा (भक्ति लहर) के समूह सन्तों ने इसे अपना मार्ग बना लिया। गुरमत सिद्धान्त ने तो इसे क्रियात्मक रूप दिया। इनके नामलेवा गृहस्थी होते हुए आध्यात्मवाद के शिखर को छूते थे।

बाबा फरीद जी बार-बार कहते हैं कि जीवन के प्रत्येक पल का सार्थक प्रयोग करो यह तो रेत के कणों के समान हमारे हाथों की अंगुलियों में से फिसलते जा रहे हैं। पुनः जीवन, यौवन, शारीरिक शक्ति प्राप्त नहीं होगी। "काले बालों वाली आयु" जो जीवन का मूल्य नहीं समझते वे वृद्धावस्था में अपने पास पड़े हुए बर्तन को उठा कर पानी नहीं पी सकेंगे। वे लिखते हैं—

"फरीदा जां तउ खटण वेल, ता तूं रता दुनी सिउ ॥
मरण सवाई नींह, जां भरिआ तां लदिया ॥"

मानवतावादी कवि सारा जीवन प्रभु अर्थात् खुदा की बन्दगी के साथ-साथ पंजाब के लोगों को अत्यन्त तर्कशील ढंग से सदाचारपूर्ण जीवन जीने की प्रेरणा देते मानव-समानता का प्रचार करते रहे, शासकों की ओर से कोई सुख-सुविधा नहीं ली, आशा का दीप जलाए रखा और पंजाब में ऐसे नैतिक जीवन का सन्देश दिया जिसके कारण हम पंजाबी कुछ कुरीतियों के बावजूद आज भी बुरे कर्मों से डरते हैं। अवगुण तो सब में थे, हमारे में भी हैं लेकिन फिर भी हमने बाबा फरीद से नेकी, नम्रता, सेवा, न्याय, कर्मशलता, ब्राह्मण्ड की चेतना तथा अन्तर्राष्ट्रीय भाईचारे का सबक सीखा है।

'शेख़ फ़रीद जी की वाणी के कतिपय आधारभूत तत्व'

डा० श्रीमती उमा शशि शर्मा

सूफी-संत-धारा के चिश्ती सम्प्रदाय के प्रमुख पंजाबी संत कवि शेख फरीद जी की वाणी से कौन पंजाबी अपरिचित होगा ? केवल पंजाब ही में नहीं, समग्र भारत में संत परम्पराओं का उल्लेख करते समय तथा सूफी संतों की नामवलि को चित्रित करते समय, शेख फरीद जी के नाम को भुलाया नहीं जा सकता।

फरीद जी की वाणी सीधी, सरल, अकृत्रिम तथा किसी भी प्रकार के दुर्बोध एवं सायास अलंकरण से रहित होते हुए भी इतनी प्रसिद्ध एवं लोक-प्रिय हुई कि जन साधारण सी बातचीत में भी मुहावरों और लोकोक्तियों की तरह इसका प्रयोग होने लगा। इस वाणी की सात्विकता, महानता और पवित्रता भी भी सिद्ध हो गई जब इसे श्री गुरू ग्रन्थ साहिब में संकलित किया गया और इस प्रकार इसे सब प्रकार से जन-जन के लिए नित्य पठन-पाठय योग्य प्रमाणित कर दिया गया।

मानव-जीवन में दिशा दिलाने वाली इस वाणी का अध्ययन, पठन, पाठन करने पर हमें कुछ आधारभूत तत्व दृष्टिगत होते हैं, जो फरीद जी की विचार-धारा के स्तंभ हैं, आइए कुछेक का अवलोकन करें। अनुभूति की वास्तविकता।

फरीद जी ने केवल स्थानुभूत तत्वों में ही उद्‌घाटित किया है। उनकी कही कोई भी बात शब्दाडंबर, पांडित्य-प्रदर्शन या पढ़ी सुनी पुस्तकों पर निर्भर नहीं है, अपितु प्रत्येक कथन, हृदय के अलाव में अनुभूति की ज्वाला से पक, सिक कर बाहर आया हैं। यही कारण है कि कठोर एवं कटु सत्यों को उद्‌घाटित करते हुए भी उनके कथन चुभते हुए लगते तो हैं, परन्तु हृदय की गहराईयों में उतर जाते हैं और अनायास ही व्यक्ति के मुंह से निकल जाता है—'कितना सच कहा'—है तो बात ठीक, "सोलहो आने सच ।"

फरीद जी ने जिस भी विषय का चित्रण किया है, अनुभूति की सचाई

उसका पहला गुण है। यह गुण हमें ईश्वर-प्रेम, विरह, नैतिकता, असार संसार की क्षणभंगुरता अथवा अन्य किसी भी विषय के चित्रण में स्पष्ट दिखाई देता है।

ईश्वर के विरह में तड़पती उनकी आत्मा की यह पुकार कितनी हृदय ग्राही जान पड़ती है—

तनु तपै तनूर जिउ बालण हड वलन्हि।
पैरी थका सिरि जुला जे मू पिरी मिलन्हि॥

स्वावलंबन की आकांक्षा व पराधीनता तथा पराधीनता तथा परावलंबन का निराकरण किस सादगी, नम्रता परन्तु दृढ़ता से करते हैं—

फरीदा बारि पराइअै बैसणा, साई मुझै न देहि।
जे तू एवै रखसी, जीउ सरीरहु लेहि॥

यही नहीं फरीद जी की वाणी में सर्वत्र अनुभूत-सत्यों की छटा दृष्टिगत होती है। यही गुण उन की वाणी को प्रत्येक के लिए हृदय ग्राही बना देता है।

ईश्वर–प्रेम एवं तज्जनित विरह का चित्रण :

फरीद जी एक संत थे और उनके जीवन का मात्र लक्ष्य ईश्वर की प्राप्ति था। उनके स्नेह और कोमल-भावनाओं के समस्त ततु उसी सृष्टि-नियंता के चरणों से बंधे थे। चूंकि प्रेमाधार एक था, अतः प्रेम भावना भी अत्यंत अकृष्ठ थी। प्रभु-कृपा में पाने की तड़प का यह आलम है कि—

तपि तपि लुहि हाथ मरोरउं,
बावलि होइ सो सहु लोसु॥

भक्ति साधना के क्रम में भी ज्यों-ज्यों साधक प्रभु-प्रेम का रसास्वादन करता है, जैसे जैसे उसे अपने महान इष्ट की महानता एवं दिव्यता की झलक मिलती जाती है, त्यों-त्यों वह अपने प्रेम-पात्र का शैदाई और दीवाना बनता चला जाता है। तड़प इतनी बढ़ जाती है कि संसार, अपना शरीर एवं सर्वस्व ही भुला दिया जाता है, यदि कुछ याद रहता है तो केवल उसका दीदार या दर्शन—

कागा करंग ढंढोलिआ, सगला खाइआ मासु।
ए दुइ नैना मत छुहउ, पिव देखन की आस॥

यद्यपि यह विरह, यह तड़प उसे आग की तरह जलाते हैं—

दाझे बन की लाकरी, सुलगत हीं दिन रैन॥

फिर भी यह जलन उसे अत्यंत प्रिय है, बल्कि जीवन की सार्थकता ही इसमें दिखाई देती है। तड़प के बिना जीना कैसा ?

जिस तन विरहा न उपजहि,
सो तन जानु मसानु ॥

इसी विरह के कारण साधक अपने आप में उस ईश्वर की प्राप्ति के योग्य बनाने की चेष्टा करता है। इष्ट किस प्रकार प्रसन्न हों, कैसे अपना लें और कैसे उनसे मिलन हो, पल-पल यही विचार उसे रहता है। जैसे पत्नी, पति का सन्निध्य चाहती है, उसका प्रेम-प्राप्त करना चाहती है, ठीक इसी प्रकार विरहनि आत्मा परमात्मा से मिलने में तड़पती है। कुछ गुण हैं तो पत्नी को अपनाने चाहिए, ठीक इसी प्रकार आत्मा में भी अपनी लक्ष्य-प्राप्ति के लिए—

निवणु सु अखरु खवणु गुणु जिह्वा मणीआ मंतु।
ए त्रै भैणे वेस करि, ता वसि आवी कंतु॥

यह विशेषताएं धारण करनी ही होगी।

आत्मा में निरंतर गुणों का संचार एवं दोषों तथा दुर्बलताओं का निराकरण, ईश्वर-प्राप्ति ने मार्ग पर अग्रसर होने के प्रमुख लक्षण हैं।

नम्रता तथा निरभिमानता:

शेख फरीद जी की भक्ति–पद्धति में 'अहम्' अथवा अभिमान (में) का कही कोई स्थान नहीं है। साधन-पथ पर अग्रसर होने के लिए सर्बप्रथम 'अहम्' का त्याग ही बांछित है। अभिमान के त्याग में इतना महत्व देते हैं कि यहां तक कह देते हैं--

फरीदा पाऊं पसार के, आठ पहर ही सऊं।
लेखा कोई न पुछई, जे बिचहूं जावी हऊं॥

किन्तु 'अहम्' का त्याग इतना सरल नहीं है। चाहे यह भक्ति पथ पर आरूढ़ होने का नियम है किन्तु सत्य तो यह है कि निरभिमानता की यह स्थिति कड़ी साधना के बाद ही प्राप्त होती है।

गुणहीण और शक्तिहीन होने पर अभिमानी होना तो अनुचित है ही, समस्त गुणों व शक्तियों से भरपूर होने पर भी नम्रता और निरभिमानता ईश्वर भक्त का सहज लक्षण है। शेख फरीद अपने जीवन काल में ही पर्याप्त प्रसिद्धि अर्जित कर चुके थे। हजारों लोग उनका दर्शन करते व उन्हें श्रद्धा-सुमन अर्पित

आते थे, तिस पर भी उनकी निरभिमानता देखने योग्य है––

काले मैंडे कपड़े काला मैंडा वेस।
गुनहीं भरेया मैं फिरां लोक कैहण दरवेस।।

ईश्वर प्रेम के मार्ग पर चलने पर साधक के सब ओर ईश्वर ही नजर आता है। उसे अच्छे और बुरे, प्रत्येक में उसी की आभा नजर आती है। भला वह क्रोध करे तो किस पर ? अभिमान करे तो किस से–

इक फिका ना गालाई सभना में सचा धणी।
हिआउ न कैही ठाहि माणक सम अमोलवे।।

प्रत्येक जीव ईश्वरांश होने के कारण अत्यंत महत्व पूर्ण है फिर इसी से दुर्व्यवहार करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

क्षमाशीलता :

शेख फरीद जी जैसी क्षमाशीलता एव सहनशीलता भी अन्यत्र कम ही देखने में मिलती है। दूसरों के अनुचित व्यवहार को सहन करना ही पर्याप्त नहीं है अपितु बदले में उनसे सद्व्यवहार करना भी आवश्यक बताया गया है। जो साधारण सांसारिक मानव के लिए सरल नहीं है–

जो तै मारन मुकीयां तिन्हां न मारी घुम्म।
आपनड़ै घर जाइए पैर तिन्हाँ दे चुम्भ।।

किसी के दुर्व्यवहार से साधारण मानव के क्रोधित होना स्वाभाविक है किन्तु इसके लिए भी निर्देश है–

फरीदा बुरे दा भला करि,
गुसा मनि न हढाई।।

संत को मारना ही तो भक्ति मार्ग पर चलना है। उस भगवान से प्रेम करनें वाले के हृदय में क्रोध के लिए स्थान रहना ही नहीं चाहिए

नैतिकता :

फरीद जी उच्च कोटि के संतों में गिने जाते हैं, फिर भी उन्होंने जीवन यापन संबंधी नीतियो का न तो कहीं उल्लंघन किया और न ही इसके लिए आदेश दिया। मालिक के प्यारों के लिए भी उसे पल पल याद करने वालों के लिए भी यह नियम है कि वे पांच वक्त की नमाज के पाबंद रहे। ऐसा न करने

वालों के लिए कड़ी सजा भी सुनाते हैं :

उठु फरीदा उजु साजि, सुबह् निवाज गुजारि।
जो सिरु सांई न निवै, सो सिर कपि उतारि ॥

भक्ति के साथ साथ मनुष्य को अपने अंतर में छिपे दुर्गुणों के देखने व उन्हें भरसक दूर करने की चेष्टा करने के भी आदेश दिए गए हैं। यदि आप बंदगी करते हैं तो निरंकुश नहीं हो जाते. बल्कि पल पल आत्मालोचन करना अपेक्षित हो जाता है। जन-साधारण से भक्त के लिए अधिक कड़े नियम हैं–

फरीदा जे तू अकलि लतीफ काले लिख न लेख।
आपनड़ै गिरीवान महि सिर नीवाँ करू देख ॥

कोई अन्य आप का दोष क्यों निकालें ? दूसरे आप की बुराईयों की ओर अंगुली क्यों उठाएं ? स्वयं ही मनुष्य अपने दुर्गुणों की ओर ध्यान देकर उन्हें दूर करने की चेष्टा क्यों न करे ?

इस प्रकार हम देखते हैं कि फरीद जी की भक्ति उन पर ओढ़ी गई साधना नहीं है, बल्कि उनके जीवन में घुली मिली रक्त में रची ऐसी ऐसी भावधारा है जो उनमें वास्तविक जीवन में भी हर चेष्टा, हर विचार में झलकती दिखाई देती है। उनकी यही सच्चाई, कथनी करनी साम्य उन्हें संत-समाज में उच्च स्थान के अधिकारी बनाते हैं। उनका महत्व केवल आध्यामिक जगत ही में नही है, आज राग द्वेष, वैर-विरोध और असहिष्णुता के इस वातावरण में फरीद जी की वाणी और उनके आधारभूत विचार, भटकती व तड़पती मानवता के घावों पर मरहम का काम कर सकते हैं उसका मार्ग दर्शन करके चारों ओर सुख-शांति का साम्राज्य स्थापित कर सकते हैं।

शेख फ़रीद : व्यक्तित्व और सन्देश

डा० शमीर सिंह

शेख फ़रीदुद्दीन मसऊद शकरगंज साहित्यिक तथा धार्मिक जगत् में शेख फ़रीद अथवा बाबा फ़रीद के नाम से जाने जाते हैं। भारत वर्ष में आपको चिश्ती सम्प्रदाय के प्रमुख धार्मिक नायकों में गिना जाता है। शेख फ़रीद अपने समय के प्रतिष्ठित इस्लामिक विद्वान् हुए हैं, जिन्होंने अपनी प्रतिभा और विद्वत्ता के कारण 'शेख-उल-इस्लाम' तथा 'शेख-ए-कबीर' की उपाधियाँ अर्जित की। पाकिस्तान में स्थित मुलतान जिला ने कोठवाल (अब चाउली मुशाइख) गांव में आपका जन्म हुआ। अपनी वाणी के कृतित्व से बाबा फ़रीद ने न केवल पंजाब की धरती को ही बल्कि समूचे प्राणी-जगत् को मानवता का वह सन्देश दिया, जो उन्हें सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्रों में अजर तथा अमर बना गया। शेख फ़रीद के द्वारा रचित वाणी सिक्ख-धर्म के आराध्य ग्रंथ 'श्री गुरू ग्रंथ साहिब' में पंचम गुरू अर्जुन देव जी के द्वारा संकलित है। स्पष्ट है कि बाबा फ़रीद को पंजाबी जीवन पद्धति में वह स्थान प्राप्त है, जिसके अधिकारी गुरू नानक देव जी तथा अन्य सिक्ख-गुरू और भक्तजन हैं।

शेख शब्द से सुशोभित बाबा फ़रीद को जीवन में 'दरवेश' बने रहना अधिक रुचिकर था। 'दरवेश' वह व्यक्ति विशेष होता है, जो परमात्मा के द्वार पर आवेज़ रहता है अर्थात् द्वार पर लटका रहता है। अन्यत्र 'दरवेश' को 'याचक' अथवा 'साधु' की संज्ञा भी दी गई है। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब में स्पष्ट कहा गया है— दरवेशी को जाणासी विरला को दरवेश—(वार बिहागड़ा महला 3) सम्भवतः इसीलिए शेख फ़रीद की वाणी में व्यक्त मानव-प्रेम और उससे व्युत्पन्न प्रेम-भक्ति की अवधारणा प्रकट हुई है। नम्रता और कृतज्ञता, आत्मसम्मान और आत्म-विश्वास, स्पष्टता और सरलता आदि व्यक्ति परक तथा सामाजिक गुण प्राणी मात्र के स्वभाव से कटुता तथा अविवेक को निष्काषित करके उसे माधुर्य व औचित्य-परक विवेकशील बनाते हैं। यही कारण है कि प्रभु से प्रेम-भक्ति की याचना करने वाला बाबा फरीद साथ ही एक ऐसी मांग की भी याचना करता

है, जो समूचे पंजाबी जन-जीवन की चेतना में परिव्याप्त है—

फरीदा बारि पराइऐ बैसणा सांई मुझे न देहि ।
जे तूं ऐवै रखसी जीउ सरीरहु लेहि ।।42।।

अस्तु नम्रता, परस्पर भ्रातृत्व व सहनशीलता का जो मानवीय सदेश बाबा फरीद ने 13वीं शताब्दी में अपनी वाणी के कृतत्व के द्वारा दिया, वह समूची पंजाबीयत के लिए बहुमूल्य निधि बन गया और पंजाबी भाईचारे के साँस्कृतिक विकास में ठोस तथा शीर्षस्थ सरोकार का वाहक बना रहा । परिणामस्वरूप फरीद वाणी में सम्पुष्ट मानवतावादी मूल्यों के प्रचार एवं प्रसार से तत्कालीन धार्मिक-कट्टरता, असहनशीलता तथा अलगाववादी प्रवृत्तियां तिरोहित हुई और सद्भाव व सौहाद्र का नया वातावरण प्रसरित हुआ । बाबा फरीद की कथनी, करनी व लेखनी के परिणामस्वरूप समानता तथा स्वतंत्रता का जो सांस्कृतिक परिवेश बना, वह पंजाबी जन जीवन के लिए सामाजिक उदारता तथा पारस्परिक सहिष्णुता का नियोजक बना । बाबा फरीद का मत है कि धर्म की वास्तविक आधारभूमि नैतिकता है । विषय-विकारों का प्रचलन तथा अनैतिक दुष्प्रवृत्तियां इसे खोखला तथा संकुलित बना कर प्राणीमात्र के लिए हानिकारक एवं अहितकर बन जाती हैं । इस सम्बन्धी बाबा फ़रीद का कथन है —

"फरीदा जा लबु त नेहु किआ लबु त कूड़ा नेहु ।।18।।"
"फरीदा बुरे दा भला करि गुसा मनि न हढाइ ।
देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ ।।74।।

इसी तरह फरीद वाणी से शुभ नैतिकता भरपूर जीवन-यापन की भी प्रेरणा मिलती है—

आपनड़े गिरीवान महि सिरु निवाँ कर देखु ।।6।।
आपनड़ै घरि जाईऐ पैर तिना दे चुंमि ।।7।।
"सबर मंझि कमाणा ए सबरू का नीहणो ।
सबर संदा बाणु खालकु खता न करी ।।102।।

शेख फरीद मानव को सांसारिक जीवन यापन में माया-मोह वाला मार्ग छोड़ कर सबर (सन्तोष) अर्थात् संतुष्ट बने रहने का अन्यत्र भी सन्देश देते हैं । उनका कथन है कि यदि तू संतुष्ट रह कर जीवन व्यतीत करेगा, तो तेरा जीवन नदी की तरह विशाल और उदार बन जायेगा । ऐसी हालत में यह कटे-फटे

नाले के समान नहीं रहेगा—

सबरु एहु सुआउ जे तूं बदा दिहु करहि।
वधि थीवहि दरीआउटुटि न थीवहि वाहड़ा ॥104॥

इस से अभिप्राय यह निकलता है कि यदि प्राणी सन्तोषमय जीवन व्यतीत करता है तो वह—सबर अंदरि साबरी तनु एवै जालेनि – वाले भाव को आत्मसात् कर लेता है और प्रभु बन्दगी में लीन रहता है। उसके दैहिक विकार उसे मुक्त कर देते हैं और वह प्रभु-सान्निध्य सहज रूप से ही प्राप्त कर लेता है। ऐसे व्यक्ति का निशाना कदापि नहीं चूकता और निश्चय ही उसे प्रभु-भक्ति की दुष्प्राप्य निधि प्राप्त हो जाती है। वास्तव में फरीद वाणी में 'सबर' को धारण करके जीवन यापन का अर्थ यह लिया गया हे कि मानव मात्र को अपने अधिकारों के प्रति कृतज्ञ तथा संतुष्ट बने रहना चाहिए। दूसरों के अधिकारों पर अधिकृत होना अनुचित है। मोह तथा स्वार्थ की अमानवीय प्रवृत्तियों पर नियन्त्रण स्थापित करके तृष्णा तथा अन्य भटकाऊ विकारों की भीषणता से सदा अपने आप को सुरक्षित बनाये रखना चाहिए। मानवीय जीवन–पद्धति सम्बन्धी उनकी वाणी में कहा गया है—

''फरीदा साहिब दी करि चाकरी दिल दी लाहि भरांदि।
दरवेशां नो लोड़ीऐ रुखां दी जीरांद ॥57॥

इस श्लोक में 'दिल दी भरांदि' तथा 'रुखां दी जीराँद' उक्तियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। यहां—'जीरांद'–शब्द सबर अथवा संतोष का ही पर्याय है, परन्तु बाबा फरीद ने इसे विशिष्ट रूप से वृक्ष के साथ जोड़ कर कहा है। जैसे वृक्ष धरती तथा हवा में से जितनी खाद्य तथा सेव्य सामग्री आवश्यकता हो, उतनी ही ग्रहण करता है और सर्वथा उतनी से ही संतुष्ट रहता है। ठीक इसी तरह आप भी मनुष्य को लोभ तथा स्वार्थ को छोड़ कर और दूसरों का हक न मार कर जितना कुछ आवश्यक हो, उस में ही संतुष्ट बने रहने के लिए परामर्श देते हैं। जरूरत से ज्यादा कदापि एकत्र नही करना चाहिए ऐसा उनका मत है।

इसी तरह आप मानव को पूरी वफादारी के साथ प्रभु-प्रेम में लीन रहने के लिए कहते हैं। आप का विश्वास है कि केवल ऐसा करके ही उस का मन—'विसु गंदलां'—के दुष्प्रभाव से से मुक्त हो सकता है। फरीद वाणी में—'चोपड़ी रोटी'—का सेवन इस लिए वर्जित है कि यहां इस का सम्बन्ध—'पराई'—से है। इसीलिए बाबा फरीद ने दूसरों की चुपड़ी हुई रोटी को देख कर ललचाना ठीक

नहीं कहा और इन्हें खाना तो—'विसु गंदलां'—खाने के समान समझा है। वास्तव में चुपड़ी हुई रोटी को खाना, पकी हुई खजूरों को खाना और शहद की नदियों को धारण करने से प्राणी मात्र को वर्जित करने के साथ शर्त केवल इतनी जुड़ी हुई है कि यह सब अपने हिस्से के ही हों। स्पष्ट है कि फरीद वाणी सांस्कृतिक जीवन मूल्यों को विकसित करने के कदापि विरुद्ध नहीं। यहां पौष्टिक खाद्य-पपार्थों की उपज तथा उनके सेवन पर विशेष बल दिया गया है, परन्तु बाबा फरीद ने शर्त केवल यह रखी है कि इनकी पहुंच समाज के प्रत्येक प्राणी तक हो।

वास्तव में गुरवाणी की भाँति फरीद वाणी भी मानव को प्रभु के द्वार के प्रति समर्पित होने का सन्देश देती है, अन्यथा दोज़खों की भीषण अग्नि में भस्म होना पड़ेगा। कहने का अभिप्राय यह है कि जो लोग प्रभु-द्वार से विमुख रहते हैं और माया रूपी मोह की पोटली अपने पल्ले में बांधे फिरते हैं। जो विषय विकारों के वशीभूत हो कर कुकर्म करते हैं और जिन्होंने—'मण्डल-माल' को ही अपना सर्वस्व समझ रखा है। जिन्हें प्रभु की कोई सुधि नहीं और जिन का मन सांसारिकता के बंधन में बंधा हुआ चोटें खाता रहता है, ऐसे दोजखों के अधिकारी लोग—'दरवेश'—अथवा भक्त एवं साधु नहीं हो सकते और निःसन्देह फरीद का चुपड़ी हुई रोटी खाने से रोकने का अभिप्राय लोभ, मोह, स्वार्थ आदि से दूर रहने से ही है। दूसरे शब्दों में—'चोपड़ी रोटी'—समाज में व्याप्त—'काणी-वण्ड' का प्रतीक है। फरीद वाणी में स्पष्ट रूप से वर्णित है—

फरीदा इकना आटा अगला, इकना नाहीं लोणु।
अंग गए सिवापसीन, चोटां खासी कउणु।।42।

अतः स्पष्ट है कि इन्हें समाज में पदार्थों का असमान वितरण अच्छा नहीं लगता और उनका मनोरथ सामाजिक-व्यवस्था में से इस असमानता को समाप्त करना है। उनका विश्वास है कि केवल इतना होने से ही समाज में से माया के प्रति मोह, पदार्थिक लोभ और स्वार्थ की दुष्प्रवृत्ति समाप्त हो सकती है और प्राणी—'सबर'— अथवा सन्तोष रूपी जीवन मूल्य से अलंकृत हो सकता है।

भारतीय-संस्कृति में अतिथि सत्कार पर विशेष बल दिया गया है। बाबा फरीद के मतानुसार सारी मानव जाति एक अल्लाह (प्रभु) की संतान है। वह प्रभु सर्वसमर्थ और प्रत्येक प्राणी, भले ही वह जल, थल अथवा आकाश में निवास करता हो, को देने वाला है। जैसे माता के लिए उसकी संतान के सभी

सदस्य बराबर होते हैं। ठीक उसी तरह फ़रीद का कथन है कि यदि हम किसी आगंतुक से कुछ छिपा कर रखते हैं तो यह अनुचित हैं, क्योंकि उनके अनुसार कोई भी अतिथि साधारण व्यक्ति न हो कर परमात्मा के द्वारा भेजा गया विशेष प्राणी होता है। उनके कहने का सार तत्व यह है कि सामाजिक उपज पर सांसारिक जीव-जन्तुओं का समान रूप से अधिकार होता है। बाबा फरीद के निम्नलिखित श्लोक में—'मिता आइड़िआ'—शब्द उनके इस सन्देश का केन्द्र बिन्दु हैं -

फरीदा जे मैं होंदा वारिआ मिता आइड़िआ।
हेड़ा जलै मजीठ जिउ उपरि अंगारा ॥21॥

शेख फरीद की वाणी स्पष्ट रूप से यह व्याख्यायित करती है कि मानव-प्रेम तथा लोभ एवं मोह का परस्पर विरोध बना रहता है—

फरीदा जा लब्रु ता नेहु किआ लबु त कूड़ा नेहु।
किचरू भक्ति लघाईऐ छपरि तुटै मेहु ॥16॥

अर्थात् लोभ पर आधारित जीवन-यापन का छप्पर तो तहस-नहस हो चुका है। अब इसके नीचे निर्वाह असम्भव है।

शेख फरीद ने निर्विवाद रूप से अपनी वाणी में व्यक्त किया है कि यदि—'कूजड़िआं'—अर्थात् ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों को प्राणी वश में कर ले तो प्रभु-मिलाप सम्भव है। अपने मत को रूपाचित करने के लिए उन्होंने विभिन्न पक्षियों के उदाहरण लेकर मानव-प्रवृतियों को उद्घाटित किया है। कागा मांसाहारी है। वह नेत्र भी निकाल कर ले जाता है—तामसीवृत्ति का चिन्ह है, कूंज मनमुखि वृत्ति की सूचक है और मन के अधीन रह कर विभिन्न रस-रंगों में लीन रहती है—यह राजसीवृत्ति की द्योतक है, केवल विरहाग्नि में जलती रहती है अर्थात् अपने प्रियतम के वियोग में तड़पती रहती है—यह सात्विक वृत्ति की ओर संकेत करती है, बगला पाखण्ड का चिन्ह है अर्थात् चुपड़ि प्रवृत्ति वाला है और हंस श्रेष्ठ दरवेशी स्वभाव का स्वामी है अर्थात् यह निपुन्न दरवेश है। गुरवाणी का कथन है—

हंसा देखि तरंदिआ बग्गा आइआ चाउ।
डुबि मुए बग्गा बपुड़े सिरतलि उपरि पाउ॥

अन्यत्र पक्षियों को मानव-मात्र के आत्मिक विकास के नियोजक स्वीकार करके शेख फरीद का मत है—

फरीदा हउ बलिहारी तिन पंखीआं जगलि जिना वासु ॥
कंकर चुगनि थलि वसनि रब न छोडनि पासु ॥95॥

अस्तु संतोष, नम्रता, परमार्थ, क्षमाभाव, मितव्ययता व लोभ, मोह, अहंकार आदि से विमुख रह कर जीवन व्यतीत करना ही वास्विक रूप से फरीद वाणी का संदेश है। उनकी वाणी का यही संदेश मानव को मानव के निकट लाता है और उसे सदाचार का पाठ पढ़ा कर प्रभु-प्रेम से पारंगत करता है। शेख फरीद जीवन में सत्य और न्याय का पलड़ा पकड़ने पर बल देते हैं। झूठ कभी नहीं बोलना चाहिए और जो मार्ग गुरू एवं मुर्शद दर्शाता है उस पर मुरीद एवं शिष्य को चलना चाहिए—

बोलिए सचु धरमु झूठु न बोलीए।
जो गुरू दसै वाट मुरीदा जोलीए ॥राग आसा 3॥

वह तो उस प्रभु के प्रति पूर्णतः समर्पित हो जाता है और प्रभु-भक्ति का वरदान एक सच्चे याचक एवं दरवेश की भांति मांगने लगता है—

तेरी पनह खुदाइ तू बखसंदगी।
सेख फरीदै खैरु दीजै बंदगी ॥4॥1॥ (राग आसा)

बाबा फरीद की वाणी सम्बन्धी दार्शनिकता मानवतावाद का सम्बल है। इस मध्ययुगीन संत कवि ने इस्लामिक सिद्धान्तों को नैतिकताभरपूर धारणाओं के साथ इस ढंग से काव्यबद्ध किया है कि ये नितान्त व्यवाहारिक बन गये हैं और मानव मूल्यों तथा प्रभु-प्रेमोन्मुखता का संदेश देने लगते हैं। फरीद वाणी में मौत को एक अटल सच्चाई के रूप में धारण किया गया है। उसके अनुसार जीवन का प्रत्येक क्षण मौत की ओर एक कदम है और मौत व्यक्ति के लिए अन्तिम मील-पत्थर है। मौत फरीद वाणी का केन्द्र बिन्दु है। मौत का प्रभाव समूची फरीदवाणी पर छाया रहता है। कतिपय उदाहरण प्रस्तुत है।

कहै फरीद सहेलीहो सहु अलाएसी।
हंसु चलसी डुमणा अहि तनु ढेरी थीसी ॥
जे जाणा मरि जाईए घुमि न आइए।
झूठी दुनिआ लगि न आपु वञाइए ॥
फरीदा पंख पराहुणी दुनी सुहावा बागु ॥
नउबति वजी सुबह सिउ चलण का करि साजु ॥

वास्तव में बाबा फरीद नें मौत को शरीर का नाश होना स्वीकार किया है और मरणोपरन्त प्रत्येक प्राणी को उसके किये हुए कर्मो के अनुसार जन्नत या दोजख की प्राप्ति होती है शेख फरीद चेतावनी देता है कि यदि हमें पता है कि इस शरीर ने अन्त मैं नाश होकर मिट्टी में मिल जाना है और फिर इस दुनियां में नहीं आना, तो फिर झूठे संसार के साथ मोह किस लिए रखना है। अतः मानव को माया के साथ लगाव न रख कर रब्ब अथात् परमात्मा के साथ लिव लगानी चाहिए, क्योंकि फरीद का रब्ब इतना मीठा है कि सांसारिक पदार्थ शक्कर, मिश्री, गुड़, शहद दूध आदि उसकी तुलना में फीके पड़ जाते हैं—

फरीदा सक्कर खड़ु गुड़ु माखिउ मांझा दुधु।
सभे वसतू मिठीआं रब न पुजनि तुधु ॥26।

अत: ऐसे मीठे प्रभु के प्रति प्यार पर सांसारिक जीवन के सभी स्वाद न्योछावर हो सकते हैं। शेख फरीद का कहना है कि उस प्रभु के साथ मिलाप के लिए भले ही उसे कीचड़, वर्षा आदि में से भी निकलना पड़े, उसकी कदापि उसे चिंता नहीं, क्योंकि उसका विश्वास है कि जो प्राणी उस प्रभु के चरणों में समर्पित हो जाता है उसका सारा संसार अपना हो जाता है। उस साँई अथवा प्रभु के बिना उसकी वेदना एवं दु:ख को सुनने वाला कोई नहीं है। वह सब का रक्षक है। उसके समान इस संसार में कोई दूसरा शक्तिशाली नहीं है। सम्भवतः इसीलिए शेख फरीद हमें सर्वकल्याण का संदेश देने लगते हैं और कहने लगता है कि जो तुम्हारे साथ दुर्व्यवहार करता है उसके साथ भी सदव्यवहार पूर्वक पेश आना चाहिए। मन में क्रोध कदापि नहीं रखना चाहिए, क्योकि ऐसा करने से शरीर रोगग्रस्त नहीं होता और मनुष्य सद्गुणों का धारणाकर्त्ता बन जाता है —

"फरीदा बुरे दा भला करि गुस्सा मनि न हढाइ।
देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ ॥84।

अस्तु शेख फरीद ने अल्लाह एवं प्रभु-भक्ति पर बल देते हुए यह निर्धारित किया है कि आज नहीं तो कल इस नाशवान् संसार से कूच कर जाना है—'वारि आपो अपणी जले मसाउख सेख'—तो प्रभु-भक्ति के द्वारा जीवन को संवार लेना ही उचित है। उनका विश्वास है कि जो शीश सांई के सम्मुख नहीं झुकता—'सो सिरु कपि उतारि।' प्रभु मिलन के लिए जीवात्माएँ विरहदग्ध रहती हैं। वास्तव में यह विरह की तड़प ही बाबा फरीद के लिए सब कुछ है—'बिरहा बिरहा

आखीऐ बिरहा तू सुलतानु'—और उनका कथन है कि जो शरीर विरहा की अग्नि से अछूते रहते हैं वे निष्प्राण हैं—'फरीदा जितु तनि बिरहु न उपजै, सो तनु जाणु मसानु'—यही कारण है कि शेख फरीद वह सब करने अथवा अपनाने के लिए तैयार है, जिन के द्वारा उसे प्रभु से साक्षात्कार सरल और अवश्यसम्भावी हो जाता है –

जिनी वेसी सहु मिलै, सेई वेस करेउ ।।76।।

वास्तव में कुकर्मों से बचना 'फरीदा जे तू अकलि लतीफु काले लिखु न लेख'––क्षमाभाव का पक्षधर बने रहना––'फरीदा जो तै मारनि मुकीआं तिनां ना मारे घुंमि'––सब्र अथवा सन्तोष को जीवन-यापन का मुख्य अंग समझना–– 'फरीदा जा तउ खटणा वेल तां तू रता दुनी सिउ––नम्रता--'फरीदा थीउ पवाही प्रभु'––रब्ब अथवा प्रभु का भय––'फरीदा भैनी कडी सुवंनवी टुटी नागर लजु-बोलचाल में मिठास को बनाये रखना--इकु फिका न गालाइ सभना मैं सचा धणी--आत्मसम्मान––'फरीदा बारि पराइऐ बैसणा सांई मुझे न देहि'--आदि मानवीय गुणों को धारण करने का जो संदेश एवं प्रेरणा उनकी वाणी से मिलती है, वह निःसन्देह मूल्यवान है उनकी वाणी के एक श्लोक से प्रभावित होकर पंचम गुरु अर्जुन देव जी नें जो टिप्पणी की है वह बिल्कुल उनकी वाणी की भूल चेतना--'फरीदा मनु मैदान करि टोए टिबे लाहि'--अर्थात् जीवन में प्रत्येक प्राणी को समदृष्टि पूर्वक व्यवहार बनाये रखना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से वह दोजख की अग्नि की भीषणता से सुरक्षित रह सकता है--'अगै मूलि न आवसी दोजक संदी भाहि । पंचम गुरू अर्जुन देव जी की व्याख्या गुरवाणी में इस प्रकार से उपलब्ध होती है —

फरीदा खालकु खलक महि खलक बसै रब माहि ।
मंदा किस नो आखीऐ जां तिसु बिनु कोई नाहि ।।

शेख फरीद की वाणी में व्यक्त समदृष्टि' की यह अवधारणा उसे दरवेशी जीवनयापन के लिए उत्साहित करती है दरवेश को सांसारिक दुःखों से कोई सरोकार नहीं होता । वह तो फकीरी के दुर्गम मार्ग का राही होता है । दरवेश का जीवन फरीद वाणी में उत्तम माना गया है, क्योंकि वह लोभ, मोह, स्वार्थ-परता, अहंकार आदि विकारों से सर्वथा दूर रहता है । उसके पास कुछ न होते हुए भी वह सब कुछ बाँट देता है । वह असमर्थ होते हुए भी समर्थ है, क्योंकि उसके जीवन का आधार 'प्रभुनाम' है । इसके बिना बाबा फरीद प्रत्येक प्राणी

को इस धरती पर बोझ ही समझता हैं। उनके अनुसार खुदा अथवा प्रभु के नाम के रंगे हुए प्राणी ही सुखी रहते हैं—'दिलहु मुहबति जिन सेई सचिआ।' एक सच्चा दरवेश दूसरे के अवगुणों को कदापि नहीं देखता, वह तो एक निष्ठावान साधक की तरह अपने सन्मार्ग पर सतत् चलता रहता है और साथ ही दूसरों को भी सद्मार्गगामी बनने की प्रेरणा भी देता रहता है। अन्यत्र दरवेश अथवा एक प्रभु भक्त के चार गुण बताये गये हैं। वह अपने नेत्र बन्द रखता है, ताकि दूसरों के अवगुण न देख सके, वह कानों से बहरा बना रहता है, ताकि किसी की अनुचित बात को न सुन सके, वह गूगा बना रहना पसन्द करता है, ताकि दूसरों की बुराई न कर सके तथा वह लंगड़ा बना रहना चाहता है, ताकि अपनी तुच्छ इच्छाओं अथवा तृष्णापूर्ति हेतु किसी दूसरे स्थान पर न जा सके। जिस प्राणी में यह चारों गुण पाये जाते हैं वह सच्चा दरवेश अथवा भक्त है अन्यथा वह झूठा, पाखण्डी, अहंकारी, लोभी अथवा कोई अन्य सांसारिक व्यक्ति दरवेश के भेष में होगा। शेख फरीद का मत है कि सच्चा दरवेश सदा प्रभु-भक्ति में लीन रहता है—

तेरी पनह खुदाइ तू बखशंदगी।
सेख फरीदै खेरु दीजै बंदगी ।।4।।1।। (राग आसा)

शेख फरीद के दरवेशी मन को कुरलाहट और भी तीव्र हो उठती है, जब वह देखता है कि उसने शीष पर तो मोह माया की गठड़ी उठा रखी है और इस गठड़ी को उठा कर उसके लिए दरवेशी जीवन-यापन असम्भव है। वह कह उठता है कि दरवेशी मार्ग अति कठिन है। देखने में तो यह बड़ा सरल लगता है परन्तु इस मार्ग पर कोई विरपा ही चल सकता है—

फरीदा दरवेसी गाखड़ी चोपड़ी परीति।
इकनी किनै चालीऐ दरवेसावी रीति ।।105।।

एक पाखण्डी दरवेश का चित्रण उनके की इस अवधारणा की ओर स्पष्ट कर देता है—

फरीदा काले मैडे कपड़े काला मैडा वेसु।
गुनही भरिआ मैं फिरां लोकु कहै दरवेश ।।58।।

अन्तः फरीद वाणी में निहित दरवेश के गुणों के उदाहरण से अपने बक्तव्य को समाप्त करता हूं——

दिलहु मुहबति जिन सेइ सचिआ।
जिन मनि होरु मुखि होरु सि कांढे कचिआ ।।1।। (राग आसा)



डा० निर्मल कौशिक
एम.ए. हिन्दी, संस्कृत, पंजाबी,
एम.फिल्., पी एच.डी. (हिन्दी)
आयुर्वेद रत्न, संगीत भूषण ।
सम्प्रति : प्रवक्ता, हिन्दी विभाग,
सरकारी बृजेन्द्र कालेज,
फरीदकोट-151203

सम्पादक की कलम से

(क) प्रकाशित पुस्तकें :

1. भाई गुरदास : व्यक्तित्व और कृतित्व
2. सिद्ध संस्कृत व्याकरण
3. कबित्त सवैये : भाई गुरदास (सम्पादन)
4. इन्दु इक बिन्दु दो (पंजाबी काव्यानुवाद)
5. सिद्ध जीवन गाथा
6. शब्दों की अर्चना (काव्य संकलन)
7. युग-पुरुष : बाबा शेख फरीद—सम्पादन

(ख) प्रकाशनार्थ पाण्डुलिपियां :

1. रघप्रिया (खण्ड काव्य)
2. आस्था के फूल (काव्य संकलन)
3. गुरुमुखी में रचित हिन्दी साहित्य
4. शोध विविधा (सम्पादन)
5. निर्मल सन्तों का हिन्दी साहित्य को योग्दान
(पी.एच.डी. शोध प्रबन्ध)

(ग) परियोजनाएं

1. गुरुमुखी लिपि में उपलब्ध पंजाव का हिन्दी साहित्य
2. हिन्दी साहित्येतिहास के पुनर्लेखन की सम्भावनाएं
3. हिन्दी शिक्षण : समस्याएं और समाधान